

आचार्य श्री प्रवचन

(23.04.2017 से 21.07.2017 तक)

भाग-6

गुरुवर की वाणी,
बने सबकी कल्याणी

संकलन
मुनिश्री 108 संधानसागरजी महाराज

23-4-17 "सभी बन सकते हैं अणुव्रती" प्रातः 9.20

एक पाठ मिलता है बच्चों को पढ़ने के लिए और उससे हम भी पाठ ले सकते हैं। ऐसा न समझें ये तो छोटे-छोटे बच्चों की कक्षा के पाठ्यक्रम में आया है, हमारे काम का नहीं। तीन लोक के इस विश्वविद्यालय में हम-तुम सब शामिल हैं। लेना चाहो तो ले सकते हो अन्यथा देखते रह जाओगे। हम वह पाठ आपके सामने रखना चाहते हैं।

जब सर्वत्र हिंसा को बुरा माना जा रहा है। हिंसा त्याग करने का उपदेश दिया जा रहा है कि हिंसा का त्याग आवश्यक है। सब लोगों को बात जम गयी। मुनिराज के उस उपदेश को बिल में रहने वाला सर्प भी सुन रहा था। सभी ने अपने-अपने अनुसार संकल्प ले लिया। सर्प ने भी संकल्प ले लिया। आप ये मत समझो की त्याग करने के तो मात्र हम ही अधिकारी हैं।

जो भी बुरी चीज है तो उसे किसी भी अवस्था में छोड़ा जा सकता है। अब जैसे ही संकल्प ले लिया कि हम किसी को काटेंगे नहीं, तो बच्चे लोग खेलने लगे। उनका व्यवहार गड़बड़ होने लगा। वह सर्पराज गुरुजी के पास गया और बोला गुरुदेव- जब से आपका उपदेश सुना मैंने तब से अपने संकल्प का पूर्ण रूप से पालन किया किन्तु नतीजा अलग

ही निकला। तब से संरक्षण तो दूर आरक्षण भी नहीं हो पा रहा है। आज आरक्षण का ही बोलबोला है।

अच्छे-अच्छे व्यक्तियों के आरक्षण-संरक्षण को ठिकाना नहीं है। संरक्षण और आरक्षण के अन्तर को इतिहास के माध्यम से जानना होगा। गुरुजी ने कहा- काटने का त्याग रखो- फुफकार तो दिया करो। यह मंत्र अच्छा है। महामंत्र है उस सर्प के लिए- डामोकार मंत्र का काम करेगा। इधर त्याग का संरक्षण भी होगया, व्रत भी पल गया, संकल्प अटूट रह गया, गुरुदेव के प्रति आस्था बनी रही की कोई भी समस्या हो हम गुरुदेव के पास आ सकते हैं।

सर्प में परिवर्तन आ गया। वह किसी की ओर भी देखता नहीं बस फुफकार कर देता सब ठिक-ठाक हो गया। आप लोग अणुव्रत के साथ रह रहे हो। महाव्रत अलग वस्तु है अणुव्रत अलग है। कार्यक्षेत्र के बारे में सजग रहने पर ही इस भेदाभेद को जान सकते हैं। मैं कहाँ तक पालन करूं- ये कहां तक पालन कर सकता है सबकी भूमिका अलग-अलग है।

आप जो पालन कर रहे हैं, अडोस-पडोस भी पालन करे यह कोई नियम नहीं। हाँ प्रत्येक का कार्यक्षेत्र

व्रती बनने का हो। समान ही हो ऐसा नहीं। हम व्रत का पालन कर ही नहीं सकते यह गलत सोचकर बैठा है।

सर्प भी जो विषधर है - देख भी ले तो विष चढ़ जाय, मरण हो जाय/होता है, काटने की तो बात ही नहीं। बोलने में विष फैलता है किन्तु अमृत धर रहे हैं। देखते हैं तो भी असर पड़ता है। बच्चों को अलग असर पड़ता है। अडोस-पडोस का असर अलग पड़ता है। प्रतिकूल हो तो समस्या खड़ी हो जाती है। अखबार में आ जाता है। थोड़ी भी हलचल हो जाये तो स्वीकारे यान स्वीकारे गुगल में सब आ जाता है।

एक बार किसी ने नेमावर का छायाचित्र बताया और कहा महाराज ये ऊपर से लिया गया है। हजारो किलोमीटर ऊपर से ज्यों का त्यों आ जाता है। सारे कार्य हो जाते हैं, छिपी हुयी कोई बात है ही नहीं। अहिंसा के क्षेत्र में ऐसी धारणा न बनायें। सामान्य ज्ञान में यह एक पाठ आया था, दूसरी कक्षा में आपके सामने रख दिया। इसे बालक - युवा - वृद्ध कोई भी सब अपना सकते हैं। वृद्धावस्था में भी सरकार व्यवस्था कर रही है। जाते-जाते सर्प की भांति हम भी कुछ त्याग कर सकते हैं और उसका फल मिल सकता है। बिना कहे ताली बजा रहे हैं, हमें लगता है यह पाठ आपको अच्छा लगा है।

अहिंसा परमो धर्म की जय।

२५-५-१७ "गुणस्थान का थर्मामीटर हैं कर्त्तव्य" प्रातः ९.२०

हम थोड़ा भाव वैषम्य भी क्या होता है, थोड़ा सा सोच लें - विचार कर लें। एक श्रावक है जो संयमासंयम से मण्डित है और भावों की विशुद्धि के कारण क्षायिक सम्यग्दर्शन भी प्राप्त हुआ है। इतना ही नहीं उसे तीर्थंकर प्रकृति का भी बंध प्रारम्भ हो चुका है। तीर्थंकर प्रकृति निरन्तर बन्धी है एक बार बंधना प्रारम्भ हो जाये तो बंध रुकता नहीं।

और उसी भव में उसकी मुक्ति भी होना है। ऐसे विशेष भावों से युक्त एक श्रावक है जो मुनिराज या त्यागी - तपस्वियों की चर्या के समय में अपने आंगन में खड़ा है। उसकी उपाधियाँ आपके सामने रखी जैसे आप लोग अपने नाम के आगे Bed, Med, Phd, आदि लगाते हैं, ऐसी बहुत सारी उपाधी श्रावक की हो गयी। ऐसे में एक मुनिराज उधर से निकलते हैं, उन्हें देखते ही वह श्रावक प्रफुल्लित हो गया।

वे मुनिमहाराज उनके भी भावों के बारे में, योग्यता आदि के बारे में देखें। वे क्षायोपशमिक सम्यग्दृष्टि हैं। इस भव में मुक्ति पाना निश्चित नहीं है। न ही उन्हें तीर्थंकर प्रकृति का बंध हो रहा है और न ही होना है। और एक बात संभव है वह सौधर्म - इशान स्वर्ग तक ही जावे। श्रावक

श्रावक - शुक्ल लेश्या - आहार संज्ञा नहीं
मुनिराज - पीत लेश्या - आहार संज्ञा

का गुणस्थान संयमासंयम में पाँचवा रहेगा कभी आपने ऐसा नहीं सुना होगा की ६ से ५ और पसे ६ हो रहा था। जब की मुनिराज का तो लगातार ७ से ६ एवं ६ से ७ होता ही रहता है।

सुना आपने ये भी गड़बड़ी है। मुनिराज जिस समय वे प्रविष्ट होते हैं तो उन्हें उन्नत गुणस्थान ही मिलता है, बाद में सप्तम से छठा गुणस्थान होता है। ऊपर चढ़ने के उपरान्त नीचे आना अनिवार्य है, जबकि पंचम में पूर्वकोटी वर्षतक ज्यों का त्यों बना रहता है। ऐसा चित्रण आपके सामने रखा। भावों से आह्लादित होकर वह श्रावक खड़ा हो जाता है, जैसे तो उसे मोक्ष लक्ष्मी ही प्राप्त हो गयी हो।

बहुत जल्दी में परिक्रमा करने लगता है कहीं महाराज आगे न चले जायें। बहुत आनन्द के साथ पड़गाहन हुआ। युद्धि बोलकर भीतर ले जाता है। पाद प्रक्षालन, पूजन आदि नवधा भक्ति पूर्वक आहार देता है। इसमें एक बात और कहें, उसका संयम/क्षायिक सम्यग्दर्शन है अतः गिर भी जायें तो चतुर्थ से नीचे नहीं जायेगा, किन्तु मुनिराज का ऐसा बंधन नहीं गिर जाये तो और भी नीचे जा सकते हैं। फिर भी वह श्रावक इन सबको गौण करता है। और विचार करता है ये रत्नत्रयधारी हैं, मुनिराज है, मोक्षमार्गी है मेरे पास तो मोक्षमार्ग नहीं है।

इस बात को हमेशा- हमेशा याद रखता है।

"सवस्त्र अवस्था अथवा गृहस्थ अवस्था में मोक्षमार्ग नहीं है।" अथवा क्योंकहा? वस्त्र होने पर मोक्षमार्ग नहीं बनता। मोक्षमार्ग मात्र संयम को ही स्वीकार करता है। उसे तीर्थंकर प्रकृति से भी मतलब नहीं। संयमासंयम तो है पर संयमी नहीं माना जाता है। ऐसा आचार्यों ने भावों के बारे में वैशद्यपूर्वक बताया।

संभावना तौर पर कुछ नहीं अनिवार्य तौर पर ही कहा है। इसके उपरान्त भी श्रावक को अभिमान नहीं होता, ये बहुत ही गुण ग्राह्यता कहा है। उसके ऐसे भाव होते है कि ये ही मेरे मात्र पूज्य है, ग्राह्य है इनके आगे तो तो मैं दुनिया का सब कुछ छोड़ सकता हूं। ऐसे श्रावक के बारे में ज्ञान मुनिराज को है तो भी श्रावक की परिक्रमा लगा दें- ऐसा नहीं। उपाधी तो है पर परिक्रमा नहीं लगा सकते।

मुनिराज के पास मोक्षमार्ग की सीढ़ियाँ है श्रावक के पास नहीं। इन सीढ़ीयों को दो रूप में स्वीकार करते है। मेरी तीन अंगुलिया दिख रही है, मोक्षमहल की प्रथम सीढ़ी .....। हमारे यहाँ तीन अंगुलियाँ ऐसे नहीं - युं है। एक साथ है। इसलिए श्रावको को/अन्य वस्त्रधारियों को सोचना चाहिए। "श्रामण्य च अपरनाम मोक्षमार्गः" श्रामण्य कहो या मोक्षमार्ग

कहो दोनों एक ही हैं।

ऐसा आचार्य अमृतचन्द्र सूरि ने प्रवचनसार में कहा। मैं यह कहना चाहता हूँ श्रावक हो या साधु। कौनसे थर्मामीटर से जानें। कोई थर्मामीटर नहीं। "कर्त्तव्य ही हमारे गुणस्थान का निर्धारण करता है।" द्वादशांगी का पाठी होकर भी कर्त्तव्य में कमी रह गयी तो नीचे आसकता है अथवा मिथ्यात्व गुणस्थान तक भी आ जाता है और जिसके पास अक्षरज्ञान भी नहीं किन्तु रत्नत्रय का पालन कर रहा है। रत्नत्रय के कारण मोक्षमार्ग माना जाता है। बाकी तो असंख्यात व्रती जो सम्यग्दृष्टि भी है। क्षायिक सम्यग्दृष्टि भी असंख्यात, उनमें भी तीर्थंकर प्रकृति बंध वाले भी असंख्यात उम्मीदवार हो सकते हैं आज।

ऐसे उम्मीदवार सोचिए, नरकों में भी और प्रथम से सोलवें स्वर्ग तक भी असंख्यात क्षायिक सम्यग्दृष्टि भी साथ लगे हुए हैं फिर भी टिकाना है ही नहीं। पंगत लम्बी-चौड़ी है। न जाने अपना नम्बर कब आयेगा। मोक्षमार्ग का यह प्ररूपण / वैशिष्ट्य अभिमान को चूर-चूर करने वाला है। महान पुण्य के कारण मिला है इसे सुरक्षित रखना है। "कर्त्तव्य ही मात्र स्थायी गुणस्थान है।" करने योग्य दिखो - नहीं करने योग्य नहीं दिखो। हमारा प्रवचन आजकल छोरा ही होता है। भोजन तो उतना ही दिया जाता है, जितना पच जाये। ज्यादा क्यों? भगवान से प्रार्थना करते हैं कि पाचनशक्ति बढ़ जाये।

अहिंसा परमो धर्मकी जय

25-4-17 "थारी-म्हारी से बचो" प्रातः 9.20

आपने सुना होगा जब कभी भी किसी को बिच्छु डंक मार देता है फिर निद्रा भी आ रही हो, निद्रा को वह चाहता भी हो और शयन कक्ष बहुत व्यवस्थित भी हो तो भी निद्रा नहीं आयेगी और वह दूसरे को निद्रा भी नहीं लेने देगा। तो क्या करे? जब तक विष का प्रभाव जो चढता जा रहा है वह उतरेगा नहीं तब तक बैठ नहीं सकता - खड़ा नहीं रह सकता और तो और णमोकार मंत्र सुनाओ भी हो तो भी उसका प्रतिकार नहीं कर पाता है।

ये विषाक्तता का परिणाम है, बिच्छु के डंक का परिणाम है। एक और उदाहरण है किसी को सर्प काट ले तो वह सो जाता है। सर्प का विष उतारने वाला भी कहता है कि इसे सोने नहीं देना। प्रतिकूल वातावरण जमीन आदि पथरीली भी हो तो भी वह सो जाता है। कि उससे विपरीत है सो जायेगा तो प्राण भी निकल सकते हैं, निकले यह नियम नहीं। सो जाने के उपरान्त दवाई आदि का प्रभाव नहीं पड़ेगा।

इस तरह सर्प के द्वारा काटने पर सो जाने का परिणाम और बिच्छु के काटने पर उछलकूद करने का परिणाम बताया। इन दोनों का परिणाम क्या है। तो देवगति में तो व्यक्ति सो जाता है और

क्रोध के साथ नरक में जन्म होता है तो बिच्छु की तरह उछलकूद करता है।

न स्वयं सोता है न सोने देता है। क्रोध आदि के द्वारा आग बबुला रहने से वहां का वातावरण बना रहता है। आप ही बताओ इससे कैसे बचोगे। क्रोध तो स्वस्फूर्त होता ही रहता है। जीवन के आदि से अन्त तक कहीं भी विराम नहीं। वह चाहे कि बहुत थक गया थोड़ा विश्राम दे दो। अन्य नारकी कहते हैं- यहां आये क्यों? विश्राम की आदत पड़ी है वह यहाँ नहीं मिलेगा।

बाल्कि और थारी-म्हारी-ऽ में लगा रहता है। थारी-म्हारी का मतलब जानते हो? मारवाड़ी लोग यहाँ बैठे है या नहीं। बैठे हैं। थारी-म्हारी मतलब तेरा-मेरा। अब बताओ देव गति में ऐसा और इसमें ऐसा। देवगति में और कुछ नहीं ऐसा पुण्य मिला जिसके द्वारा पंचेन्द्रिय विषयों का ही बाहुल्य प्राप्त हुआ। अज्ञान दशा में वह जीवन पर्यन्त तक कभी तत्त्वज्ञान के बारे में सोचेगा ही नहीं।

समोशरण भी गया तो अन्य देव जा रहे हैं इसलिए वहां भी बीच में ही अटक गया हम तो इसी में व्यस्त है। ये राग का प्रभाव है। क्योंकी स्वर्ग में लोभ से ही जीवन की यात्रा प्रारम्भ होती है। इसका परिणाम पंचेन्द्रिय विषयों में ही जीवन के आदि

से अन्त तक डूबा रहता है।

बहुत बड़ी बिमारी है। कुछ परिवर्तन तो करो। (देवगति में) परिवर्तन चाहते हैं तो यहाँ क्यों आये। वहीं स्टेशन पर देख लेते - कौन गाड़ी कहाँ जाती है? यहाँ नगर आ चुका है, उतर भी चुके हैं। अब कुछ नहीं आदि से अन्त तक भोगना ही पड़ेगा। ये भोग आपको घुमा देते हैं। जिधर जाना है उधर नहीं जाने देते, जिधर नहीं जाना उधर ले जाते हैं।

ऐसे ही परिवार के सम्बंधी रागांध-मदांध बना देते हैं। विषयों में ही डूबो देते हैं। सोचने पर ज्ञात होता है सागरोपम की आयु तक विषयों में। रागांध होकर सोता रहेगा तो तत्त्वज्ञान क्या काम आयेगा, ऐसा तत्त्व ज्ञान क्या काम का? सम्यग्दर्शन छूट गया- बह गया ऐसा भी आता है। यहाँ रत्नत्रय का पालन कर पूर्ण आयु होने पर मरण समय मिथ्यात्वी हो नवेंग्रैवेयक में उत्पन्न हुआ।

जीवन के अन्त तक अर्थात इक्कीस सागरोपम तक रहा अन्त में सम्यग्दर्शन प्राप्त करके आ गया। इतने दीर्घ समय तक सम्यग्दर्शन के अभाव में रहा। इस सब तत्त्वज्ञान को जब चिंतन का विषय बनाते हैं तो ऐसा लगता है कि एक-एक क्षण मूल्यवान है। हमें पुरुषार्थ पूर्वक उन

दरवाजों को बंद कर देना चाहिए; जहाँ हम नहीं जाना चाहते हैं।

यदि बंद नहीं करेंगे तो हवा हमें वहाँ भेजा जायेगा। क्रोध-मान-माया-लोभ ऐसे ही दरवाजे हैं। तत्वज्ञान जब हम गुरुओं के मुख से सुनते हैं तो मनुष्य जीवन में पुरुषार्थ-पूर्वक हम अपने में सुधार ला सकते हैं। नरकायु या देवायु में बुद्ध नहीं। सुन रहे हो ? सोते हुये या जाग्रत अवस्था में ? क्षणिक ही सही यह ज्ञान हमें मिलता है, चिंतन के अनुसार संगती कर सकते हैं।

भोगोपभोग का पुरा त्याग नहीं कर सकते तो सात्विक काम तो कर ही सकते हैं और रास्ता प्रशस्त कर सकते हैं। सर्प का डंक क्या होता है और बिच्छु का डंक क्या होता है तो विषय पुरा-पुरा जल्दी याद आ जायेगा। उदाहरणों से विषय स्पष्ट हो जाता है, जहाँ कहीं भी याद कर सकते हैं। यह विषय सामग्री संभाल कर रखना - फुर्सत मिले तो संभालते रहना।

अहिंसा परमो धर्म की जय। नँ

Note - ० आंख को बंधन - पैर को मर्दन एवं पेट को लंघन से ठिक कर सकते हैं।

० इन चीजों में जल्दी नहीं होती न (आंख में दर्द होने पर)

25-5-17 "गरमी में डण्डा रखता-पदस्थ ध्यान" प्रातः 11.40

पदस्थ ध्यान को सभी आचार्यों ने स्वीकार किया है भले ही उसका रूप भिन्न हो सकता है। समयसार में आचार्य कुन्दकुन्द ने पडिसरणं..... धारणा-ध्यान के रूप में बताया। मूलाचार में वट्टकेरस्वामी ने पंचपरमेष्ठी की आराधना को स्वाध्याय कहा। इसी तरह आचार्य वीरसेन महाराज ने तो इसी के माध्यम से असंख्यात गुणी निर्जरा होना कहा।

धवला जी में चार प्रकार बताये - जाप-पाठ-ज्ञान और ध्यान। इन चारों के माध्यम से णमोकार मंत्र को श्वांस-श्वांस पर बसा सकते है। गर्मी तेज भी पड़े - दिन बड़े भी हो घण्टो कब बीत गये पता ही नहीं। स्यात्मुक णमोकार मंत्र का पाठ कर सकते है एक माला जो सामान्य से 10 से 12 मिनिट में होती है 30 मिनिट भी लग सकता है। नैनागिर में ऐसे 25-30 माला हो जाती थी।

निद्रा विजयी होने एवं सामायिक में एकाग्रता आती है इससे। एकाग्र होना जरूरी है - हमें 108 बार ही चाहिए ज्यादा नहीं। इसी के माध्यम से शुद्धोपयोग की भूमिका बन सकती है। शुद्धोपयोग का कारण कहा। चिंतन-मनन-लेखन में माथा गरम हो सकता है किंतु

पदस्थ ध्यान में गरम माथा ठंडा हो जाता है।
जैनेतरों में भी पदस्थ ध्यान का बहुत महत्व बताया। सीयाराम - राम-राम.... सम्पूर्ण रात्रि चलता है फिर भी थकते नहीं अपितु उस पद पर ही ध्यान रखते हैं। हमारे यहाँ णमोकार मंत्र अथवा अन्य बिजाक्षर मंत्र है जैसे - णमो जिणाणं" णमो ओहिजिणाणं, णमो कोट्ठबुद्धिणं आदि।
संलेखना के समय इस अभ्यास का फल काम करता है।

26-4-17 "भयभीत नहीं - निर्भिक बनें" प्रात: 9२०

अपने यहाँ सात प्रकार के भय बताये गये हैं, मृत्यु भय मुख्य है। इहलोक भय अपने आप में अलग ही है, अत्राण भय - वेदना भय आदि। इन सात प्रकार के भयों में सम्यग्दर्शन रहता हुआ भी ये भय उसके सम्यग्दर्शन को दुषित करते रहते हैं और विशेष सफलता में बाधक सिद्ध होते हैं।

राम भटक रहे हैं सीता के लिए। सीता का हरण करके रावण बैठा है और रक्षा के लिए विद्या सिद्ध भी कर रहा है/कर लेता है। विद्या ऐसे सिद्ध नहीं एकाग्रता के साथ सिद्ध होती है। राम आये या कोई भी बाधक उस मंत्र की सिद्धि में नहीं आना चाहिए। सम्यग्दृष्टि है या नहीं। मंत्र सिद्ध हो जाता है। सम्यग्दर्शन अलग वस्तु है और भय अलग वस्तु है। एक व्यक्ति

जो मिथ्यात्व के साथ है किन्तु निर्भिक है जब की दूसरा सम्यग्दर्शन के साथ सभय हो सकता है। परन्तु विशेष शक्ति प्राप्त करना चाहता है तो भय अवश्य ही बाधक होगा।

चक्रवर्ती ने बाहुबली के ऊपर चक्र चलाया। किस कारण से चलाया? सात भय में से कौनसा भय था। लोग तो यही कहेंगे छोटे भाई के द्वारा बड़ा भाई हार गया। इसको सहन करना बहुत कठीन है। क्षायिक सम्यक्दर्शन का मतलब क्या? सम्यग्दर्शन तो फिर भी सरल किन्तु निर्भिक होकर सम्यग्दर्शन को पकड़कर रखना बहुत टेढ़ा काम है।

ये क्या हो गया। बीच में ऐसी दहशत हो जाये तो सम्यक्दर्शन भी काम करना बंद कर देता है। वह आवरण अलग यह मल अलग है। "मद "धारै तोये ही दोष वसु, समकित को मल ठानै" सम्यग्दर्शन में मल पैदा करने वाला होता है यानि कमी आ जाती है। इस प्रकार इन उदाहरणों से आगम के आधार पर कह सकते है निशंक सम्यग्दर्शन और सशंक सम्यग्दर्शन दोनों अलग-अलग है जिनका विस्तार से वर्णन मिलता है।

इसलिए जिस किसी भी विषय में पूर्ण योग्यता प्राप्त करना चाहते है तो विशेषता जरूरी है, काम चलाऊ नहीं। भारत की

वर्तमान शिक्षा-प्रणाली कामचलाऊ ही है। मूल्य घटता हुआ जा रहा है।

वस्तु का अवमूल्यन भी होता है, विकास भी होता है। यहाँ पर भय के द्वारा मूल्य अवमूल्यन की ओर किस प्रकार जाता है इसे देखना है। जो इन सात प्रकार के भयों को अपनाता है - डरता है वह आगे नहीं बढ़ सकता है। आगम में बताया गया है उपसर्ग आदि होते हैं, भय के कारण हार जाते हैं। भय चारित्र मोहनीय की प्रकृति है, दर्शन मोहनीय की नहीं।

भय के अभाव में सम्यग्दर्शन का एक अंग विशिष्ट होता है - यह विचारणीय है। आपसे कोई पूछे क्यों श्रद्धान पुरा हो गया - हव। श्रद्धान एक मिट्टी के घड़े की भांति है। घड़ा तैयार हो गया तपाया नहीं। खोट-खाट निकालकर अच्छा आकार दे दिया पर एक-आध वर्षा छोटी सी भी हो जाती है वह बह जाता है। इसी प्रकार यदि भय विद्यमान है तो मिट्टी की भांति पिघलकर बह जाता है।

सम्यग्दर्शन तभी जब मिथ्यात्व का अनुदय होता है। अनुदय होते हुए भी भय को देखते हैं तब ज्ञात होता है व्यवहार सम्यग्दर्शन क्या है और निश्चय सम्यग्दर्शन क्या है। आचार्यों का कहना है कि जब निश्चय सम्यग्दर्शन की भूमिका में पहुँच जाते हैं तो भय कोई काम

नहीं करेगा। इसलिये यह गुणस्थान परख वर्णन जैनाचार्यों का वैज्ञानिक तथ्यपूर्ण है।

जितना पुरुषार्थ करे उतना वह भय से दूर होता जाता है। ऐसे भय से प्रभावित न होकर के निर्भिकता का सदैव पुरुषार्थ करना चाहिए। "जितनी बार सम्यग्दर्शन को प्रयोगशाला में लेकर जायेंगे उतना ही वह सशक्त होकर सामने आयेगा।" जिस घड़े को अवा में पका लिया, वह अब पीघलेगा नहीं और न ही डूबेगा।

स्वयं भी तैरेगा, दूसरे को भी तिरा देगा। एक घड़ा भी पचासों व्यक्तियों को बचा सकता है। सबको बांधकर घड़े के गले में बांध दो, सब पार हो जायेंगे। इसके अलावा यदि तैरने वाले भी है तो डूब सकते हैं क्यों कि धारा तेज है। इस प्रकार भय के कारण हम अपने को कम्पायमान करते रहते है। क्या पता - क्या पता - क्या पता। ये सब क्या है। विज्ञान ने भी कहा है, ये बात फालतु में ही हमारे दिमाग मे घुस जाती है।

हम सशंक होने के कारण प्रत्येक कार्य में फैल होते चले जाते हैं। मोक्षमार्ग में भी इसे रखा है। पच्चीस दोषों में स्मय - भय आते है इन्हें हमारे लिए घातक मानकर चलना चाहिए। मात्र दर्शन मोहनीय की प्रकृति ही सम्यग्दर्शन को समल

बनाती है - यह धारणा गलत है। इसलिए आचार्य कुन्दकुन्द ने निर्जरा अधिकार में निश्चय सम्यग्दर्शन को प्रस्थापित करते हुए कहा है - "सम्मादिट्ठी जीवा णिस्संका होंति णिब्भयातेण,
सत्तभयविप्पमुक्का जह्मा तह्मा दु णिस्संका" (२२४)
ऐसा वह सम्यग्दृष्टि या तो केवलज्ञान को प्राप्त कर लेता है अथवा नीचे आना पड़ता है। ऊपर से नीचे और नीचे से ऊपर ऐसा मोक्ष मार्ग में कई बार होता है। इसलिये पहले से ही सतर्क रहो - बहुत सारे Attempt होते हैं। एक ही Attempt में हो जाये ऐसा नहीं होता। आज तक का Record है। एक ही Attempt में मुक्ति हुयी हो - आज तक का रिकॉर्ड है। जब वे नहीं कर पाये तो हम कौन होते हैं?

बस जो रास्ता बताया है उस रास्ते पर चलते जायें। संक्षेप में यही कहना चाहता हूँ सम्यग्दर्शन अलग है और निर्भिकता अलग है। मिथ्यात्व के साथ भी निर्भिक हो सकता है, विद्या आदि की सिद्धि कर सकता है। विद्या को प्राप्त नहीं करे तो मिथ्यादृष्टि और विद्या प्राप्त कर ले तो सम्यग्दृष्टि ऐसा नहीं कहा जा सकता। राम और रावण का उदाहरण आपके सामने रखा।

इतना ही पर्याप्त है। आज के विषय में सम्यग्दर्शन को पावरफुल बनाने के लिए, भय को दूर करने के लिए बात कही। दर्शन मोहनीय

तो निकल गया सम्यग्दर्शन निर्मल हो गया हो, ऐसा नहीं भय रह सकता है। क्षायिक सम्यग्दृष्टि के पास भी ऐसा हो सकता है। आज यह विषय नहीं फिर कभी, दूसरा।

भय के उदय में उपयोग चंचलता को प्राप्त होता है। उसे दूर करने के लिए हमारे पुरुषार्थ की आवश्यकता है, ये चारित्र मोहनीय का उदय है उनकी ये बड़ी भूल है।

अहिंसा परमो धर्म की जय हो

27-4-17 "पुरुषार्थ से रहित मोक्षमार्ग नहीं" प्रात: 9.20

कल का विषय जो आपके सामने रखा था उसके द्रव्य-क्षेत्र-काल और भाव के अनुसार बहुत सारे विकल्प हो सकते हैं-होते हैं। आगम के अनुसार हम यह कह सकते हैं क्रोध-मान-माया लोभ चार कषाय हैं फिर इनके भी अनन्तानुबन्धी-अप्रत्याख्यान-प्रत्याख्यान और संज्वलन चारों के चार-चार भेद हो जाते हैं। ये सब आगे-आगे फिके होते चले जाते हैं। किन्तु भय नो कषाय में आता है।

भय मूल कषाय नहीं है। नो कषाय का मतलब जो कषाय के साथ रहे, उसकी उपस्थिति में काम करे। आप चहरे पर मुस्कान लेना चाहते हैं तो भीतर कोई न कोई कषाय जरूर बैठी है। हमारे भगवान के पास जाओ-मुस्कान लेते हैं क्या? नहीं क्यों की कोई भी कषाय वहाँ है ही नहीं।

फिर अन्य लोग हमसे मुस्कान की मांग क्यों करते हो? इसी प्रकार भय तभी जब भीतर कोई न कोई कषाय होती है। इसी तरह अन्य ग्लानि, रति अरति आदि नोकषाय जो बाहर में दिखती है किन्तु मूल कारण कषाय है।

इसलिए भरत चक्रवर्ती के पास दर्शनमोहनीय का क्षय (क्षायिक सम्यग्दर्शन) हो गया फिर भी भय कैसे? अनन्तानुबन्धी जन्य भय समाप्त हो गया लेकिन अभी अप्रत्याख्यान - प्रत्याख्यान और संज्वलन जन्य भय तो विद्यमान है। भाई से हर गया पता है बाहुबली मानेगा नहीं, अप्रत्याख्यान-प्रत्याख्यान और संज्वलन है इनके साथ भय भी उपस्थित हो जाता है।

भीतर से डर भी रहा है - लोग क्या कहेंगे? किन्तु कषाय के कारण उसमें प्रवाहित हो जाता है। इस प्रकार यह भय इन चौकड़ी के साथ रहता है। मुनिराज छट्ठे गुणस्थान में है - उन्हें यही भय कि मेरे द्वारा कोई भी अप्रभावना न हो जाये। प्रमाद के कारण कोई भी मुख से ऐसे वचन न निकल जाये जिससे किसी को कष्ट हो अतः वे सदैव हित-मित - प्रिय वचनों का प्रयोग करते हैं।

भरत चक्रवर्ती के पास अभी अप्रत्याख्यान - प्रत्याख्यान संज्वलन इन तीनों संबंधित भय विद्यमान है। कुती बनेगा तो

अप्रत्याख्यान जन्य नहीं फिर प्रत्याख्यान- संज्वलन जन्य भय रहेगा इतना अन्तर आजायेगा।

मुनिराज बन जायेगा तो प्रत्याख्यान भी चली जायेगी, बाद में अप्रमत हो तो भय की चेष्टा ही नहीं होती। वह अप्रमत अवस्था ग्यारवें - बारवें - तेरवें - चौदवें तक चलती है। सिद्धों को हम अप्रमत अवस्था नहीं कहेंगे। मुनिराज को ही अप्रमत्त अवस्था होती है। छठे में प्रमत्त शेष सारे अप्रमत्त रहते हैं। अप्रमत्त अवस्था में उपसर्ग आदि नहीं हो तो भी उपयोग में प्रविष्ट नहीं होंगे।

उदय में होते हुये भी वे उससे प्रभावित नहीं होंगे। जैसे - छोटा लड़का है - गोद में उछलकर पीछे की ओर चला गया। खेलने लगा - किसके साथ? वह सर्प के साथ खेलने लगा। उसके पास भय प्रकृति होते हुये भी भयभीत नहीं है क्यों की माँ से ऐसा प्रशिक्षण प्राप्त नहीं किया अतः डरता नहीं। खेलते - खेलते माँ के सामने आ गया। देखते ही प्रशिक्षण देने वाली माँ डर गयी। भय की उदीरणा हो गयी।

कषाय के साथ ही भय की उदीरणा होती है। सम्यग्दर्शन होने के उपरान्त भी यदि इधर-उधर की बातों में लगा है तो वह डर जाता है नहीं तो बैठा है। हट लिया तो भय की उदीरणा नहीं।

अंजन चोर डरा नहीं आकाश गामनी विद्या सिद्ध करली और सेठ जी डर रहे हैं - ऊपर - नीचे हो रहे हैं तो विद्या की प्राप्ति नहीं कर पाये।

श्रद्धान के बिना भी विद्या सिद्ध की जा सकती है। पुरुषार्थ की क्या भूमिका है इससे अच्छे से समझ सकते हैं। जैसे - कुछ लोगों का ऐसा मानना है जब विद्या सिद्ध होना होगा तब हो जायेगी, ऐसा नहीं है। जब मोक्ष होना होगा तब हो जायेगा सब गड़बड़ हो जायेगा उसके योग्य कार्य भी करना होता है। चुनाव में खड़ा होगे तभी आगे बढ़ोगे हारना होगा तो हार जायेंगे। हारना भी तभी जब चुनाव में खड़े होंगे। परीक्षा में बैठेंगा तभी तो फेल होगा जो बैठा ही नहीं उसके फेल की क्या बात है वह तो पहले से ही डर गया है।

सम्यग्दर्शन होना होगा तब हो जायेगा ऐसी धारणा में तो होने पर भी हाथ से निकल जायेगा। असंख्यात बार ऐसा हो गया। "पुरुषार्थ की भूमिका सर्वत्र मान्य है।" मोक्षमार्ग में भी। शरीर नश्वर है आत्मा तो अजर-अमर है बस एक ही बार में विद्या प्राप्त कर ली। और सम्यग्दर्शन शाश्वत है किन्तु डर सकता है - डरता है। एक भूमिका में आने के उपरान्त वह डर समाप्त हो

जाता है। ढान लेता है वह भी सुकुमाल बन जाता है। वे सुकुमाल जिन्हें सरसों का दाना भी चुभता था, सूर्य की किरणों से आँखो में पानी आ जाता था, कमल पत्तों के चावल भी अच्छे नहीं लगते थे। इतने कोमल मोक्षमार्ग में कैसे चलेंगे।

देखते रहीये। एक सप्ताह मात्र आयु शेष है। ढान लिया कुछ करना है, पुरुषार्थ करना है। लड़खड़ा रहे हैं पैर मात्र थोड़े से चलके आये हैं। अब सियालनी अपने बच्चों के साथ तीखे दांतो से खा रही है नीचे से खाते-खाते पेट तक आ गयी। कुछ पता नहीं पता लगा भी हो तो अपने में लीन। आँतो को भी काट लिया तो जीवन समाप्त गया। वही सुकुमाल है जो अण्डर ग्राउण्ड (Under ground) में रखे गये, वही सियालनी अपने बच्चों के साथ खा रही है। ऐसा ही होना था (व्यंग्य)।

यहाँ होने की नहीं करने की बात है "पुरुषार्थ से रहित मोक्षमार्ग नहीं।" हलताहिता अलग बात है। पुरुषार्थ के द्वारा सातों प्रकार के भय चारों कषाय सबको समाप्त कर सकते हैं। भय प्रकृति चारित्र मोहनीय की है। दर्शन मोहनीय के समाप्त होने पर भी तीनो कषाय (अप्रत्याख्यान प्रत्याख्यान और संज्वलन) के परिवर्तन से क्या हो रहा है? पुरुषार्थ से आगमिक बनाकर आपको दिया। दृष्टि यदि

बाहर चली जाती है सम्यग्दर्शन होते हुए भी नोकर्मों से प्रभावित हो जाते हैं और यदि दृष्टि बाहर नहीं जाती तो सर्प, सिंह आदि आकर चले भी जायेगा पता नहीं चलेगा।

पूर्व जीवन का यदि गठबंधन है - बैर है तो ही आपको नुकसान पहुँचा सकता है। हमें न वैर की दृष्टि रखना है न स्नेह की दृष्टि रखना है। कल नहीं परसों कहा था - "कर्तव्य ही मात्र हमारा स्थायी गुणस्थान है।" दुनिया बदल जाये गुणस्थान नहीं बदल सकता। कर्तव्य जो है मोक्षमार्ग में वही रहेगा।

दुनिया आये या जाये कोई बाधा नहीं। कर्तव्य के बिना सम्यग्दर्शन नहीं होगा, ऐसी गाढ़ निष्ठा का होना जरूरी है। कर्तव्य से ही आगे भय का उदय नहीं। भय से काँपेगा भी नहीं। सर्प से कंप सकता है। सर्प लगे अंगुष्ठ अन्दर मुट्ठी बांधकर तर्जनी से दबा दो पसीना आ जायेगा। हीटर की क्यों अपेक्षा कर रहे हो। ऊपर से नहीं दबाओगे तो भी मात्र धारणा से भी कम होता चला जाता है।

ये आन्तरिक पुरुषार्थ की भूमिका है। सम्यग्दर्शन के बल पर काम होते चले जाते हैं। एक और है - सैद्धान्तिक पक्ष है - ये

कहा जाता है सम्यग्दर्शन है किन्तु अन्य प्रकृतियों के द्वारा भी उपयोग स्थिर, लेश्या आदि के कारण भी अवस्थित-अनवस्थित या वर्धमान-हीयमान होना उसका परिणाम है।

रसीतरह सम्यग्दर्शन क्षायिक होते हुए भी पूर्ण नहीं। जैसे हवा से तरंगायित जल होता है वैसे ही कर्म रूपी तरंग से ऐसा होता है। उसे स्थिर करने का पुरा पुरुषार्थ किया जाता है। नाव को उस पार नहीं ले जा सकते। ढान लो तो क्या संभव नहीं। ऐसे कर्म का चिंतन द्रव्य-क्षेत्र-काल-भाव आदि के अनुसार कर स्वतंत्र हो सकते हैं।

कर्म कर्म है कर्ता नहीं। कर्ता जन्म देने वाला है। जिसको जन्म दिया उसके वशीभूत नहीं, जिसे जन्म दिया उसे वशीभूत करें। यह पश्चिम की धारा है - पूर्वी धारा तो वह है जो कर्म को बहाकर नाव को भी पार लगा दे।

अहिंसा परमो धर्म की जय ॐ

हटकर -

0 महुआ में आ० श्री की दोनों आंखे आ गयी। रविवार का दिन - लोग वाणी पुनने आये। आ० श्री ने दोनों आँखे बंदकर प्रवचन दिये।

अक्षयतृतीया-

28-4-17 "ज्ञानामृत रस में इक्षु रस का योगदान" प्रातः 9.20

युग के इस छोर पर बैठने वाले हम हैं और उस छोर पर घटना घट रही है। हम इस छोर पर बैठकर उसे स्मरण में ला रहे हैं। कई लोगों की ये धारणा है आत्मा के बारे में, भावों के साथ दिखता भी ऐसा ही है - आत्मा से क्या लेन-देन? आज तक विज्ञान ने खूब छाना किन्तु एक भी प्राण देखने को नहीं मिले।

ये प्राण कहां रहते हैं? रहते भी हैं या नहीं। प्रत्येक व्यक्ति की धारणा करने की, चिंतन करने की आस्था की, परख करने की पद्धति होती है फिर भी वे लोग नकार नहीं सकते। उनको भी सुनना पड़ता है। अपने विज्ञान को इसके साथ कसते हैं तो विज्ञान अधुरा सा लगता है। वे जानते हैं कि कहीं न कहीं हमारी कमी रह गयी है।

अभी आप सभी भजन कर रहे थे उसमें एक पद बोला - "अखण्ड अक्षय पदोपाय" अखण्ड भी है अक्षय भी है। काल का स्वातित्व इस बात को बाध्य करता है - करता था और करेगा। इन तीनों में उस द्रव्य का प्रवास हो रहा है। इसी से वह द्रव्य सनातन सिद्ध होता है। तो आज कोटेन ने यह बता दिया कि ध्यान के लिए आत्मा के सिवाय और भी सामग्री है वह भी अनिवार्य है। जैसे इस सिद्धान्त को जानने-मानने वाले, अपनी प्रतिभा से प्रयोग करने वाले युग

के आदि में करते हैं। आपका ज्ञान तो परोक्ष होता है, कथंचित् इन्द्र का ज्ञान प्रत्यक्ष ज्ञान होता है।

इन्द्र ने अवधिज्ञान से जाना कि इक्षु रस आहार के रूप में दिया जाए। अब इक्षु रस आहार के रूप में दिया जायेगा तो वह इक्षु अर्थात गन्ने का रस है। ध्यान कैसे लगेगा - क्या ध्यान लगेगा? एक वर्ष तो उपवास हो गया। इस पानी से क्या होने वाला है। जो जिस रूप में रहता है वह उसी रूप में रहने वाला है, वो प्राण के रूप में परिवर्तन नहीं तो ध्यान नहीं।

उनके पास प्राण है - आहार में ही ऐसा नहीं। भोजन के पहले भी श्वांस ले रहे हैं और बाद में भी श्वांस ले रहे हैं दोनों का चिंतन करके देखो पहले गला सूख रहा था एक वर्ष तक कुछ भी नहीं डाला उन्होंने। संक्षेप में कहना चाहूंगा विज्ञान तो विज्ञान है एक-एक चीज बारीकी से देखता है फिर भी अधूरा रह जायेगा। बाहर से तो सही भीतर से कैसे काम करता है? आज वही दिन है।

केवलज्ञान होने के पूर्व आज प्रथम आहार युग के आदि में आदिनाथ भगवान ने लिया। जो रात-दिन सोनामृत का रस चखने वाले उनको इक्षु रस से क्या मतलब। इक्षु रस कहता है - सोनामृत भी तभी सक्रीय होगा जब ऊपर से इक्षुरस पहुँचता है।

बहुत चिंतन के उपरान्त भी इसका तालमेल बहुत ही कठनाई से स्वीकारने में आता है।

एक ही अवधारणा से वैशम्य दिखता है। "जो जहाँ पर है उसका क्या योगदान है इस अध्ययन का नाम ही विज्ञान है।" युग के आदि में आदिनाथ भगवान ने इसे स्वीकारा। ६ महिने का तो संकल्प ले लिया फिर ६ महिने पश्चात आहार पे उठे किन्तु आगमानुसार मिला नहीं। एक वर्ष बाद आहार हुआ। मध्यान्ह में समय मिला तो देरव लेते हैं। रूपरेखा के विषय में थोड़ा सा ध्यान आ जाये इसलिए कहा।

कुछ की अवधारणा ऐसी है, ये तो वनस्पति है। वनस्पति विज्ञान के अनुसार जीव है, उसका रस इनके लिए कैसे योग्य हो सकता है। हम कुछ ना चाहते हैं प्रत्येक क्षण श्वांस ले रहे हैं एवं छोड़ रहे हैं। पेट फूल रहा है श्वांस के माध्यम से अब बताओ वह जीव है या नहीं। प्रत्येक क्षण में किया जा रहा है। यह भी जीव विज्ञान है। इस प्रक्रिया के बिना भी ध्यान लगने वाला नहीं।

इतना ही पर्याप्त है। आप लोग ध्याता तो बनना चाहते हैं थोड़ा वायुकायिक के बारे में भी सोचना चाहिए। वे भी सोचते होंगे हम अहोभाग्य है जो हमारी वजह से उनका ध्यान लग रहा है।

अहिंसा परमो धर्म की जय। नूँ

99-5-17 "संगत दिखाये रंगत" प्रातः 9.20

एक जीव का दूसरे जीव के ऊपर किस प्रकार दुष्प्रभाव और किस प्रकार सद्भाव पड़ सकता है और पड़ता है, इसके बारे में हमें हमेशा-हमेशा जागृत रहना चाहिए। हम अपने को हमेशा अच्छे काल अच्छी वस्तु अच्छे क्षेत्र में स्थित कर सकते हैं। उदाहरण से समझ सकते हैं।

जो कोई भी तीर्थंकर की माँ सोचती है - आत्मा की बात करती है। आत्मा की बात पहले नहीं करती थी, अब क्यों करने लगी। वो भी गहराई के साथ। उसके ऊपर पुनः प्रश्न-प्रतिप्रश्न करना। कोई प्रतिप्रश्न करता है तो समाधान देना। यह खुबी। इस प्रकार का स्वभाव सिद्धार्थ से है। यह प्रश्न पूछा गया तो उत्तर दिया गया जो अभी गर्भ में शिशु आया है, अभी होनहार है हुआ नहीं है, जो तीन लोक को उपदिष्ट करने वाला है उसका ये प्रभाव है।

माता-पिता हो या परिवार के अन्य कोई भी पूरा परिवेश अध्यात्ममय हो जाता है। अभी तो जन्म भी नहीं हुआ, गर्भ में है। बोल भी नहीं रहा है, विशेष विचार भी नहीं कर रहा है। इस तक तो ठीक किन्तु यहाँ तो प्रभाव सब पर देखने को आ रहा है। [ऐसा हो नहीं - नित्य समझाना होता है] तो निरन्तर सोलहकारण भावना की प्रकृति चल रही है। पहले जो

कुछ भी किया उसका भी प्रभाव रहता है।

माँ के भीतर धार्मिक वृत्ति उभरी इसका विशेष कारण गर्भस्थ शिशु ही है। इस प्रकार तीर्थंकर प्रकृति तीनों लोकों में क्षोभ उत्पन्न करने वाली है। क्षोभ का अर्थ यहाँ दुख से नहीं लेना क्षोभ का मतलब सबका ध्यान प्रभावित करने वाली है। घटना घट जाती है सबका ध्यान उसी ओर जाता है। उसी काल में विशेष प्रभाव पड़ता है। यहाँ भी पड़ता है और देव लोक में भी विशेष पड़ता है।

देव लोग जो इतने व्यस्त रहते हैं, भोगों में मस्त रहते हैं वे भी उस काल में आकर्षित होते हैं। पंचकल्याणक महोत्सव आदि में मनुष्य बाद में पहले उनकी उपस्थिति होती है। देवों का विक्रिया से भी काम होता है। बारात आ जाती है, उन्हीं की संख्या अधिक परिवार वाले कहाँ व्यस्त हैं, पता नहीं। इसीलिए देवों की संख्या ज्यादा मनुष्यों की संख्या कम, नहीं के बराबर होती है। लेकिन बारात आयी है आंगन में ये प्रभाव रहता है।

इसीलिए सद्भाव पैदा करने के लिए सत् संगति का प्रयोग करना चाहिए। इससे दुर्भाव नष्ट होंगे अपने आप सद्भाव आते जायेंगे। यह सब नैसर्गिक होगा किन्तु जब तक ऐसा योग/ऐसे परिणाम नहीं तब तक काम नहीं होगा अतः पुरुषार्थ पूर्वक ऐसे योग

मिलाने से काम होता है। भीतर से जागृति अनिवार्य है। उसके प्रति आदर भाव होना चाहिए, बहुमान बना रहना चाहिए तभी यथोचित् फल मिल सकता है।

इस प्रकार देवों ने भी इस संयोग का लाभ लिया अन्य आवे या नहीं। फिर भी मनुष्य से बढ़कर भाव नहीं हो सकते हैं। अध्यात्म में भी इस प्रकार के भाव जिसके निमित्त से हो रहे हैं। वह देव ही नहीं महादेव है, देवों के भी देव बनने वाले हैं। परिणाम उज्ज्वल हैं। इन्द्र भी जिनके चरणों में आकर्षित होते हैं तो वह विशेष तो है। बार-बार विज्ञापन देने पर भी, आजकल तो विज्ञापन का जमाना है। बिना विज्ञापन के जिसे इन्द्र का मन भी स्वीकार रहा है। जो चौबीसों घन्टे भोगोपभोग में लीन रहने वाले स्वयं ही नहीं सबको बुलाता है।

ये मात्र उसी का परिणाम है, उस शिशु अवस्था का प्रभाव है। शिशु अवस्था भले ही है। अपना प्रभाव दूसरे पर लादता नहीं पड़ जाता है। इसी को निमित्त-नैमित्तिक सम्बन्ध बोलते हैं। इसी प्रकार दुष्प्रभाव भी पड़ता है। आप लोग छुआछूत - संक्रामक की बिमारी बोलते हैं। एक-दूसरे से वह चिपक गयी इस प्रकार उसका फैलाव हो जाता है। अच्छाई का भी इसीप्रकार

फैलाव होता है। महापुरुषों के इस प्रकार से स्मरण करने मात्र से भी रोंगटे खड़े हो जाते हैं।

रोंगटे खड़े होने का मतलब एक स्फूर्ति/क्षमता/ऊर्जा आ जाती है कि बाल खड़े हो जाते हैं। आपके मन में प्रश्न आ सकता है- इन्हीं-इन्हीं भगवान का नाम कितनी बार लें। आप अपने दादा-दादी, नाना-नानी आदि के नाम से बार-बार प्रफुल्लित क्यों होते हैं। प्रथमानुयोग एक बार तो पढ़ लिया फिर क्यों? ऐसा आता होगा। मैं कहता हूँ आप सबको गौण करके सिर्फ उन्हीं के बारे में क्यों सोचते हैं।

जब भी पढ़ो अपने नाना-नानी से भी ज्यादा मानकर पढ़ो। ये आकर्षण ऐसा ही है। अतीत की घटनायें भी आकृष्ट किये बिना नहीं रहती। युंकि हमारा उपयोग वर्तमान में उस ओर प्रभाव पड़े बिना नहीं रह सकता/प्रभाव डालती रहती है। ज्यादा तत्त्वज्ञान की आवश्यकता नहीं, आप प्रथमानुयोग से काम चला सकते हैं।

नाते-रिश्ते इतने हैं, ये तो नन्द लाल के नाते-रिश्ते रखने वाले हैं। हमको इसी रूप में स्वीकार करके गुणगान करते रहना चाहिए। "मोह के कारण नाना-नानी अच्छे लगते हैं, निर्मोह के कारण नाना गुणों से सम्पन्न महापुरुष अच्छे लगते हैं।"

अहिंसा परमो धर्म की जय। जैं

30-4-17 "आओ खेंचें चालनी से पानी" प्रातः 9:20

श्रद्धा दिखती है क्या नहीं ? आँखे दिखती भी है और देखती भी है। सब लोगों की दृष्टि औरों की ओर ही चली जाती है। उसी से जो कुछ भी हिसाब-किताब है वह चालु हो जाता है।

आँखों में श्रद्धा तो दिखती नहीं और हम ये चाहते हैं कि हमारी श्रद्धा/आस्था आपके प्रति बनी रहे, आँखो के प्रति बने रहे। जो दिखती नहीं उसका भी तो मूल्यांकन किया करो इससे जो प्रतिपल दिख रही है (दृष्टि) अपने आप ही नम्र हो जायेगी। मस्तक तो नम्र होता ही है, "आँखे भी तब नम्र हो जाती है जब आस्था दिखती है।" कब दिखती है, एक उदाहरण सुना था।

नहीं बताया तो आस्था को छोड़ देंगे, आपको तो बताना पड़ेगा। जिन्दगी भर नहीं बता सकुंगा तो भी आस्था छुटेगी नहीं। बता दुंगा तो हाँ आस्था आवश्यक हो जायेगी जो बहुत बड़ी सफलता होगी ऐसी सफलता जिसकी कोई सीमा ही नहीं। बता दो। तो सुनो!

चलनी (चालनी) होती है उसको रस्सी बांध दो एवं कुयें में उतार दो। प्यास लगी है पानी पीला दो। आपके प्रति मेरी आस्था पुरी बनी रहेगी। आपने आस्था की बात तो कर दी। आप ही जानो आस्था की बात। देखा-देखी या और कोई रिश्ता-

नाता है।

प्यास को बुझाना मेरा कर्त्तव्य है। उस कर्त्तव्य के माध्यम से आस्था को देखने के लिए आँखे भी चाहिए। चालनी में पानी भर गया अब खेंचना प्रारम्भ कर दो। कितना पागल (बावला) है ये। 50 फीट का कुआँ है। एक झटके में तो ऊपर आयेगा नहीं। पानी निकाले बिना प्यास बुझेगी नहीं। आस्था को लौकिक भाषा में यकीन कहते है। यकिन उर्दु शब्द है। जिसकी प्यास बुझनी है वह चालनी देखता है। एक बूंद भी नीचे नहीं गिर रही है। उत्साह बढ़ रहा है।

कोई जादुगर तो नहीं है। जैसे-जैसे ऊपर आ रहा है वैसे-वैसे चालनी का पानी भी नहीं दिख रहा है। पानी गया कहाँ? चालनी में भी नहीं - नीचे भी नहीं गिर रहा। इसी जिज्ञासा के साथ जब ऊपर आ गया। ले लो। वह विस्मित है - वह चालनी पानी से नहीं बर्फ से भरी है। आँखो को विश्वास नहीं होता। जिसके दिल में विश्वास नहीं उन आँखो में विश्वास कैसे दिखेगा। यही संसार की स्थिति है।

"दुनिया दुरंगी मकान सराय, कहीं खैर-खुबी, कहीं हाय-हाय"।

दुनिया देखकर विश्वास बनाने वाले उस विश्वास को खो दोंगें। विश्वास अथवा आस्था के आँखो से संसार को देखने का प्रयास अच्छी बात है।

आँखो से कहीं अच्छी - कहीं बुरी दृष्टि से देखेंगे। इसी प्रकार संसार की लीला है।

वहीं मोहमार्ग भी उपस्थित है, और वहीं मोक्षमार्ग भी विद्यमान है (कौनसी आँखो से कौनसा मार्ग दिख रहा है। चश्मा लगाकर देखलें। चश्मा का नम्बर मुझे भी बता दें मैं भी देख लूं क्यों की हमारा आपके ऊपर पूरा विश्वास है। नहीं है तो मोक्षमार्ग दिखाने वाली आँखे और उनका नम्बर हमारे पास मिलते है चाहो तो ले सकते हो।

अहिंसा परमो धर्म की जय हो

1-5-17 "निरिहता के बिना निर्भिकता नहीं" प्रातः 9.30

हमारा ज्ञान कहाँ तक अपने उपयोग में आता है? हमारा ज्ञान अपना विषय पर को कितना बनाता है? सुबह से लेकर शाम तक हम देखते हैं उसमें स्व को कितने बार देखते है और पर को कितने बार देखते है। स्व को देख सकते है या नही? ये कुछ ऐसे मूल मुद्दे है, जिन पर चिंतन आवश्यक है।

हम इन आँखोका प्रयोग पर के लिए ही करते है। स्व के लिए करना भी चाहो तो भी नहीं कर सकते है। मतलब हमारी ये आँखे स्व के लिए नहीं। किन्तु जैसे - जैसे हम अपने आपको चाहते है वैसे - वैसे इन आँखो को देखकर नहीं आँखो के माध्यम से कोई

बिम्ब को देखकर हम अपनी तुलना उनके साथ कर सकते हैं। अथवा हम अपनी आँखों से दर्पण को देखते हैं, दर्पण में जो प्रतिबिम्ब होता है उसके माध्यम से दर्पण को देख सकते हैं।

वैसे हम अपने स्वयं के काम आते ही नहीं। आप शृंगार के लिए करोड़ों खर्च करते हैं और सामने वाला फोकट में मजा लुटता है, आपके लिए कुछ नहीं। आप पुछते हैं क्यों कैसा लगा। अपना डाह-वाह दिखा दिया। भव्यशाली हैं किन्तु स्वयं के लिए नहीं सामने वाले के लिए है।

आप लोगों से यही कहना है मतिश्रुत ज्ञान अर्थात इन्द्रिय ज्ञान का मोक्षमार्ग में कहाँ तक महत्व है? कुछ नहीं। अभी आपको उदाहरण दिया। बिम्ब के दर्शन किये उसमें आँखों का नहीं भीतर के परिणामों का प्रतिफल है। इसलिये मोक्षमार्ग में शुभ मन - शुभ वचन और शुभ आचरण की चेष्टा ही काम में आती है। लेना चाहो तो ले सकते हैं नहीं तो युं ही खाओ-पीओ और बड़ों के कंधो पर चले जाओ। और कुछ हो तो बताओ।

बारह भावना की पंक्तियाँ रोज पढ़ते हो, सब जग देख्यो हान। व्यंग्यात्मक सा लगता है। सारा जगत देख लिया किन्तु "खोदा पहाड़, निकली चुहिया" चुहिया भी नहीं छोटी सी चुही निकली।

जो खाना होने वाले हैं, उनसे पूछना है यात्रा में क्या-क्या हुआ? प्रश्चाताप के अलावा कुछ नहीं बचा।

स्वयं की आत्मा रोती रही ऊपर से रौनक दिखाता रहा। ज्ञान का सदुपयोग करना है दुरुपयोग नहीं। आज सदुपयोग का अभाव हो रहा है। आचार्य कुन्दकुन्ददेव ने अच्छी गाथा दी है-

सण्णाओ य तिलेस्सा इंदियवसदा य अत्तरुद्दाओ।
णाणं च दुप्पउत्तं मोहो पावप्पदा होंति॥ १५॥ पंक्ति

कुछ बातें आचार्य देव ने एक ही गाथा में बताई। सबसे पहले कहा- चारों प्रकार की संज्ञा पापप्रद है। परिग्रह संज्ञा- आहार संज्ञा- भय संज्ञा भी है। भय क्यों लगता है, एक-दो दिन पूर्व ही बताया था। यहाँ संयोजन की अपेक्षा आचार्य श्री कह रहे हैं भय उसे जिसके पास परिग्रह है। समझ रहे हो आप लोग। हम। गुरुदेव कहा करते थे भय संज्ञा हमेशा परिग्रह के साथ ही रहती है।

परिग्रह संग्रह किया, ताला लगा दिया अब चाबी कहाँ रखोगे? मात्र ताला दिखता है चाबी को छिपाये रखता है। कुन्दकुन्द आचार्य कहते हैं भय संज्ञा चाबी की भाँति कमर में दबी रहती है। अब आप तीर्थ जाओ या भोगीर्थ जाओ कोई फर्क नहीं वहाँ भी वह भय लगा ही

रहेगा।

लोग आकर मेरे से कहते हैं। महाराज! ऐसा आशीर्वाद दे दो वो भी VIP वाला आशीर्वाद दे दो। हमारे सुरक्षित रह सकूं। इसको भूल जाओ। मैं आपका साथ दे नहीं सकूंगा। परिग्रह छोड़ा नहीं की आप निर्भिक हो जाओगे। निरिहता के साथ निर्भिकता की व्याप्ति है। दुनियाभर का तो इकट्ठा कर रखा है और हमारे से आशिर्वाद चाहते है। न भूतो, न भविष्यति।"

फिर तिण्णि लेश्या रहा अर्थात अशुभ तीन लेश्या पापपुंज है। आप अपने आपको सुरक्षित रखना चाहते हो तो तीन अशुभ लेश्या को छोड़ दो। कषाय को आप नहीं पकड़ सकते लेश्या को तो पकड़ ही सकते हैं। सम्यग्दृष्टि तो है पर यदि लेश्या उखड़ जायेगी तो पाप की भी बाढ़ आती रहेगी। जिस प्रकार रंग-रोगन को आप आसानी से देख लेते हैं उसी प्रकार लेश्या को सहज ही पकड़ सकते हैं।

गोम्मटसार जी में "दिर्घ ग्रन्थि" कहा। ऐसी ग्रन्थि जो दीर्घकाल तक बांधे रहती है। चुप भी बैठे रहेंगे तो भी ऐसा वैर बंध जाता है जैसा कमठ ने पार्श्वनाथ के साथ बांध लिया। बहुत भयानक है यह एक तरफा वैर चलता रहता है। जो निष्परिग्रही होता है अशुभ लेश्या का तो सवाल ही नहीं। षट्खण्डागम

आदि ग्रन्थों के अनुसार पंचम गुणस्थान वर्ती हो गया अब तीन शुभ लेश्या ही रहेगी।

धर्मध्यान का मतलब ये है। कल रावण और सीता का उदाहरण दिया था (यहाँ उसकी ओरव नहीं खुली और वहाँ उसका ट्रीटमेन्ट (इलाज) अपने आप ही हो गया। इसके बाद पाँच इन्द्रियों के वशीभूत हुये नहीं कि पाप की बाद आये बिना नहीं रह सकती। आर्तध्यान और रौद्रध्यान दोनों अशुभपद है - पाप को बुलाने वाले है।

अंत में एक बहुत अच्छी बात कही। उसमें स्वाध्यायशील भी पकड़ में आ जायेंगे। ज्ञान का यदि दुरुपयोग तो वह ज्ञान भी पापपद होगा। यह बहुत असत्य है। ज्ञान का दुरुपयोग करता है तो पाप और उसी ज्ञान का सदुपयोग तो आर्त-रौद्रध्यान से हटकर धर्मध्यान करने में लग जाता है। परिग्रह / मुर्छा नहीं तो भय संज्ञा नहीं। जब भय नहीं तो आत्मा निर्भिक कैसे नहीं होगी, जरूर होगी।

निरिहता जितनी-जितनी बढ़ेगी, निर्भिकता के साथ जहाँ कहीं भी जा सकते हो। निरिहता आ जायेगी डर तो एकदम समाप्त हो जायेगा। संसार से डर नहीं लगता इधर-उधर की बातोंसे डरते हो। संसार से जिसको डर (भय) लगने लगेगा,

फिर वह किसी भी चीज से डरेगा नहीं।

इस प्रकार गुरुओं की कृपा से उनके वचनों को सुनते हैं। संकेतों को समझते हैं तो 5 मीनिट तो क्या 5 सैकेण्ड भी नहीं लगता, झटका सा लगता है। महाराज आप बार-बार ऐसा ही झटका लगाते जाओ। किसको लगाऊँ-मोहनीदे में ऐसे सोये हो। जैसे छोटे बच्चे को उठाओ पुनः सो जाता है। माँ कहती है- लाला उठ जा-उ वो ही आपके साथ हो रहा है।

दूसरों को नहीं अपने आप को संभालना कहीन है। दूसरों की बात करना आश्चर्य है। हाँ मैं उदारता मानता हूँ आपकी कि आपकी ऐसी भावना है कि दूसरा बच जाये। जब यहाँ पर आपका अपना बचाव ही संभव नहीं हो पा रहा हो दूसरे का कैसे?

गोम्मटसार में "दीगगंधी" कहा। बाहर से शुभत्व पर भीतर शुभत्व विद्यमान नहीं। गोम्मटसार में अविरत में छहो लेश्या किन्तु संयमासंयम तीन शुभ लेश्या होगी। मिथ्यादृष्टि भी शुक्ललेश्या वाला है तो कर्मों का बन्ध अन्तःकोडाकोड़ी सागर का ही करेगा एक सम्यग्दृष्टि है वह भी अन्तःकोड़ाकोड़ी सागर का ही बंध करेगा। इस तरह अपने आपको बचा सकते हैं। ऑखों से नहीं- भीतर से अवलोकन कर

अपने आपको बचा सकते है। अन्यथा सारे के सारे सिद्ध परमेष्ठी भी नहीं बचा सकते है।

यह इसलिए कह रहा हूँ कि आप ऐसी आशा रखते हो कि कोई करुणावान आयेगा और हमें बचा लेगा जबकी ऐसा नहीं है। हमारी बात को याद रखेंगे - "निरिहा हुए बिना निर्भिकता नहीं।" भय भगाना चाहते हो तो इस सूत्र को भूलो नहीं। ये पंक्तियाँ सार्थक है - "परिग्रह पोट उतार के, लीनो चारित पंथ" चक्रवर्ती भी जब तक चक्रवर्ती षट् को छोड़ेगा नहीं तब तक अपने आप में लीन नहीं हो सकता।

आप लोग पुरा नहीं तो आधी ग्रन्थि तो तोड़ दो। इसमें दूसरों के लिए नहीं स्वयं के लिए कृपा कर रहे हैं। दूसरे पर कृपा करना परोपकार है, उस उद्देश्य से भी स्व पर कृपा करने में तत्पर रहने में दोष नहीं। कॉफी गरिष्ट है। पंगत में बैठे थे सो हमने परोस दिया।

अहिंसा परमो धर्म की जय। हुँ

संस्मरण - आज की चर्या गुरुजी की प्रतिभास्थली के चौके में हुयी। सभी ने एक स्वर में कहा (आहारोपरान्त) आ.श्री. हमें कोई सामुहिक व्रत दें। आ.श्री ने कहा- समूह में रहना ही यह व्रत है। अबकी बार एक बहन ने कहा कोई त्याग दे दिजिये आ.श्री. खटक फटक का त्याग कर दो।"

25-17 "आँखो में हो हरियाली" प्रातः 9:20

वन में जब बसन्त का आना होता है तो एक तो सर्दी का भगना होता है। कहावत है- "आया बसन्त, पाला उडन्त"। पतझड़ हो जाता है (पतझड़ का अर्थ पत्तो का झड़ जाना। सुखे थे, उम्र समाप्त हो गयी थी अथवा यु कहो हरियाली बुलाने के लिए ये अनिवार्य है।

चारों ओर हरियाली हा जाती है। ग्रीष्म के बाद ये होता है। क्या होता है? एक-आध वर्षा अथवा नूतन परिवर्तन होने पर हड्डी-हड्डी जिनका मांसल कहाँ ऐसे वृक्ष पता नहीं ज्यों ही मौसम का परिवर्तन तो हरियाली हा जाती है, फैल जाती है। गर्मी का प्रताप अपने आप शान्त हो जाता है।

रंग अनेक प्रकार के होते है। जो आँखो पर - मन पर - शरीर पर अपने - अपने प्रभाव डालते है। काव्य रूढ्याति के अनुसार एक हरा रंग भी उसका परिणाम अलग ही होता है। हमारे आचार्यो ने भी इस बात को स्वीकारा कि हमारे प्रभु की दोनों आँखो में हरियाली ऐसी दिखती है जो सब लोगो की गर्मी शान्त कर देती है। हम लोगो की आँखो में हरियाली देखो की आग सी लग जाती है, सामने वाला झुलस जाता है।

नजर उठा कर देख तो लो। अपनी नजर तो सुरक्षित न उठाये, सामने वाले से अपेक्षा रखे। अपने को अपना संरक्षण

करना चाहिए। अपने परिणामों पर दृष्टिपात करें। एक सेकण्ड में हरियाली हो जाये और एक सेकण्ड में गर्मी (आग) जैसा आप चाहों। नियन्त्रण आपके अपने हाथ में है।

संस्कार बना रखे हैं। पुरुषार्थ करने से अवश्य कमी आती है। पुरुषार्थ ऐसा भाव है जो बहुत कुछ होने की संभावना जो हो सत्ता में उसे उद्घाटित कर सकता है, करे ही ये नियम नहीं हैं। जब भी पुरुषार्थ होता है परिवर्तन नजर आते हैं। भगवान की दो आँखो में हरियाली होती है। तीसरी आँख की भी बात कर लें। तीन लोक को नचाने वाला काम पुरुषार्थ होता है। तीसरी आंख (अर्थात धर्म पुरुषार्थ) जब खुल जाती है तो उस काम का नाश होता है। काम का नाश होते ही उस काम के आयुध अर्थात पुष्प चरणों में चढ़ जाते हैं।

आप अपनी इन दोनों आँखो द्वारा हरियाली फैलाते रहिये। ज्यादा हो जाये तो आँखो को बंद कर दीजिये, नियम से आँखो की ज्योति बढ़ेगी। सामने वाले की ज्योति को आराम मिले ये कोई नियम नहीं। हम अपने परिणाम से जब चाहे अपनी आँखो में रंग भर सकते हैं, ये हमारे ऊपर है। यही मोक्षमार्ग में आपेक्षित भी है। ये ऐसा पुरुषार्थ जिसमें कोई फावड़ा चलाने की आवश्यकता नहीं है, न ही कोई

टेबल-कुर्सी लगाकर बहीखाता लिखना होता है। मात्र वितराग परिणाम/भावों की आवश्यकता है।

अपने परिणाम सुधारना होता है, परिणाम सुधारने का मतलब अच्छे को धारण करना और बुरे को छोड़ना है। इसके लिए सदैव हमें खड़े रहना है। शरीर खड़ा रहे मन बैठ जाये इसी का नाम सामायिक है। आराम यदि चाहते हो तो मन को पालती मारकर बैठ जाओ। भागना चाहता है तो - माँ के पास से बच्चा भागता है फिर गिर जाता है। ज्यादा पुचकार मत कर - शांति से बैठ जाओ। इसलिए हमारे प्रभु नासा दृष्टि से विराजमान है।

कानों से सुनते हैं या नहीं? मतलब की बात सुनते हैं। आपलोग फोन हर समय सुनते रहते हो क्या? मतलब का है तो ठीक नहीं तो युं (इशारा हाथ से) कर देते हो, उसे मंगित कर देते हो। यदि ज्यादा परेशान करे तो अपना नम्बर बदलवा देते हो। अपने आप सब ठिक हो जाता है। हमारे हाथ में है नम्बर दिया है तो उसी के चक्कर में पड़े रहे, ऐसा तो नहीं करते।

इसी प्रकार मोक्षमार्ग में शान्त बैठने का अभ्यास करते रहना चाहिए। इसके लिए आलम्बन वेदी में प्रभु बैठे हैं, उन्हें देख लो। "वन्दे तद्गुणलब्धये अहं" इस तरह निष्ठा के साथ, रुचि के साथ अभ्यास करता है। कब तक करता

है? बहुत दिन के जो संस्कार जमें हैं उनको हटाने के लिए ऐसा अभ्यास जरूरी है।

मोक्षमार्ग में बैठे-बैठे लड़ने का प्रयोग किया जाता है। बाहर से नहीं अपने ही कर्मों से लड़ाई करता है। इस लड़ाई में परास्त होने की बात ही नहीं है। रणांगण में एकाग्र होकर उन कर्मों को पछाड़ देता है। बस इतना ही कहना था इन आँखों में हरियाली का प्रयोग कीजिए। बाहरी दाह अनिवार्य रूप से दूर होगा। परिणामों से ही अनुकूलता और परिणामों से ही प्रतिकूलता करते हैं।

होश हवाश में रहने पर अनुकूलता आपके पास ही खड़ी रहती है। अनुकूलता - प्रतिकूलता उम्र को लेकर आती है - चली जाती है उसे स्थायी रूप नहीं दे सकते, दे सकते हैं तो अपने परिणामों को/भावों को स्थायी रूप दे सकते हैं।

अहिंसा परमो धर्मकी जय।

Note - संस्मरण -

सिलवानी में सर्दी का समय था, हम दो-तीन मुनिराज आर्क्षी की वैय्यावृत्ति कर रहे थे। आर्क्षी. कुछ सोच रहे थे फिर बोले जो जीवन में प्रतिपल ध्यान रखने योग्य है वह बात थी - "जो मेरे लिए अहितकर है, यदि भगवान भी मेरे सामने आ जाये तो मैं नहीं करूंगा।"

2-5-17 — "विवाह कब?" — मध्याह्न 11.40

आजकल लड़कियों द्वारा अधिक उम्र में शादी-विवाह करने के परिणाम गम्भीर आ रहे हैं। पढ़ाई-नौकरी के कारण ऐसा कर रहे हैं। इससे पारिवारिक सम्बन्धों में मधुरता नहीं। कुछ ही समय में तलाक की स्थिति बन जाती है।

विदेशी कम्पनीयाँ भी इसी को प्रोत्साहन दे रही है। माँ बनने के बाद आपकी कार्यक्षमता में परिवर्तन आ जायेगा अतः अभी आप शादी न करें इसके लिए पैकेज का लालच दिया जा रहा है। उनके माता-पिता इस ओर ध्यान क्यों नहीं दे रहें। बाद में हमारे पास आते हैं, हम क्या करें।

परखनली से संतानोत्पत्ति होना आम बात हो गयी जो ठीक नहीं है। इससे हमारी आने वाली पीढ़ी रुग्ण होगी। इतिहास को जो व्यक्ति नहीं जानता वही ऐसा कर रहा है अथवा उसको सही मान रहा है। आज खान-पान आदि में सत्व नहीं। इंजेक्शन से सब्जीयाँ और सिंथेटिक दूध से शक्ति को क्षीण किया जा रहा है। अतः जो उम्र विवाह की बतायी उसी उम्र में विवाह होना भारतीय संस्कृति के अनुसार लाभप्रद है। काल का बहुत बड़ा महत्व है उसे समझना अति आवश्यक है।

नूँ

4-5-17 "चिड़िया ने दी शिक्षा" प्रातः 9:30

एक स्थान पर दर्पण लगा हुआ है, उसके सामने कुछ ऐसा ही साधन रखा है जो एक प्रकार से आसन का काम करता है। कोई भी उस दर्पण के सामने आकर अपना मुख देख सके। जिन व्यक्तियों ने ये प्रबंध किया वे भी तथा दूसरे भी लाभ ले सकते हैं। क्या करेगा- अपना मुख देखकर ठीक-ठाक कर लेगा, कंघी कर लेगा अथवा पाउडर लगा लेगा। ये सब आपका आपका उद्देश्य हो सकता है।

एक चिड़िया उस दर्पण के सामने आकर बैठ गयी। दर्पण के सामने जो भी आयेगा उसमें झलकेगा अथवा यूं कहो दर्पण झलका देगा। दर्पण को उससे कुछ भी फर्क पड़ने वाला नहीं है। दर्पण तो दर्पण है। वह चिड़िया बैठी - सामने वाला भी आकर बैठ गया। मेरा कोई भी व्यक्ति जो मुझसे प्रतिकूल है गुस्सा में अपनी चोंच दर्पण पे दे मारी, आवाज आई- ठक। उसने दूसरा और जोर से मारी, सामने वाले ने भी मेरे ऊपर प्रतिकार किया अब शेष और तेज हो गया। घमासान युद्ध छिड़ गया।

उधर से एक बार इधर से दो बार उधर से दो बार इधर से तीन बार ये विशेषता है कि उधर से वो कहता नहीं है हां मैं कम नहीं हूं। आप ही बताओ बस युद्ध का क्या होगा। सुनरहे

हो कि नहीं। — — —

को प्रतिबिम्ब न मानो।

ये मेरा शरीर है, पंचइन्द्रियाँ मेरी हैं उन्हीं को पुष्ट कर रहे हो। ये सब तो हो जायेगा - कुछ नहीं होता। दिमाग बिगड़ता जा रहा है। जब कभी भी आप देख लो यदि कोई अनुकूल कार्य नहीं होता तो दिमाग भी उल्टा ही सोचता है। ये वैचित्र्य है। हम लोगों के सामने वह भी दया, अनुकम्पा एवं धैर्य रखते हुए आचार्यों ने हम लोगों को कुछ सम्बोधन करते हुए लिख डाला है। जब अर्थ निकालते हैं तो आँखों से पानी आने लगता है। कितना बड़ा उपकार इनलोगों ने किया है।

हम उनके उस उपकार को समझ नहीं पाये। उनका तो जो कर्त्तव्य था कर गये, मांगने आऊंगा ऐसा नहीं। क्या मांगेंगे वे तो संसार की चीजें चाहते ही नहीं। तब पंच परमेष्ठी के प्रति बहुमान जोत होता है। यही सारभूत है, उत्तम है और यही रहस्य है। इस कर्म तत्त्व और आत्म तत्त्व की संयोजना को समझें। इसीके फल स्वरूप प्रतिबिम्ब तैयार हुआ है। इसके अतिरिक्त अन्य कोई अस्तित्व नहीं। आयुकर्म एवं नोकर्म पर यह शरीर आधारित है। तरंग का तो यही अस्तित्व है।

जल तत्त्व को देखते हैं तो ज्ञात होता है, तरंग तो उठती है और मिट जाती है। दृष्टि को संसार की

और न ले जाकर कर्म के उदय में परिणाम हो रहे हैं। इसमें बिल्कुल भी भ्रमित नहीं।

बाहर से दृष्टि हटा लेंगे तो सुलझ जाओगे। शान्ति का अनुभव करोगे। "कर्मों का आरोहण - अवरोहण यदि समझ जाओगे तभी समता रख पाओगे"। बाहर में उलझे-उलझा तो कोई अन्त है ही नहीं। ये सब तो पर्याय है।

आप सभी सुन रहे हो। पंचेन्द्रिय हो सभी की पास कान है। कान है तब तक ही शब्द का मतलब है तभी तक सम्यग्दर्शन की भूमिका है। अब मान लो कान तो है पर विपरीत अर्थ लगा रहे हैं- पागल है। बुद्धि को सही काम में नहीं लगा रहे। उलटा समझ लिया गया तो क्या होगा? कुछ भी नहीं। हमारा ज्ञान, हमारी शक्ति, हमारे बल का युंही अपव्यय होता रहता है। चाहे चतुर्थ काल हो या पंचम काल हो। जब भगवान का साक्षात् सान्निध्य प्राप्त होता है तब भी ऐसा होता आया है।

आज जो क्षण मुझे मिले हैं वे कितने महत्वपूर्ण हैं ऐसा समझता है तो भीतर से जागृत होकर प्रत्येक क्षण की रक्षा करता है। सदुपयोग करता है। हमारे चिड़िया के उदाहरण को याद रखना। कम नहीं हैं। चोंच से बुद्धि को घायल न करें। यही सुरक्षित रखना। दूसरों के सामने भी इसको रखीये, स्वयं भी अपने

उपयोग में लाए।

एक व्यक्ति भी समझ जायेगा वह औरों को भी सदुपयोग में / प्रेरणा के काम में ला सकता है। नहीं बनता है तो अपने ऊपर लगाकर काम में लेओ। यही सबसे बड़ा सदुपयोग होगा। बार-बार प्रयोग में लाकर अपने परिणामों को दृढ़ (मजबुत) कर सकते है। निर्मोही बन सकते है।

आगे क्या मिलने वाला है पता नहीं। पुराना सब धुल गया। साक्षात् फल है आगम काजो अंधकार में भी दिपस्तंभ की तरह रास्ता दिखाता है। बुद्धि के माध्यम से निकटता की ही ओर जा रहे है ऐसा समझ लेना।

अहिंसा परमो धर्म की जय।

Notes -

- "दम घुटती कलकत्ता महानगरी" ऐसा शीर्षक पढ़ा था। महानगरों में हर चीज अशुद्ध ही मिलेगी।
- सरकार को सबसे पहले वाहनों पर प्रतिबंध लगाना चाहिए। एक घर में एक ही वाहन अन्यथा प्रदुषण बढ़ता ही जायेगा।
- रावण की मंत्र सिद्धि से जानलो एकाग्रता में पुरुषार्थ की क्या भूमिका है।
- मन्दिरों में चुनाव से पूर्व तय करलो की नयी कमेटी को ये-ये काम सौंपकर के देना है।

4-5-17 "पद्मपुराण में गाय" अपराह्न 4:30

आचार्य रविषेण कृत पद्मपुराण जो तीसरी शताब्दी में लिखा अर्थात लगभग 1700 वर्ष पूर्व में बताया। उसमें विजयार्ध पर्वत की विद्याधर नगरीयों का बहुत सुन्दर वर्णन करते हुए लिखा कि वहाँ की कामधेनु का क्या कहना जिसके खुर एवं सींग स्वर्ण के समान सुन्दर हैं। उसका गोबर एवं मूत्र ऐसे रसायन के साथ कि उसमें स्वर्ण तत्त्व विद्यमान रहता है। शुभ गंधवर्णादि के साथ रहता है तो आचार्यश्री कहते हैं कि उसके दूध की तुलना हम किससे करें।

चर्चा का विषय नहीं है शोध का विषय है। शोध भी हो चुके हैं। बुद्धि में जब इसका महत्व एवं गुणधर्म आते हैं तभी उसको जीवन में उपयोग कर सकते हैं। अगर ऐसे उत्पादनों से एक वर्ष में ही 12 लाख से अधिक मिलें। बहुत उपयोगी है- जानो तो महत्व को। आंखों खुली की खुली रह गयी। आज का विद्यार्थी रद्दी-रद्दी की बात तो करता है। "बोध के उपरान्त मंथन होता है तभी शोध होता है।"

जैनाचार्यों ने जो लिखा-गोबर से ही पता हो गया। या: श्री सा गौ से चरितार्थ है। कहता ही की गोधन का उपयोग नहीं - निराधार है। उसका करने वाले की उपेक्षा पहले ही हो जायेगी। किताब

तो पढ़कर रख दी जाती है पर शोध ग्रन्थ रखने योग्य नहीं।

मंथन कर नवनीत को काम में लेने की जरूरत है। हाँ में हाँ मिलाना अज्ञान का प्रतिक है। चिंतन में गरीबी है। मंथन सही-सही एवं सही विधी से हो। मानना ही पड़ेगा नकार नहीं सकते है। विजयार्ध की भैंस के बारे में लिखा कि नीलकमल जैसी सुन्दर भैंस वहाँ रहती है। जैनाचार्यों ने दिया है उसके महत्व को समझे।

संक्षेप में इतना ही पर्याप्त। जाना भी है आप लोगों को। ताजा-ताजा दे दिया। हम धीरे-धीरे बढ़ते है आप लोग तेजी से पढ़ते है। थोड़े समय में भी हम बहुत कुछ समझ सकते हैं। बार-बार दोहराओं नहीं तो Notes के साथ एक Notes और लेना पड़ेगा। हाथों-हाथ दूसरे के सामने रखने से स्मरण शक्ति बढ़ जाती है। हम कहाँ से बादाम खायेंगे स्मरण शक्ति बढ़ाने के लिए।

जिसको सुनाया वह दूसरों को सुनायेगा ऐसे ही पचासों व्यक्ति खड़े हो जायेंगे बिना विज्ञापन के। अन्त में हाइकू याद रखना - "हम अधिक, पढ़े लिखें हैं कम, समझदार"।

अहिंसा परमो धर्म की जय।

5-5-17 "आओं बढ़ायें पात्रता" — प्रातः 9.20

सुनने में आता है सिंहनी का दूध विशेष पात्र में ही टिक पाता है और ऐसा लगता भी है। जो सुनाया जाता है, जिसका कोई छोर नहीं मिलता दूर से चली आ रही है तो वह बात सही ज्ञात होती है। तथ्यपूर्ण नहीं है किन्तु उसकी यात्रा लम्बी तो सही मानकर चलते हैं। — — —

यह तो बाद की बात है। दया-प्रेम के लिये यह चित्र दिया है।

थोड़ा आगे की सोचे गाय के दूध को सिंह का बच्चा (शावक) पी रहा है कोई बात नहीं वह तो पचा ही लेगा पर गाय का बछड़ा कैसे हजम कर पायेगा। जो दूध स्वर्ण पात्र के योग्य वह यदि भीतर जायेगा तो छाले हुए बिना नहीं रह पायेगा। छाले आयेंगे तो जलन हुए बिना नहीं रहेगी जब की वह तो आनंद के साथ पीता ही जा रहा है-रे, कैसा प्रभाव है?

कर्मों का ऐसा वैचित्र्य है। स्वर्ण पात्र से भी ज्यादा कठिन्य उस गाय के बछड़े की आंतों में है जो उन्हें दूध छेदन न करके प्राण रूप में परिवर्तित हो जाता है। कषाय के अभाव में यदि कोई वस्तु का अवलोकन किया तो वह राग-द्वेष पैदा न करके आंखों को न तो सुहायेगी न ही दुखायेगी बस बैठ जायेगी। विषाक्त आंखों में ऐसा नहीं होता।

यह दृष्टि की विशेषता कहलाती है। आपने दृष्टि को जिस रूप में स्वीकारा उस रूप में वह सामने आती है। "वस्तु भयानक नहीं होती, जितनी की हमारी दृष्टि अथवा अवधारणा है। आचार्यों ने अज्ञानी को ज्ञान की ओर, मिथ्यादृष्टि को सम्यग्दर्शन की ओर

विकृति से प्रकृति की ओर ले जाने का जो पुरुषार्थ किया है वह महत्वपूर्ण है। अद्भुत है।

उसे अपनी दृष्टि से समझने का प्रयास करो। चित्र में सिंहनी या दुधु गाय के बछड़े के पेट में दिखता है और प्राण रूप में कैसे परिवर्तित होता है अद्भुत है। इससे हम पाचन की शक्ति के बारे में सोच सकते हैं। गाय जिसे दयालु और सभ्य कहते हैं। "सभ्य इसलिए कि वह आप लोगों के साथ जी कर अपने जीवन को पूर्ण करती है।" इतनी क्षमता कहाँ से आती है?

उसे देखो दया, करुणा, प्रेम, स्नेह एवं वात्सल्य का अनुभव करता है। रक्त में विष भी घुला हो वह प्राणवर्धक न होकर अच्छा ही काम करता है। आप तो उससे ऊपर उठे सभ्य हो। मोह अवस्था में रहकर भी निर्मोह अवस्था का अभ्यास करके कह रहे हो देख लो ना। (व्यंग्य) प्रयोग नहीं तो यह कार्य नहीं हो सकता। वस्तुओं में इस प्रकार क्षमता विद्यमान रहती है। द्रव्य - क्षेत्र - काल और भाव के अनुसार चरितार्थ करने में देर ही नहीं लगती।

अनगिन संभावनायें वस्तु में जो विद्यमान है, पात्रता पर आधारित करके, भाव को मुख्य लेकर बार-बार विवेचन करते हैं। अभी बहुत कम अंश में

हम इसका प्रयोग कर रहे हैं। सर्वज्ञ द्वारा भी पूर्ण नहीं हो रही।

अनगिन क्षमतायें है - शब्द के द्वारा वर्णन नहीं, असंख्यात के द्वारा भी नहीं, केवलज्ञान अनंत शक्ति रखता है वह भी वर्णन नहीं, अनंत काल में भी नहीं कर सकते। जो भी वर्णन मिलता है वह क्रमिक ही है। मात्र संकेत दिया है। द्वादशांग के माध्यम से एक पद, पदावली अथवा शब्द को समझकर ऊपर उठना है। जब भाव गिरते है तो उसी के माध्यम से संभाल सकते हैं। आज तक उसी के सहारे यह यात्रा यहाँ तक आयी है।

यात्रा रुकेगी नहीं, एक भव तो बीच में है ही दूसरे में संभव है, हाँ कह नहीं सकते संदिग्ता बनी रहती है। पर हमें रुचि / निष्ठा के साथ, दृढ़ता के साथ शक्ति लगाकर पुरुषार्थ करना चाहिए। विषयों के मामले में तो दृढ़ता रखते है। मुंह में से 32 निकल गये आप 32 नहीं 64 लगा सकते हैं, कहां से आयी? पचने की क्रिया कहाँ से लाओगे। भीतर की अग्नि तो मंद हो रही है किन्तु तृष्णा तो बढ़ती ही जा रही है। तृष्णा कभी बूढ़ी नहीं न ही छोटी वह तो हमेशा युवा से मण्डित रहती है। उसकी ओर देखो तो अवश्य ही पुरुषार्थ करोगे, अपनी इच्छा के अनुरूप अपने

जीवन को तैयार कर सकते हो।

पुराण पुरुषों के जीवन चरित्र को पढ़कर पंचमकाल में भी सफलता प्राप्त हो सकती है। कल मध्याह्न में कहा था - विजयार्ध नगरी में आज भी कार्यक्रम चालु हैं। जिस विषय में मार्ग खुलता जायेगा हम पन्ने डलते जायेंगे, रचना नहीं है। किसी - किसी को एक पन्ना क्या, एक पैराग्राफ क्या, एक पंक्ति क्या? एक शब्द में ही वह इतना गहरा चला जाता है। वह शब्दों में परत दर - परत यात्रा करता जाता है।

ऐसा ही अनुभूत होता है। विषयों को छोड़कर जिनवाणी के कहे अनुसार पुरुषार्थ करें। गहराई में जायेंगे तो मालूम पड़ेगा। "तैरने वाला गोताखोर नहीं होता लेकिन जो गोताखोर होते हैं वह तैरता भी है और नीचे की ओर डुबकी लगाकर माल को लेकर आ सकता है।

अहिंसा परमो धर्म की जय हो

Notes:- उपकरणों से ज्यादा लगाव न हो उपकरण बकुश होना ठीक नहीं।

□ "आज के चिकित्सकों का सबसे ज्यादा प्रलापशब्द है बिना नाड़ी देखे इलाज करना, जाँच करवाना कुछ को कुछ बता देना और दवाई देते रहना।"

6-5-17 "खिचड़ी में छेद" प्रातः 9.20

एक माँ ने अपने बच्चे को संकेत दे दिया। आओ देखकर के आओ सिघड़ी पर खिचड़ी पक रही है उसमें छेद पड़ गये क्या नहीं। आप लोगो ने सुना? छेद का मतलब जानते हो? वहाँ जाकर के देख लो उसमें छेद पड़ गये या नही पड़े, हमें बता देना।

उसने जाकर के उस तस्तरी को उघाड़ कर देखता है उसमें छेद आ गये थे। चार-पांच स्थानों में छेद दिखता है। सीटी के माध्यम से मालूम नहीं चलेगा। आज के पाक शास्त्र और प्राचीन पाक शास्त्र में बहुत अन्तर है। अब वह खिचड़ी पेट में छेद करेगी बुद्धि में आपको मालुम पड़ेगा। माँ कहती है - चलो - चलो जल्दी चलो देखते हैं अरे छेद तो पड़ गये किन्तु ये तो दूसरा ही रूप है। पानी कम पड़ गया अभी खिचड़ी पकी नहीं जो पानी था सब नीचे चला गया और सूख गया। अब ऊपर से पानी डालना पड़ेगा।

हम नहीं जानते। बेटा उन्हीं छेदो में भर पानी डाल दिया जावे। फिर जब लोग खाने को आयेंगे तभी समीक्षा होगी। बेटा नाप-तौलकर पानी डाल जाता तो यह नौबत न आती। आपके हाथ में नाप-तौल है नहीं। अब तो ज्यादा से ज्यादा नाप करता है। पहले नाप कर देख लेते थे चावल डाल दिया,

मूंग डाल दिया पानी भी डाल दिया फिर नजर से देख लेते हैं कहीं संदेह न हो जाये।

अंगुली के पोर से पानी नाप लेते हैं कि इतना पानी दाल मूंग तथा चावल पकाने में पर्याप्त है। कभी-कभी या पानी ज्यादा डल जाये तो फिर पानी को बाहर निकालते हैं इससे डलका सत्त्व भी निकल जाता है। ऊपर से पानी डालोगे तो खिचड़ी तो बन जायेगी पर न ही वह स्वाद आने वाला है न ही वह सुगंध फूटने वाली है। ऊपर से हम घी डाल लेंगे। घी से खिचड़ी का जो लाभ मिलने वाला था वह नहीं मिलेगा, बिना घी के भी खिचड़ी खायी जाती है।

बच्चे ने ये सब सुन ली तो सोचा इसमें बड़ी सावधानी की जरूरत है। यह उदाहरण इसलिए दिया क्यों की आज पुरी दुनिया की यही समस्या है। सभी परतंत्र हैं। जब से स्वतंत्रता मिली तब से परतंत्र हो गये हैं। इसका इलाज अथवा इसकी चिकित्सा नहीं सी लगती है। बेटे ने पुछा तो माँ ने कहा - अनुभवों के अभाव में ये सब कुछ हो रहा है। पढ़ाई - लिखाई तो कोरी हो गयी किन्तु अनुभव का अभाव है।

उन अनुभवों की यहाँ माँग न होने के कारण विदेश जा रहे हैं और विदेश वाले यहाँ आ

आ रहे हैं। वो आ रहे हैं तो आप जा रहे हैं - गलत हैं। वहाँ कभी खिचड़ी पकती ही नहीं, सीटी के माध्यम से सब काम होता है। जिसके पास सही अनुभव नहीं उसे तो हमेशा सीटी ही दिखती है। स्वप्न में भी वही दिखेगी बस बजते ही जाना।

आप गहराई से समझना चाहते हो तो सीटी की ओर न जाओ - बस सामने बैठे रहो और देखते रहो की पानी कम या ज्यादा तो नहीं है। पानी सही हो इसके लिए सावधानी की आवश्यकता है। पढ़ने की आवश्यकता नहीं, बिना पढ़े भी घर के सभी काम किये जा सकते हैं। हमारे संतो ने भी आत्मा के बारे में यही बात कही। "जिधर जाना है उस ओर दृष्टि रखो, जिधर नहीं जाना उस ओर पीठ कर लो।"

फिसलने का काम नहीं। मन तो उसी ओर (गलत दिशा) ही रहता है। इन सबको अनुभूति की गहराई में जाने पर प्राप्त किया जाता है। इसका अभाव होने के कारण आज का व्यक्ति अनुभवहीन होता जा रहा है। वह इन सबको चाहता भी नहीं है। इसलिए हमारा कहना है - जो दूसरा कर रहा है, मुझे भी करना उतने ही समय में ये प्रतिज्ञा मत लेओ। यह प्रतिज्ञा कोई काम की नहीं। ज्ञान प्रतिज्ञा जानने की प्रति प्रतिज्ञा। ज्ञान ज्ञान के प्रति सम्मुख हो जाता है

तो वह प्रतिज्ञा है। दूसरा कुछ भी दिखेगा नहीं।

परोक्ष ज्ञान पर के प्रति ही ध्यान ले जाता है जब कि प्रत्यक्ष का मतलब अपने प्रति सावधानी रखो। न्यायालय में न्यायाधीश महोदय होते हैं वे पहले गवाही देने वाले गवाह को बुलाते हैं। जो उस घटना के समय उपस्थित हो अथवा प्रत्यक्षदृष्टा हो, सुना हो या ध्यान में हो उसके बिना आगे बढ़ नहीं सकते हैं। पक्ष - प्रतिपक्ष दोनों को खड़ा कर देंगे। एक कहता है हमने देखा था - हमने नहीं देखा था। बस यहीं गाड़ी अटक गयी।

उसको यही सिखाया जाता है, इसी के माध्यम से वह Last (अंत) तक पहुँचेगा। हमने एक बार पुछा - अन्यथा न लें। जिस भी घटना को सिद्ध करना है उस स्थान अथवा उस वस्तु तक पहले पहुँचकर सिद्ध करें तो दिन वहाँ बाद में पहुँच पाते हैं। शोध कार्य में भी जिसके बारे में शोध कर रहे हैं वह कहाँ रहता है, क्या करता है, बचपन में कैसे रहता था आदि - आदि जहाँ वह रहा उस स्थान आदि पर, उस काल आदि के बारे में जानने की आवश्यकता है।

इसके लिए निर्देशक की क्या आवश्यकता है, वाले निर्देशक भी यही कहता है। यह शोध कार्य में निर्देशक की आवश्यकता कब से शुरु हुयी। यह भारतीय शोध नहीं - विदेशी शोध हो

सकता है।

शोध के लिए कभी भी प्रमाण पत्र नहीं दिया जाता है। शोध में तो आपको सिद्ध करके बताना है। आपलोगों के लिए नई चीज हो सकती है पर शोध के लिए किसी प्रमाणपत्र की जरूरत नहीं होती। मेरे पास भी आते हैं उसमें लिखा होता है, मैं प्रमाणित करता हूँ। करती हूँ.... ये सब रटी हुयी पंक्तियाँ है। "आप लोग हर क्षेत्र में अनुभव को तलाश करो अन्यथा प्रारम्भ किया हुआ भी अधूरा होगा।

मैं अध्यात्म के विषय में भी यही सोचता हूँ। पढ़ने-सुनने-सुनाने की बजाय हम अब देखना प्रारम्भ कर दें। आत्मा का देखना स्वभाव भी है। दूसरे को नहीं देखना-स्व को ही देखना है। अब इसी शोध में लग जाएं। पुस्तकालय में जाएं और ढूंढना प्रारम्भ कर दें ऐसा नहीं है। पढ़ाते समय पठन-पाठन की गहराई में जो कुछ भी हाथ लगता है, शोध के रूप में हाथ आ जाता है।

न्यायालयों में भी सन्दर्भ ग्रन्थ हाथ में रखते हैं। जो पहले निर्णय के रूप में दिये जाते हैं उनको न्यायाधीश अपने काम में ले लेते हैं किन्तु अपना मंथन अवश्य दिखाई देता है। अध्यात्म में भी दूसरे का अनुभव है किन्तु अपनी पद्धति से वह अनुभव होना चाहिए, जिसके बल पर हम निष्कर्ष तक

पहुँच सकते है।

यही बात हमने उदाहरण के साथ आप लोगो को दिया है। खिचड़ी का उदाहरण तो पहले भी दिया है पर छेद के साथ प्रथम बार रखा है। अक्सर में भी पेट में छेद हो जाते है फिर एक्सरे अथवा M.R.I. कराते हो। उदाहरण की ओर नही देख पा रहे हो।

ज्यादा पानी होगा तो गिली हो जायेगी और कम पानी होगा तो खिचड़ी जल जायेगी। यें सारी दुनिया की हालत है। वर्तमान युग के परिणाम निकल रहे है। इसलिए ऐसा उदाहरण दिया, साहस के साथ यह काम किया।

अहिंसा परमो धर्म की जय।

8-5-17 "बहिर्मुखी से अन्तर्मुखी बनाता-योग-प्राणायाम" प्रातः 9.30

आप लोग आँखो से और अपने कानो से बाहरी वस्तुओं को ग्रहण करते है। इसमें आपका अभ्यास निरन्तर होता रहता है। इतनी कुशलता प्राप्त है - अभ्यस्त है बताने की आवश्यकता नहीं है। अब इन इन्द्रियों के उपयोग को अपने उपयोग की ओर लाए। अध्यात्म में किसी को प्रशिक्षण देना नहीं होता केवल परिवर्तन कराया जाता है। कैसे?

हम बाहर देख रहें है उसे भीतर देखें, बाहर का सुन रहे है भीतर का सुने इसी तरह अन्य इन्द्रियों में भी

परिवर्तन करें।

संतो ने इसे योगाभ्यास अथवा प्राणायाम कहा है। प्राण दस है उनका आयाम अर्थात पुरुषार्थ। ये दस प्राण आप सब के पास है इसमें तो डिक्टेशन नम्बर भी बढ़ गये फिर कैसे करें। एक व्यक्ति योगा में भ्रामरी प्राणायाम करता है। भ्रामरी से मतलब भ्रम से नहीं अपितु भ्रमर (भंवरे) से है।

जैसे भ्रमर फूलों पर मंडराते हुए गुनगुनाहट की ध्वनि करता रहता है उस प्राणायाम का नाम भ्रामरी प्राणायाम है। बाहरी आवाज को बंद कर दें तो धीमी आवाज भी पर्याप्त है सुनने में तेज लगेगी। घटाने-बढ़ाने की जरूरत ही नहीं। बस कानों को बाहर की आवाज से पहले बंद करना पहला अनुबंध है। [ऐ-कल की कहा था - नये यात्री आते हैं कोटो-रीस ही भरना चाहे फिर पढ़ने-सुनने की आवश्यकता ही क्या है]

तो दोनों कान बंद कर दो। बंद ऐसे करना है कि बाहरी आवाज (ध्वनि) न आये। इतना ही पर्याप्त नहीं। अब धीरे से हुंकार या ओमकार का नाद करो। उस समय बहुत धीरे भी निकालोगे तो भी बहुत मोटे स्वर में सुनाई देगा। उस आवाज को सुनने से कानों में दर्द नहीं दर्द हरण की क्षमता है।

ध्यान के समय भी नाद का

महत्त्व है - मेघनाद, सागरनाद, सिन्धु नाद आदि नाद होते हैं। प्रतिध्वनि से युक्त शब्द नाद कहलाता है। वह नाद संगीत का भी काम करता है।

मन की आकुलता को भी शांत करता है। स्वामित होकर यह काम किया जाता है। वह ध्वनि यदि जब अच्छी न लगने लगे तो कोई भी पाठ धीरे-धीरे करना प्रारम्भ कर दें जैसे - स्वयंभुवा भूत हितेन श्रुतले ..... । वह ध्वनि भी तेज लगेगी। जब कानो से सुनोगे तो डरे ये तो बहुत धीरे है। आत्मा के पास अनन्त शक्ति है। सिद्धान्त ग्रन्थों में भी आता है कि शब्द के पास ऐसी क्षमता की दूसरे ही समय मे वह पुरे ब्रह्माण्ड में व्याप्त हो जाता है। प्रथम समय में शब्द अणुरूप दूसरे समय में स्कंध होकर पुरे लोक में व्याप्त होने की शक्ति रखता है।

विज्ञान इसे स्वीकार नहीं कर पा रहा है। वह प्रकाश के पास गतिमान शक्ति मानता है जब की शब्द के पास गतिमान शक्ति विद्यमान है प्रकाश में वह नहीं। अब आपने वह ध्वनि (नाद) कि जिससे सरदर्द ठिक होने वाला है। इसमें घबराहट भी नहीं होती। इससे आधि अर्थात मनोगत रोग, व्याधि - शारिरिक बिमारी उपाधि - भौतिक गतरोग सभी शांत हो जाते हैं। इन तीनों को समझ लो।

आध्यात्मिक योग - प्राणायाम से बहिर्मुखी

वृत्ति को अन्तर्मुखी कर दिया जाता है। शारीरिक एवं आध्यात्मिक दोनों प्रकार के सुखों की प्राप्ति इससे हो जाती है। योगा में कल्पना के ही पर/पंखों पे उडान भरी जाती है। कल्पना के माध्यम से जहाँ- कहीं भी पहुँच जाते हैं।

कल्पनाओं के माध्यम से भी बहुत कुछ चिकित्सा कर सकते हैं करते हैं। इस प्रकार इस भ्रामरी प्राणायाम में स्वर को धीरे तो भी बहुत बड़ा सुनने को मिलता है। उसके द्वारा ~~सरदर्द~~ का सरदर्द ठीक हो जाता है। आपकी भाषा में सरदर्द को Mygrain (माइग्रेन) कहते हैं, Your ग्रेन नहीं आप अपना सरदर्द मेरे सामने क्यों रखते हो। पुनपुनरा उनको भी दर्द होता जायेगा।

प्रसन्न होने के लिए ये सब आवश्यक है। भीतरी तत्वों के अवधान न होने से ये सब पीड़ायें हो रही हैं - होती जायेगी। ध्यान के समय भी ऐसे कई निनाद किये जाते हैं। निनाद और ध्वनि में अन्तर है। निनाद में ध्वनि संगीत का रूप धारण कर लेती है जो कानों के लिए हानिकारक नहीं होती। बोलते हैं तो अच्छा नहीं लगता और उसी बात को लयात्मक (ध्वनि) के साथ बोलते हैं तो मीठी लगती है जैसे आइये ऽऽ -- एक बार और बोलिए, ऐसा सामने वाला चाहता है। श्वांस लेने एवं श्वांस छोड़ने में ही

ध्वनि का संचार हो जाता है।

आप समझने का प्रयास करो। इसके माध्यम से बड़ी-बड़ी चिकित्सा भी संभव है। दूसरे की नहीं अपनी करना है। बताने का योगदान तो कर सकते हैं, ठीक करने का नहीं। मनोयोग से इस प्रकार की स्वर तरंगे उत्पन्न करने से संभव है। आप पर असर कर सकती है करें यह नियम नहीं। योगाभ्यास के द्वारा इस वैचित्र्य को पा सकते हैं।

इन्द्रिय व्यापार से वंचित कर देती है। बोलना बंद तो देखना भी सीमित कर दिजिए। सबसे ज्यादा पेट्रोल खर्च होता है देखने में। पेट्रोल की समस्या सरकार के सामने भी है। जब प्रतिशत लगता है आप बोलना नहीं चाहते है तो देखना भी बंद कर दो। जिसमें शक्ति लगती है वह बल माना जाता है। उस बल का अनावश्यक प्रयोग न करें। आप अनावश्यक को पहले बंद करें। आपका माथा आपका है दूसरे का नहीं। देखने से विकल्प तब होता है जब पहचान हो, पहचान नहीं तो विकल्प भी नहीं होता।

सर्प को रस्सी मानने पर कोई समस्या नहीं पर आप तो रस्सी को सर्प मानकर चल रहे हो तो समस्या ही समस्या है। दुनिया इसी को बोलते है। अहित को हित समझ लिया समस्या खड़ी हो गयी। समस्या आपकी है हमारी नहीं। भगवान रहते तो मेरी कोई बात नहीं।

इसे समझने का प्रयास करें।

हमारा पुरुषार्थ एक परिसीमा में बंधा है जो सीमित हो गया है। इस चिकित्सा काल में उठ सकते हैं। ध्यान दो अन्तर्मुखी करिये। सुनना नहीं सुनने में आ जायेगा। जैसे रेडियो में स्टेशन लगाते हो थोड़ा सा इधर-उधर होते ही दूसरा स्टेशन पकड़ लेता है। आप भी ज्ञेय से अपने चेनल को हटाकर ज्ञान की ओर ले आये। आंखे बंद कर दो सुनने में आ जायेगा।

लाइट बंद। आंखे बंद। अब निकट आ जाइये - लाभ मिलेगा। ज्यादा तो नहीं कहना चाहता वैसे ही गर्मी तेज है। हाँ आंखो और कानों को बंद कर देंगे गर्मी क्या लू भी शान्त हो जायेगी। अपने आप ही आप 9 See you में आ जायेंगे। आप हमें और हम आपको समझ लेंगे इसका मतलब होता है 9 See You.

अहिंसा परमो धर्मो की जय। नैं

Note -

- वर्तमान में पान की दुकान से भी ज्यादा अस्पताल हो गये हैं। आप कहते हो आशीर्वाद दे दो - कैसे दें?
- मृत्यु होने के बाद भी दो लाख का Bill बना दिया और ढाई लाख का ऑपरेशन अन्दर सामान कितने का लगाया कुछ पता नहीं। चिकित्सा व्यवसाय हो गयी।

10-5-17 "अधूरे में पूर्णता का भ्रम" प्रातः 9.20

हम लोग अपनी तुच्छ बुद्धि से हमेशा-हमेशा सोचते रहते हैं, उलझनों को सुलझाने में अपनी बुद्धि का प्रयोग करते रहते हैं किन्तु ये नहीं समझते की हमारी बुद्धि तुच्छ बुद्धि है। इसको आगम की भाषा में परोक्ष कहा गया है, प्रत्यक्ष नहीं है। जिसको प्रत्यक्ष बोध होता है वह हमेशा सोचता है कि ये कितने अज्ञानी हैं।

इसमें निर्णय लेने की कोई बात ही नहीं ये सही को गलत और गलत को सही स्वीकारने लगते हैं। इसमें वो कर भी क्या कर सकते हैं। उनके पास तो उपाय था सो उसको प्राप्त कर लिया। कोई पात्र ऐसा हो जो उनके उस संकेत को समझ लेता है तो काम हो जाता है। हमारी समझ और उनकी समझ में रात-दिन का अन्तर है, जमीन-आसमान का अन्तर है यूं कहूं कि उनकी दृष्टि सम्यक् और हमारी दृष्टि मिथ्या है अर्थात इतना अन्तर है कि वे स्वभाव निष्ठ हैं, हम विभाव निष्ठ हैं।

इसलिए मोक्ष मार्ग में आज्ञा सम्यक्त्व का बहुत महत्व है। अच्छे-अच्छे श्रुतकेवली भी वे भी उस आज्ञा को शिरोधार्य करते हैं। हम अपनी बुद्धि लेकर कुछ करना चाहे, मूर्खता का परिचय दे रहे हैं। उस आज्ञा को जब तक शिरोधार्य नहीं करेंगे तब तक मोक्षमार्ग की ओर आने का सुअवसर नहीं मिल

पायेगा। ये जो भी है सबकुछ गलाकर भूमिका प्रारम्भ होती है।

आपके पास कितना भी ज्ञान क्यों न हो, वह अधुरा ही है। अधुरा को पूर्ण मानना गलत है। आप माने या न माने दृष्टि से भी अधुरा है। विचार की दृष्टि से भी अधुरा है। ज्ञान का प्रयोग कर रहे हैं वहाँ तक पूर्ण नहीं हो पाता। सहज रूप में जीवन हो जाता है तब ज्ञान पूर्ण (पुरा) हो पाता है। विचार करके करते हैं तो अधुरा ही है। आगम के आधार पर ही सही कर सकते हैं, सही को हमने स्वीकारा है।

यह परिभाति मोक्षमार्ग में आपकी शुरुआत होना दर्शाती है। यहाँ तो मान को पानी-पानी होना पड़ता है जब की पाणी को तो मान प्रिय है। तब कुछ छोड़ सकते है पर मान नहीं छोड़ सकते। रावण मानी था राम निरभिमानी थे। मान के साथ कोई सम्बन्ध (ताल्लुक) नहीं रखो इसलिए हमेशा - हमेशा सन्मार्गी के सामने यही भावना रखो।

एक स्थान पर परमात्म उद्देश में कहा गया - वसुदेव कहते है - हे भगवन्! हमने अज्ञान दशा में कुछ ऐसे बीज बोये हैं जो फल देने वाले है, विषतरु को ही जनम देने वाले हैं। हे भगवन्! मैं उन फलों को नहीं खाना चाहता हूँ, कोई उपाय बता दिजिए और ऐसे भी अच्छे पुण्य के कार्य

मैंने किये हैं, इनके भी उदय में मादकता हो सकती है, इनसे बचाने का काम भी आपको करना है। हे भगवन्! ये दोनों काम आप किजिए।

पंचेन्द्रिय के विषय मिलेंगे, आप ऐसी भावना करेंगे तो छुट जायेंगे। मानी कहता है कोई छुटे तो छुटे हम इन विषयों को नहीं छोड़ सकते। किन्तु यहाँ उस ओर न जाना पड़े ऐसी लघुता के साथ प्रार्थना हो रही है। इधर रावण भयानक जंगल में भी विद्या-प्राप्ति हेतु तप करता है। इतनी एकाग्रता है जिसके बल पर विद्या सिद्ध हो जाती है। ये सब मैं इसलिए कहना चाहता हूँ कि आज्ञा को इसलिए आवश्यक माना। हम अधुरे ज्ञान वाले हैं, इसी आज्ञा से ही महान समुद्र से पार होने वाले हैं।

अब एक उदाहरण से समझिये कि हमारा ज्ञान कैसा है? मिश्री आप जानते हैं - मीठी है, कड़वी तो हो ही नहीं सकती। कई बार अनुभव किया है। घृत (घी) है - सारी दुनिया जानती है। पोषक है, सुस्वादु है, शक्तिवर्धक है, नेत्र ज्योति प्रदान करने वाला है, तामसिकता को दूर करने वाला है इस प्रकार ये सब उसके गुण है। दोनों का संयोग हो तो फिर क्या कहना, दुगना हो जायेगा।

एक तीसरी वस्तु है - मधु। अभी मैं भक्ष्याभक्ष्य का विवेचन नहीं कर रहा हूँ। मधु भी

मीठा - स्वादिष्ट होता है। डॉक्टर भी मिश्री इन दोनों के साथ कर दिया। गुणवत्ता बढ़ गयी। शास्त्र भी यही कहता है। लेकिन ये ध्यान रखो - समान मात्रा में तीनों मिला दें तो वह विष का निर्माण हो जाता है।

अधुरा ज्ञान को आप अच्छा मानते हैं लेकिन इस उदाहरण से आपने देख लिया विष का निर्माण होता है। इसलिए हमारा बोध अधुरा है तो बिना आधार निर्णय न लेना। आधार जो प्रत्यक्षज्ञानियों ने निर्णय दिये उसी को लेकर करें। यह आगम का / सर्वज्ञ के वचनों का निर्णय है, मेरा अपना निर्णय नहीं। इस निर्णय को शिरोधार्य करो। रावण कहता है - आप सभी मुझे शिरोधार्य करो मेरे वचनों को मानें। आपको कोई कष्ट नहीं होने दूंगा, हम आपको पुरी नगरी दे देंगे।

आपकी सुरक्षा के पुरे प्रबंध हैं बस आपको यह अनुबंध स्वीकारना होगा। आप सभी भी इसी तरह प्रत्येक अनुबंध को स्वीकारते हैं। संसार का बड़ा वैचित्र्य है। इस उदाहरण को याद रखना। तुच्छ बुद्धि / अधुरा ज्ञान से जो बलवर्धक है, पौष्टिक है वह भी विष हो सकता है। समानता की बात है। हमारे आचार्यों ने तो बहुत पहले यह कह दिया था - विज्ञान के सामने चुनौती है। आचार्य उमास्वामी महाराज ने बंध-संबंध के विषय में तत्त्वार्थ सूत्र

में एक सूत्र दिया - "गुण साम्ये सदृशानाम्"। विज्ञान जो कहता है वह जाने पर आचार्य उमास्वामी कहते हैं गुणों के साम्य में बंध नहीं होता यदि होगा तो विषम का ही निर्माण होता है।

आगम के बल पर सूक्ष्म से सूक्ष्म विषय को भी कुछ ही समय (क्षणों) में सिद्ध कर सकते हैं। परोक्ष ज्ञान के भी तज्ज्ञ (विशेष जानकार) हो सकते हैं। इतना ही कहना चाहता हूँ हम अपने आपको अबुरा मानें - संकल्प पूरा होने का ही।

अहिंसा परमो धर्म की जय।

11-5-17 "फटने से अच्छा फाड़ना" प्रातः 9.20

एक उदाहरण है कि वस्तु को किस ढंग से जीवन में उपयोग लाया जा सकता है। उपयोग में लाना मुख्य उद्देश्य है। भिन्न-भिन्न वस्तुओं के लिए उद्देश्य भी भिन्न-भिन्न हो सकते हैं। उद्देश्य से ही हम वस्तु को लाभप्रद बना सकते हैं अन्यथा वही हानिकारक भी हो जाती है। वह वस्तु अपने स्वरूप से भ्रष्ट भी हो सकती है। अतः ऐसे में वस्तु का उपयोग बहुत दिमाग से करना पड़ता है।

दिमाग आपके पास है या नहीं थोड़ा टटोल कर देख लो। स्पर्श कर लो। यह दिमाग नहीं माथा है। अब दिमाग से काम करें। मान लो बच्चे को भूख लग रही है। कुछ खिलाना-पिलाना है। अभी भोजन तो

करता नहीं, दूध पर ही चल रहा है, तो आप क्या करते है? दूध में पानी मिलाकर देते हैं।

इससे गाढ़ापन कम होकर उसमें तरलता आ जायेगी। दूसरा बड़ा बच्चा है, उसका लीवर आदि ठीक है। आंगोपांग का विकास हो चुका है, उसको गाढ़ा करके भी देते हैं। दिमाग से देते हो या नहीं। बच्चों को देखकर दिमाग से करते हैं। अब उस दूध को परिवर्तित करना है। किसी-किसी को किसी भी प्रकार से दूध अनुकूल नहीं है तो क्या करते हैं? दूध को फाड़ दो - धोती जैसे नहीं। अब उस दूध को नींबू या फिटकरी से आप फाड़ देते हैं।

दिमाग से फाड़ते हैं। अथवा मट्ठे की एक चम्मच डाल दी तो मट्ठे से जमेगा और नींबू या फिटकरी से फटेगा। फाड़ने के बाद भी वह अपने गुण धर्म साथ रखता है। बुद्धि को लेकर चलता है। फाड़ने से उसके दो भाग हो जाते हैं। पानी अपने ढंग से काम आता है और छेना अपने ढंग से काम आता है। फाड़ना और फट जाना इन दोनों में अन्तर है। दिमाग से अलग-अलग किया या वैसे ही अलग-अलग हो गये। आपने दिमाग से फाड़ा तो उसका पानी भी काम में लेते हैं और छेना भी, दो व्यक्ति

के वह वस्तु काम आती है।

अपनी कुशलता से, बुद्धि की कुशलता से यह कार्य होता है। सरकार भी पीछे पड़ गयी है। 70 साल में समझ में नहीं आया, अब आँखे खुल गयी। आँखे खुल जाना अच्छा है। एक में फाड़ दिया, दूसरे में फट गया। फटता है तब जब विपरित तत्त्व घोल देते हैं। नमक की डली दूध में जाते ही दूध फट जायेगा। अब वह किसी के काम का नहीं। न ही एव के न ही पर के काम का रहा। कुत्ते इत्यादि भी उसे सुंघेगा तो पहचान जायेगा कि ये फटा है या फाड़ दिया।

नमक की डली उस वस्तु की उपयोगिता को समाप्त करने वाली है। हाँ, यदि आपके पास यदि मट्ठा है तो उसमें नमक की डली डालियेगा। वस्तु को द्रव्य-क्षेत्र-काल-भाव की अपेक्षा काम में लेते हैं तो कम खर्चे में बहुत कुछ लाभ ले सकते है। यह संक्षेप में हमने रखा कि आप कैसे वस्तु को विकृत कर सकते हैं और किधर से कैसे संस्कृत कर सकते है?

संस्कृत करने की दिशा में आगे बढ़ना है। एक के भी यह काम आये इस प्रकार हमेशा-हमेशा सोचते रहे तो अधर्म को रोक धर्म को आगे बढ़ा सकते हैं। धर्म के पथ पर स्वंय भी

चलते है तथा आपके एक संकेत से हजारों कोलगाना नहीं वे भी लग जाते हैं। पशु भी उस गंगा में स्नान कर धन्य हो जाते हैं।

आप भले ही भूल जायें, वे याद रखते हैं कि फलाने व्यक्ति ने मेरे लिए लाभ दिया था। पहले आप लोगो को शिक्षा इसी उद्देश्य से दी जाती थी, वर्तमान शिक्षा प्रणाली इन सबसे विपरित है। क्या करना चाहते है- समझ में नहीं आ रहा है। प्रयोजनहीन कुछ भी नहीं करना चाहिए। निष्प्रयोजन इतना आगे बढ़ चुके हैं कि अब लौटने का विधान - कह नहीं सकता।

कभी - कभी लौटना बहुत ही अरुचिकर होता है। उस परिस्थिति में 10 कदम भी ज्यादा लगते है। मान लो आप गलत रास्ते में चले गये और आप दो किमी के चक्कर में गये वह बड़ा रास्ता बन गया, उस रास्ते में 5 किमी. आगे चले गये। अब तो सीधे ही जाना है। लौटना है वहाँ पर बहुत अरुचिकर होता है। ऐसी भी परिस्थायें जिनसे गुजरना पड़ता है, लौटना नहीं होता। जैसे पहली से 16 वीं तक, लौटने का प्रावधान ही नहीं है। पहली से दूसरी, दूसरी से तीसरी अब तीसरी से दूसरी या पहली नहीं। पर आज यह हो रहा है।

शिक्षा-पद्धति ऐसी होती है, पाठ्यक्रम

में जो था उससे भी पास नहीं हो रहा है, हॉन्टर के पास अर्थात पार चला गया।

सुनते हैं अब लौटना प्रारम्भ हो गया। श्री गणेश करना होगा। बहुत अरबरता है किन्तु पुनः करना है। फैल होने के उपरान्त चयनीत नहीं पुनः पुनः आमुख - लिखित परीक्षा देनी होती है। कुछ ऐसी परीक्षा जो एक वर्ष में तीनबार देनी पड़ती है - ये कितना अखरता है। पर वह पौचला है और एक बार देख लूं - २, ये परीक्षायें नहीं।

कुछ योग्यता हासिल करने का प्रयास करो। धीरे-धीरे युग इस ओर आ रहा है। बच्चो की वह बुद्धि फट न जाये इससे पूर्व ही उपाय फाड़ दो। उसकी बुद्धि फटने के पूर्व माता-पिता को भी जागरूक होना होगा। हमने प्रशिक्षण नहीं दिया दिशा दी थी, एक बार दिशा देने पर बहुत दिन तक कार्य करना रहता है। आप सोच-विचारकर करें, जिससे अखरना न पड़े।

वह चलने वाला याद रखेगा कि मैं कहाँ से इस पगडंडी में मुड़ा हूँ। इसे भर याद रखो पथ के काम आयेगा फिर आप सही रास्ते में लग सकेंगे, उसे कोई भी बताने वाला नहीं हैं। आपके बच्चे अन्धेरा समझे उससे पहले आपको समझना होगा। फाड़ना एवं फटना का अन्तर समझना होगा।

सजातीय एवं विजातीय के बारे में बुद्धि का प्रयोग सही-सही करीये।
नहीं आता तो पुछले पुछने मे बाधा नहीं, पुछने से अनुभव बढ़ जाता है। आज इन सबसे परे (दूर) हो रहे हैं। आपकी कुशलता, योग्यता, प्रयोजन सिद्ध करने में बुद्धि नहीं तो परिश्रम - वित्त सभी का सही उपयोग नहीं होगा एवं दूसरों को निर्देश देना खतरनाक सिद्ध होगे।

निराशता ही हाथ लगेगी। इस अभिशाप से सभी को बचना है, बस इतना ही कहना चाहता हूँ।

अहिंसा परमो धर्म की जय। ॐ

MPSC के चैयरमेन व्यवहार जी के साथ चर्चा -

- उन्होने आ० श्री से प्रभावित होकर हिन्दी पर काम किया। प्रशासन परीक्षा में हिन्दी मे निबन्ध लिखना अनिवार्य होगा। सफल प्रयास रहा।
- भारत में विज्ञान था ही नहीं यह दुर्धारणा हटा दो, धर्मपाल की 10 पुस्तकों से इतिहास पढ़ो ज्ञात हो जायेगा कितना समृद्ध विज्ञान था।
- दिखाने पर बताने की एवं खिलाने पर दिखाने एवं बताने की आवश्यकता नहीं रहती। प्रयोग करो।
- इस पुस्तक का एक - एक पेज तीव्र से तीव्रतर आघात पहुँचाने वाला है। [शेष एक प्रवचन आगे]

12-5-17 "नियम से आती सुन्दरता" प्रातः 9.20

भारतीय संस्कृति के अनुसार एक मास में दो पक्ष होते हैं। आप लोग विदेशी भाषा तथा विदेशी शिक्षा पद्धति से प्रभावित हैं। उनके यहाँ पक्ष होते ही नहीं हैं। आप में से ज्यादातर यहाँ की शिक्षा प्राप्त कर चुके हैं अथवा करने जा रहे हैं, वहाँ पर पक्ष का विभाजन नहीं, यहाँ दो पक्ष का विभाजन है, वह कैसे?

भारत में प्रत्येक मास में दो पक्ष एक शुक्ल पक्ष और दूसरा कृष्ण पक्ष होते हैं, उनके पंचांग में ये नहीं है। दूसरी बात है कि शुक्ल पक्ष का अंतिम दिन पूर्णिमा कहलाता है। अमावस्या के दूसरे दिन से यह शुक्ल पक्ष प्रारम्भ हो जाता है। इसे शुक्ल पक्ष क्यों कहा जाता है? क्यों की इस पक्ष में पहले दिन से ही चन्द्रमा की कलायें बढ़ती जाती है। एकम् के दिन चन्द्रमा को हम आँखो से देख नहीं सकते इतनी पतली लकीर जैसा रहता है। दूज का चन्द्रमा कहीं-कहीं दिख जाता है उसे देखकर ईद का त्यौहार सब जगह मना सकते है।

इस तरह धीरे-धीरे वृद्धि को प्राप्त होती कलायें पूर्णिमा को पूर्ण हो जाती हैं। पूर्णिमा को लाँघने पर कृष्ण पक्ष प्रारम्भ हो जाता है, जिसमें एक-एक कला बढ़ती जाती है। वे कलायें

पहले बढ़ती थी अब घटती जा रही है। हमने मन में यह विचार किया की यह बढ़न-बढ़न कैसे है?

घटती है तो उसका आकार अलग प्रकार से बढ़ता है, यह गौर करने से ही ज्ञात हो सकता है पढ़ने मात्र से समझ में नहीं आ सकता है। जो बढ़ रहा था वह घटता- घटता अमावस्या के दिन एक भी कला उसकी जीवित नहीं रहती - अमावस्या बोलते हैं उसको। कला को धारण करने वाले 'कलाधर' चन्द्रमा की एक भी कला नहीं रहती। इस उदाहरण के माध्यम से हम यह बताना चाहते हैं हमारी परिस्थितियाँ भी कुछ ऐसी ही रहती हैं।

वह चन्द्रमा एक बार दर्जी के पास गया। आपके दिमाग में पाठ आ गया होगा। फिर भी पढ़ते समय न आया हो। चन्द्रमा कहता है - हमारे लिए ऐसा वस्त्र का निर्माण करके देओ जिससे हमारी शोभा और बढ़ जाये। जब उसका नाप-तौल लिया उसी अनुसार दर्जी ने बनाकर दे दिया। अब धीरे - धीरे वह हिला होता जा रहा है क्यों की चन्द्रमा की एक - एक कला समाप्त होती जा रही है।

अब वह अंगरखा क्या बोलते हैं आप लोग - कुर्ता। (शर्ट) शर्ट तो इंगलिश चाहिए आपको। अंगः रक्षति इति अंगरखा - दक्षिण में

तो इसी नाम से बोलते हैं।

उसने शिकायत की कि आपने यह कैसा बनाकर दे दिया। इसके बाद शुक्ल पक्ष आ गया अब वह बढ़ता-बढ़ता गया। दर्जी कहता है मुझे समझ में आ गया। इसका आकार ज्यों का त्यों रखा बगल में नाड़ियों की व्यवस्था कर दी जैसे छोटे बच्चे को झबला पहनाते हैं। जितना चाहो उतना टाइट कर लो। गर्मी के दिन में अलग और सर्दी के दिन में अलग, सब व्यवस्था रहती है।

दर्जी कहता है- बिल्कुल ठीक हो जायेगा हमने बना दिया है। नाड़ी बना दी है। नाड़ी आपने देखा होगा बगल में रहती रहती है लम्बी होती है तो बगल में गांठ बांध कर व्यवस्थित कर दो। राजस्थान में बगल बंदी बोलते हैं। बूढ़ों के लिए भी कोट आदि में होती है अच्छी भी लगती है। हमने ये उदाहरण इसलिए नहीं दिया की समय पूरा करना है। अब हम स्पष्ट करना चाहते हैं।

आप सोचते हैं हमने व्रत ले रखे हैं उनको व्यवस्थित कैसे करें। तो दो प्रकार के व्रत हैं यम जो जीवन पर्यन्त के लिए होते हैं और नियम बगलबंदी की भांति अपने व्रतों की सुरक्षा के लिए नियम से रखते हैं। आचार्यों ने इस प्रकार की व्यवस्था दी है। नियमों से जो समय की सीमा के साथ

लेते हैं, उनसे और समृद्ध बन सकता है। वह व्यक्ति जो नियमों का पालन करता है चन्द्रमा की भांति पोषाक का अच्छे ढंग से उपयोग कर सकता है।

जिस प्रकार आप वस्त्र पहनाव के साथ सुन्दरता चाहते हैं, उसी प्रकार व्रतों की सुन्दरता के लिए यम - नियम चाहिए। बदलावट के बिना चलता है तो वैसी ही दशा हो जाती है जैसी चन्द्रमा की। उदाहरण कैसा लगा? [ताली] बहुत अच्छा। अच्छा कहो बहुत विशेषण लगाना जरूरी नहीं। जिस नियम के माध्यम से व्रत पुष्ट होता है उसके लिए छोटे - छोटे नियम हेतु माता - पिता प्रेरित करते हैं, कालान्तर में महाव्रतों के धारण करने की क्षमता आ जाती है।

ये केवल बातें नहीं हैं, प्रयोग करना पड़ता है। अच्छे - अच्छे व्यक्ति भी अभ्यास नहीं होने पर भी प्रयोग करते जाते हैं और उस प्रयोग से खिलाड़ी बन जाते हैं। हमारा इतना ही पर्याप्त है। समय भी हो गया। हमने देखा आज 5 मिनिट ही बचा है क्या दिया जाये? बस ये उदाहरण सब लोगों के सामने रख दिया जो सभी के लिए उपयोगी सिद्ध होगा, इन्हीं भावनाओं के साथ।

अहिंसा परमो धर्म की जय। नैं

शीर्षांश :-

० भाई कहने में अपनत्व है, चचेरा भाई, ममेरा भाई, (कजन) इन सबमें दूरीयाँ बढ़ गयी है, स्थिति अब पहले जैसा प्यार नहीं रहा।

० लक्ष्य को छुना और लक्ष्य को भेदने में अन्तर है, हमें लक्ष्य छुने के साथ भेदना भी है।

० आरुणी → पहले किसान फसल आने पर बीज को सुरक्षित रखता है। वह उसे हाथ भी नहीं लगे एवं खराब न हो इसलिए बण्डा में नीमपत्ती-मिट्टी आदि से व्यवस्थित रखता है जब आषाढ़ माह आता है उसी बीज से नई फसल बोयेगा है, ठीक शिक्षा-पद्धति में भी बच्चे उस बण्डा में रखे बीज की तरह है हमें उसे सुरक्षित रखकर आगे की पीढ़ी के लिए संस्कारित करना होगा तभी हमारी संस्कृति बच पायेगी।

० मूकमाटी में एक जगह लिखा- पथ पर न चलने से घास-फुस उग आती है साथ ही चतुर लोग उस पथ को छोड़ कर अन्य नया ही पथ शुरु कर देते है इसलिए जो आचार्यों का पथ है उस पर चलते रहो धीरे ही सही आगे बढ़ते रहो।

० त्योहार जी- बिना बताये गुप्त रूप से दर्शन हेतु आये नहीं तो प्रोटोकॉल के अनुसार पुलिस प्रशासन आदि सभी आ जाते। आपसे खुलकर चर्चा नहीं हो पाती।

13-5-17 "ओशो फैसायें शाश्वत-प्रकाश" प्रातः 9.20

आप लोग प्रतिदिन सूर्यनारायण के आलोक को देखते हैं साक्षात् अपनी आँखों से। अब हम उसी आलोक को भिन्न रूप से किन्तु भिन्न-भिन्न स्थलों पर देखते हैं तो उसमें क्या अनुभव होता है। अब ऐसा किया जा सकता है सूर्य सामने है अपने घर में उसको प्रवेश दे दिया दरवाजे से या अन्य कोई स्थान से। आपके घर में साक्षात् सूर्यनारायण का प्रकाश आ गया।

जहाँ पर सूर्यनारायण का प्रकाश आ गया, वहाँ पर एक दर्पण की व्यवस्था की है, उस दर्पण से वह प्रकाश परावर्तन होकर और आगे तक चला गया। उस व्यवस्था के कारण जो प्रकाश है उसे छाया / प्रतिबिम्ब ही कहेंगे। साक्षात् आलोक तो नहीं कह सकते किन्तु पहचानने में कठिनाई हो सकती है कि जो चकाचौंध सूर्य बिम्ब को देखने से प्राप्त होती है वही यहां भी दिख रही है पर महसूस क्या होता है।

वह चकाचौंध सूर्यनारायण से साक्षात् है, Direct है - यह Indirect है, वह प्रत्यक्ष है जबकि यह परोक्ष है। इतना अन्तर होता है इन दोनों में। आपको पैसा दिया गया और आपने दूसरी तरफ से पैसा और पाया किन्तु वह कर्ज के रूप में पाया। दोनों एक घड़ी में पाया पर एक मूलधन है जबकि

दूसरा कर्ज है।

आलोक की व्यवस्था हो गयी, इसके उपरान्त उसी प्रकार उस आलोक को दूसरे स्थान पर भी ले जा सकते हैं। इस प्रकार अपनी कुशलता से जहाँ सूर्य का प्रकाश सीधा प्रविष्ट नहीं होता उसे परावर्तन कर ले जा सकते हैं। ये तो कुशलता की बात है। योग्यता हो तो भिन्न-भिन्न आधार पर परिवर्तन होता जाता है। ठिक इसी प्रकार भगवान का साक्षात् दर्शन नहीं है। इतनी दूर इतना काल व्यतीत होने के बाद भी वह पढ़ने-सुनने में आता है उसको भी प्रत्यक्षवत् मानकर भरोसा कर स्वीकारते हैं तो प्रत्यक्ष में जो फल मिलने वाला था परोक्ष में भी उस फल को प्राप्त कर सकते हैं।

मनुष्य की क्या बात है, तिर्यञ्च भी इसका लाभ ले सकते हैं। तिर्यञ्च पर्याय में शरीर की अपेक्षा भले ही निम्न कोटी प्राप्त हो आत्मा के बल पर तो उसके पास भी वह शक्ति है, आपको जो सम्यग्दर्शन प्राप्त होता है उसको भी वह प्राप्त कर लेता है। न केवल सम्यग्दर्शन ही प्राप्त अपितु संयम को भी ग्रहण कर लेता है। सुन रहे हैं आप लोग। हंव।

आपने ऐसा मान रखा हो कि हमने ही ठेका ले रखा है। मात्र मनुष्य ही (संयम/सम्यग्दर्शन) धारण करने का

ठेका लेसका है- यह गलत धारणा है। ठेके का मतलब जानते हो ?

जिस भाव में बेचेगा - उसी में बेचेंगे। ठेका लिया भी जाता है- दिया भी जाता है। परन्तु लिया बाद में जाता पहले दिया जाता। मात्र मनुष्य को ही सम्यग्दर्शन ऐसा नहीं है। यह साक्षात् वाले हैं व परम्परा वाले हैं पर चेतना की उस कला को उठाकर वह विजातीय भी इतना बड़ा ठेका ले सकता है। आपको भी विस्मय हो सकता है।

आप तो रह गये अपती, वह व्रती बन गया। उसके मन के अध्ययन का प्रयास तो करीये। आपसे ऊपर रहकर खेल रहा है। जीतने की/आगे की बात कर रहा है- करता है। तब ज्ञात होता है प्रकारान्तरों से भिन्न व्यवस्था मिलती है, उसका उपयोग हम किस प्रकार करते हैं। हमारे लोग हैं कि अभिमान-आलस्य में आ जाते हैं। सोचते हैं- थे तो देख लेंगे बाद में। मनुष्य पर्याय में - देख लेंगे बाद में। जब ठेका ही समाप्त हो जाता है तो बाद में क्या देखोगे। इसलिए इस उदाहरण से आप समझे।

परोक्ष ज्ञान होते हुये भी यह प्रकरण इस धरती पर था किन्तु वह निकल चुका है। बाजार-हाट उठ गया है। समाप्त नहीं हुआ रह गया है। उठकर अन्यत्र चला गया। जाकर देखोगे तो जो कुछ भी लेन-देन हुआ वही

देख सकोगे।

अरे! यहाँ तो बड़े-बड़े सेठ-साहुकार हैं। यही वही धरती है जहाँ लेन-देन होता था। अब ग्राहक भिन्न। मालिक भिन्न है। आगम के माध्यम से व्यवस्था करायी है। जो हाट में नहीं आये उनके लिए भी माल मिले। बहुत बड़ा उपकार किया है। इस उपकार को वही महसुस कर सकता है जिसके भीतर आस्था/श्रद्धा हो। उन्होंने दया-करुणा से भरकर यह उपकार किया।

सूर्य का अभाव होने के बाद भी 1 घण्टे तक वह सौर उर्जा काम करती है। आज ऐसा उपयोग हो रहा है जो ईंधन की कमी को भी दूर कर रहा है। आज के युग में सौर उर्जा बहुत विद्याओं में प्रयोग हो रहा है। जो कोई भी उपयोग कर सकते हैं। किन्तु ये ध्यान रखना उपयोग के पूर्व प्रयोग करना महत्वपूर्ण है। सूर्य के पास अग्नि है या नहीं यह विकल्प हो सकता है पर सूर्य के पास आलोक है उस आलोक को अग्नि के रूप में परिवर्तित कर सकते हैं।

इस विद्या से कितना ईंधन बचेगा? कितना आरम्भ कम होगा? कितनी हिंसा कम होगी। इसप्रकार ज्ञान का अद्भुत प्रयोग कर सकते हैं। आगम अथवा गुरुओं के माध्यम से जो भी सीखा उसका सौरउर्जा

के द्वारा प्रयोग कर सकते है। जो पिछड़ रहा है वह भी आगे निकल जायेगा।

कितने भी पंगत में बैठ जायें। 10 हजार भी होंगे सबको लाभ मिलेगा। कुछ गुण परिवर्तित हो सकते है। यह भी कमी के कारण। किन्तु अग्नि - अग्नि ही है सौर ऊर्जा से सीधे तथा ईंधन के रूप में परिवर्तित करने पर प्राप्त होती है। आगम के द्वारा भी उतना ही काम ले सकते हो जितना चाहते हो उतना काम ले सकते हो।

साक्षात् सब कुछ मिल जाये किन्तु श्रद्धान बीच में आवश्यक है। देखा-देखी प्रयोग नहीं हो सकता। श्रद्धान से समझ में आ जाता है। हां, प्रत्यक्ष / साक्षात् के बाद अलग प्रयोग की आवश्यकता होती है। कुछ ऊर्जा ऐसी होती है जो उत्पन्न हो जाती है तथा समय पर काम आ सकती है। वह व्यक्ति जिनसे प्रेरणा मिली जब भी मार्ग / पथ पर चलता है उनका नाम लेता है कि अमुक ने रास्ता बताया। "प्रेरणा तभी काम की है जब उसका उपयोग करते है।"

मान लो दूसरे ने उस प्रेरणा का उपयोग नहीं किया, प्रेरणा तो उसे भी मिली थी। सुनकर हम अपनी आस्था - निष्ठा से काम करें तो काफी लाभ उठा सकते है। सांसारिक कार्यों में तो आप जहाँ - कहीं भी

प्रयोग करते रहते हैं।

धरती के नीचे 10-20 मंजीला बना लिये। क्यों? शादी के लिए। धरती पर शादी क्या करना? ऐ बच्चों सुन रहे हो - सुनो! अरे होटल में भी नहीं। वहाँ से अलग समुद्र में वो भी बिल्कुल नीचे जाके करेंगे। जल देवता बन गये हैं। बारात जायेगी - खायेंगे-पीयेंगे वहीं। पानी के भीतर चले गये। यहाँ पर भी वही है। वहाँ आलोक ले जाया गया है। उसी प्रकार के उत्पादन दिये जा रहे हैं।

ये सारी की सारी बातें विधाधर श्रेणियों में तो मामुली बात है। पुराण पढ़लो ज्ञात हो जायेगा। वहाँ ऐसी नगरीयों का निर्माण मात्र एक सेकेण्ड में हो जाता है - हुबत होनी चाहिए। हुबत का अर्थ जानते हो? बुंदेलखण्ड में कहावत है - "आमद कम खर्चा ज्यादा लक्षण है मिट जाने का, हुबत कम गुस्सा ज्यादा लक्षण है पीट जाने का" आज दोनों तरफ से पीस रहे हैं। पहले के लोग न पीटते थे न मिटते थे।

ऐसे-ऐसे खड़े कर दिये आप संभाल तक नहीं पा रहे हो। इतिहास-पुराण पढ़ो। आज भी इस धरती पर सबकुछ यथावत् हो जायेगा। अड़ोस-पड़ोस में ही है पर आपकी नेत्र ज्योति इतनी लम्बी-चौड़ी नहीं है सो हव-हव कहकर ही काम कर रहे हैं और कुछ नहीं। प्रयोग के पूर्व ही श्रद्धान वह उपलब्ध हो गया है - ऐसा है।

दूसरा कदम उठायें या न उठायें हमें अपना काम करते जाना है। 10-20 माला नीचे जाने पर भी हम अभी नपर ही बैठे हैं। ऐसा वातावरण तैयार किया जा सकता है।

अहिंसा परमो धर्म की जय। नूँ

15-5-17 "चलो बनें निरालम्बी" प्रातः 9.20

कोई भी बात सीखी जाती है तो शुरुआत में क्या ध्यान देना आवश्यक होता है, फिर धीरे-धीरे क्या छुटता जाता है और क्या-क्या जुड़ता जाता है। ये सरसरी निगाह में भी अवगत होता रहेगा किन्तु यह अवश्य है शुरुआत में थोड़ा सा विलम्ब लग सकता है। एक बार प्रारम्भ हो जाता है तो फिर स्वयं को ही वह विलम्ब अखरने लग जाता है।

जैसे होते थे उस समय का एक उदाहरण देता हूं। चलना अलग है - भागना अलग है और भगाना अलग है। चलना तो सामान्य से चलना है, भागना स्वयं को होता है किन्तु भगाना दूसरे को - किसको भगाना तो साइकिल को भगाना। गुरुत्वाकर्षण के बल के माध्यम से संतुलन करना आ गया अब साइकिल को या अपने आप को देखो और संतुलित करो। एक आध बार घुटने छिल जायेंगे उसके बिना तो नहीं आता।

तो उसको उस पर बिठा दिया गया। दोनों हाथों में हैण्डल पकड़ा दिया दोनो पांव दोनो पेडल पर जमा दिये और कहा अब चलाओ।

हाथ नहीं - पैर चलाओ। पैर चलने से गति आती है। वह कहता है पीछे से अच्छे से पकड़ो कहीं गिर न जाऊं। तुम चिन्ता मत करो बस पैर चलाओ।

इस प्रकार वह उसको गति देने में सहायता पहुँचाता गया। वह भी एक-दो दिन में Balance बना लेता है। पैर चला नहीं रहे पैरों द्वारा चला रहा है। चलाते समय अपने आप को संतुलित कर रहा है। पहले एक पैर से अब दोनो पैर भाग रहे हैं। पहले जब एक पैर से चलता था तो एक पैर को मजबूत रखता था। यहां पर दोनों पैर एक साथ एवं दोनों चाक भी एक साथ भाग रहे हैं। जो पैर ऊपर होता है उसी पेडल पर ज्यादा भार देता है।

पीछे जो पकड़ रखा है - वह दूर होकर सामने आ गया, क्यों ऐसा लग रहा है? तुम कहाँ से आ गये वह कहता है पीछे से आ गये। अरे! आप तो हमें गिरा देंगे। चार दिन तक तो हमने साथ दे दिया, जीवन पर्यन्त थोड़ी दिया जाता है। क्यों सुन रहे हो तुम लोग? सब जगह यही घटित होगा। शुरुआत में माता-पिता बच्चों को बोध देते हैं फिर वे अपने आप ही लाइन में आ जाते हैं। किसी भी प्रकार से यह तत्व नहीं कर सकते हैं।

अब वही घर है, वही परिवार है, वही सम्बन्ध है किन्तु आकर कहते हैं महाराज आशिर्वाद दे दो-

ये नई जिन्दगी चला रहे हैं। मतलब पुरानी जिन्दगी नहीं है। महाराज अब तो कुछ दिखता नहीं ये जिम्मेदारी कहाँ से आ गई - क्यों आ गई - कब आ गई। उन सबको वहन करने की जिम्मेदारी भी कहां से आ जाती है, पता ही नहीं उसको।

जीवन पर्यन्त संसारी प्राणी का अब उसी ओर रुझान हो जाता है। जहाँ कहीं भी जाये जहाँ कहीं भी रहे बस वही दिखता रहता है। आना-जाना शरीर के साथ होता रहता है। संसारी प्राणी चेतना को भूल जाता है। जो तमाशा दिख रहा है चेतना से देखो तो संचालन बिगड़ेगा नहीं सुधरेगा ही। यह मेरा नहीं-मैं कर ही नहीं सकता। पकड़ने वाला पकड़ते ही रहेगा क्या? कहाँ तक तुम्हारे पीछे भागता रहेगा।

तुम तो साइकिल पर बैठे हो, वह अपने पैरों पर तुम्हारे पीछे-पीछे चल रहा है। इसी तरह आलम्बन लेकर मोक्षमार्ग में चलते हैं, जो जैसे-जैसे हम आगे बढ़ते हैं वैसे-वैसे छूटते चले जाते हैं। छूटने की परवाह भी नहीं करेंगे। अकेले ही सब कुछ करना है वे जानते हैं। प्रारम्भ में सहारा लेते हैं। हर क्षेत्र में लगन-रुचि एवं एकाग्रता की बात होती है। फिर ये सभी पहलु एक-एक करके उघड़ते चले जायेंगे। मोक्षमार्ग में जो संकेत शुरुओं से प्राप्त होते हैं उन्हीं संकेतों के आधार पर उसी दिशा में चलते रहो

है। फिर गुरु नहीं भी रहते तो भी आगे बढ़ते जाते हैं।

पुनः पुनः उन गुरुओं का स्मरण करते हैं जिनके संकेत से हम आगे बढ़ते हैं। अतित में इस तरह से मोक्षमार्ग में यह आचार्य परम्परा संकेत से यहाँ तक आयी है। घबड़ाने की आवश्यकता नहीं धैर्य के साथ अतित में जो गये बस उनके संकेतों को याद रखना है, सफलता मिलती हुयी चली जायेगी। "सफलता एक दिन में नहीं मिलती" जितनी स्थिरता - दृढ़ता के साथ चलोगे उतनी ही सफलता मिलती चली जायेगी।

इसी प्रकार जब माता-पिता दुकान पर बैठते-बैठते बच्चा बड़ा हो जाता है वे गायब हो जाते हैं। ऐसे में बच्चों को असहजता नहीं, दायित्व समझ में आ जाता है। अब वह अकेले की क्या बात कइयों को चला सकते हैं, उसके भीतर यह हन जाता है। इस बात पर अपनी ऊर्जा अर्थात शक्ति को काम में लेते जाऊँगा। जब अनेकों की ऊर्जा-शक्ति काम में लग जायेगी तो गाड़ी गेर में आ जायेगी। शुरुआत में थोड़ा धीरे हो सकती है।

इसी प्रकार मोक्षमार्ग में गुरुओं द्वारा जो संकेत प्राप्त हुये हैं उसी आधार पर आगे-आगे चलता गया। पहले तारवे मुनि महाराज - आश्चर्य होता है। बस थोड़ा

सा शैक्षान-ज्ञान होता तुरंत आगे बढ़ जाते थे।

इस प्रकार गुरुओं एवं ग्रन्थों के माध्यम से शुरु में आलम्बन फिर बाद में बिना इनके भी बहुत अच्छे से चल सकता है। अध्ययन के समय सब रहता है पर परीक्षा के समय न ही किताब, नही गुरु, नही साथी सनाथी आदि कोई नहीं अन्यथा गड़बड़ हो जायेगी। बस नाइ नीचे करके लिखता चला जाता है। घण्टी लगते ही अरे! ये क्या समय हो गया? तीन घण्टे से ज्यादा नहीं लिख सकते। पढ़ना नहीं लिखना है।

कोई-कोई व्यक्ति कुछ प्रश्न लिखने से रह भी जाते हैं। ऐसे ही अपने यहाँ मोक्षमार्ग दो प्रकार से चलता है आलम्बन और निरालम्बन। इन्हीं के आधार पर सभी आगे बढ़ते जायें इन्हीं भावनाओं के साथ!

अहिंसा परमो धर्मकी जय हो

ईर्यापथ में -

- गुरुजी भी शिक्षा में परीक्षा और मूल्यांकन को सही नहीं मानते थे। प्रयोग को सही मानते थे।
- विद्यालय एवं कोचिंग दो अलग-अलग क्यों? एक प्रमाणपत्र देता है एक पढ़ाई कराता है ऐसा क्यों दोनों काम एक को ही करना चाहिए।

परीक्षा से होने वाली बिमारीयां - प्रतिस्पर्धा, नकल, प्रतिद्वन्द्वता

16-5-17 "मत करो अहंकार ज्ञान का" प्रातः 9.30

एक प्रसंग आचार्य कुन्दकुन्द देव ने अपने अध्यात्मकला का उदाहरण करता हुआ बताया। यह प्रसंग समयसार में भी अथवा पंचास्तिकाय में भी हो सकता है। ऐसा कौन सा विद्वान होगा जो यह कहे कि परोक्ष ज्ञान में आने वाला है उसे प्रत्यक्ष देख लिया है। जब भगवान स्वयं कह रहे है - जीसे मैं स्वयं देख रहा हूँ इस समोसरण में अर्हत परमेष्ठी के सिवाय अन्य सभी परोक्ष ज्ञान वाले है।

इस बात को आचार्य कुन्दकुन्द ने एक गाथा में स्वयं कहा। कोई भी हो किसी भी विषय को सुनकर पहले परोक्ष ज्ञान को ही अपना विषय बनायेगा बाद में शुद्धोपयोग के होने पर - इन्द्रियातीत होने पर परोक्ष ज्ञान से हटकर प्रत्यक्ष की ओर आयेगा। इन्द्रियों के साथ आत्म तत्त्व का श्रद्धान मात्र हो सकता है अनुभव नहीं (अब श्रद्धान को ही अनुभव माने यह उसकी निजी मान्यता हो सकती है, आगम नहीं)

भगवान स्वयं स्पष्ट कह रहे हैं। आचार्य कुन्दकुन्द कह रहे हैं वह केवली भगवान जो ध्वनि प्रसारित कर रहे है, वह पोद्गलीक है। जो पोद्गलिक है वह कर्ण इन्द्रिय का विषय हो सकता है आत्मा का नहीं है। इस विषय पर आचार्य कुन्दकुन्द विशेष आग्रह के साथ कह रहे है। जो परोक्ष में आता है मैंने प्रत्यक्ष ज्ञान से जान

लिया ऐसा कौन विद्वान कह सकता है अर्थात कोई नहीं कह सकता है।

आज लगभग यत्र-तत्र देख रहे हैं। इस धारणा को स्पष्ट ही कर लेना चाहिए।

कोविदिदच्छो साहू संपडिकाले भणिज्ज रूवमिणं।
पच्चक्खमेव दिट्ठं परोक्खणाणं पवट्टंतं ॥१४॥

मैंने आत्म तत्त्व को हाथ में रखी वस्तु के समान देख लिया ऐसा कहने वाला साधु नहीं, वह अविवेकशील है। अनुभव और इन्द्रियों के विषय दोनों एक साथ नहीं हो सकते। इन्द्रियों के विषयों में जो उलझे हैं उन्हें प्रत्यक्ष ज्ञान नहीं। इसलिए अनेको ग्रन्थों में स्पष्ट है- श्रुतज्ञान का आग्रह छोड़ दिजिये। सम्यग्दर्शन की अक्षर श्रुतज्ञान के साथ व्याप्ति नहीं। तिर्यञ्च को भी सम्यग्दर्शन होता है। स्वाध्याय के साथ भी सम्यग्दर्शन की व्याप्ति कहाँ? न्याय से कर रहा है। (व्यंग्य) न्यायालय का ही अनादर कर रहा है। न्यायालय वह है जो अन्याय को सहन नहीं कर सकता। अनुभव/प्रत्यक्ष कब देखेंगे? चलते फिरते नहीं हो सकता।

टीका ग्रन्थों में और स्पष्ट बोला है। बोलने वाले को दर्शन नहीं। पाँच इन्द्रियों के साथ विरोध बताया है। जिसकी पाँच इन्द्रियों में लत पड़ी है वो अच्छी चीज क्या बतायेगा अतः अनुभव अलग चीज है। जो कहता है मैं इससे सबको लाभान्वित कराना

चाहता हूँ, वह अभी भावुक है।

आचार्य कुन्दकुन्द के विपरित अर्थ बता रहा है। योगी ही उस अनुभव को प्राप्त कर सकते है, योगी भी कौनसे? जो ध्यान मे लीन है, पांच इन्द्रियों और मन को जिन्होंने जीत लिया है। उसी के साथ इसकी व्याप्ति है। सम्यग्दर्शन होना अथवा सम्यग्ज्ञान होना ये सब अलग वस्तु है और आचार्य कुन्दकुन्द जो बताना चाहते है वह अलग वस्तु है। जो परोक्ष है वह प्रत्यक्ष नही बन सकता।

इन्द्रिय व्यापार को मन-वचन-काय से कभी तीन काल में भी वह जोडेगा नही। व्याप्ति कभी भी आंशिक नही हुआ करती वह पूर्णमासिक हुआ करती है। चन्द्रमा की एक-एक कला निकलती है पूर्णमासी को पूर्ण चन्द्रमा यह उदाहरण नही चलेगा। परोक्ष ज्ञान के साथ सम्यग्ज्ञान रह सकता है - सागरोपम काल तक वह ज्ञान बना रह सकता है किन्तु प्रत्यक्ष ज्ञान नहीं। अक्षरज्ञान के साथ श्रुतज्ञान की व्याप्ति नहीं। यह विपरित उपासना आ० कुन्दकुन्द की उपासना नहीं। विपरित अर्थ निकालेंगे तो सहन नही कर पायेंगे। हमारे पास सहिष्णुता पर दहाड़ने में भी कमी नहीं। सिंह दहाड़ता है अब हमारा भी कर्त्तव्य होता है। जिनको आदर्श मानते है, हम भी अवश्य उत्तर देंगे। तो यह विषय आप सभी समझ लो। एक उदाहरण देता हूँ - एक गिलास है।

गिलास काँच का हो सकता है। वह दूध अथवा पानी से भरा है। पानी भरा है तो यह कह सकते हैं कि यह पानी है। गंध कैसी है-पता नहीं। स्पर्श किया नहीं तो ठण्डा है या गरम पता नहीं। रंग- कथंचित् बता सकते हैं। रस के बारे में नहीं बता सकते।

इसी प्रकार यह कहना गलत है - यत्र यत्र सम्यग्ज्ञानं - तत्र-तत्र ज्ञानानुभूति न भूतो न भविष्यति। इस गाथा में यह स्पष्ट किया गया है जो रत्नत्रय से युक्त, पंचेन्द्रिय विजय का संकल्पी है वही अनुभव कर सकता है अन्यथा हँसी का पात्र होगा। आपके ज्ञान के रस के साथ उसकी व्याप्ति नहीं। ज्ञानी लोग कहेंगे। पानी भरा है ठीक है पर मीठा है या नहीं यह अभी बता नहीं सकते। अब रस का कथंचित् ज्ञान हो सकता है-कैसे?

उसमें एक बताशा छोड़ दिया। आपने रटा हुआ है। देखकर के कहा है स्वाद लेकर नहीं कहा। खबरदार! देखने पर कहा है। सम्यग्दर्शन, अथवा सम्यग्ज्ञान अनुभव परख नहीं अनुभव परख तो चारित्र का पक्ष है। तीन गुप्तियों संयुक्त योगी को ही यह अनुभव का सौभाग्य मिल सकता है। आंखों से देख लो, कानों से सुन लो अथवा छु भी लो तो भी नहीं हो सकता। सुनने-देखने छूने से बताशे का अनुभव नहीं होगा। जब जीभ

पर रखेंगे उस समय जीव को इन्द्रिय को अनुभव होगा, वह अनुभव स्पर्श - घ्राण - चक्षु - कर्ण इन्द्रिय अथवा मन को भी नहीं होगा।

अब बताओ इतने सारे के सारे मोड़ को लांघकर आप अपनी गाड़ी ले जाना चाहते हो, ऐसे में आपकी गाड़ी आपको गड्ढे में डाल देगी। इन सभी बातों से बचाने के लिए आचार्य कुन्द कुन्द ने बड़ी ही सरल भाषा में चोटी के विद्वान - धुरंधरों को भी समझा दिया। अतः सम्यग्दर्शन की व्याप्ति अक्षरश्रुत-ज्ञान के साथ नहीं। तिर्यंच भी सम्यग्दर्शन को प्राप्त करता है।

आचार्य कुन्दकुन्द ने इन सबका उद्घाटन किया जिसकी मिठास आज भी वैसी ही है। और - और उसको चखा जाये तो सभी को मिठास आ सकता है। सकने में और अनुभूति में अन्तर है। इस उदाहरण के साथ आपके सामने रखा।

अहिंसा परमो धर्म की जय हो

कुछ हटकर - "प्रत्याख्यान में एक मुनिराजजी द्वारा उपवास फिर तुरन्त ही प्रत्याख्यान करने पर आचार्य श्री जी ने कहा - अनिवार्य प्रश्न के समय ध्यान को केन्द्रित करना होता है, इसे हल करते समय विशेष सावधानी की जरूरत होती है।"

16-5-17 "निर्जरा का साधन है प्रवचन" प्रातः 11.40

अब आप लोगो को आगम के आधार पर अपने तत्त्वज्ञान को आगे बढाना चाहिए। मैंने बहुत सा विषय दे दिया आपस में इस विषय को बाँटें। चिंतन करें। भाषा समीति को निर्दोष बनाने के लिए परम आवश्यक है। ऐसा तो है नही कि आप बोलते नही हो - जब बोलते ही हो तो क्या बोले? कैसे बोलें?

उस समय इन बातों का ध्यान रखें जिससे सामने वाला संतुष्ट होकर जाये और आप कर्मो की निर्जरा कर सकें। स्वाध्याय के पाँच भेद बताये उन पाँचो को जीवन मे प्रयोग करें। पृच्छना भी कसाई एक ही बात को बार-बार पुछना अच्छा नहीं माना जाता है। प्रश्न भी सटीक होना चाहिए। एक-दूसरे से ऐसे आधार सहित प्रश्न करे।

जब चिंतन की गहराई से बोलते हैं तो ज्यादा बोलने की जरूरत नहीं पड़ती मात्र एक शब्द मे ही सामने वाला ठण्डा हो जाता है। बिना सोचे-समझे बोलना ठीक नहीं। फिर प्रवचन की बात हो तो वहाँ तो सामने जनता बैठी है - आलोचक भी हो सकते हैं,

समीक्षात्मक भी हो सकते हैं।

आप (दुर्लभसागर जी) कह रहें है कि "हमें फंसाना चाहते है।" मैं घुनघर दंग रह गया कि आपने ऐसे शब्द क्यों बोले? (प्रवचन हेतु मना करने पर दूसरे महाराज (निर्दोषसागरजी) जीसे कहना) जब की कोई महाराज कितनी मेहनत से बोलते हैं। क्या विषय देना है पुरा आगे से पीछे तक समझना पड़ता है। धर्मोपदेश से भी कर्मो की निर्जरा होना बताया है।

आप निर्देशन नहीं देते ऐसा तो है ही नहीं और यदि आप नहीं कहेंगे तो भी मैं मानुंगा नहीं। फिर निर्देशन तो बहुत सोच समझकर देना चाहिए धर्मोपदेश तो उससे बहुत ऊपर ही रह जाता है। इस धर्मोपदेश (प्रवचन) को निर्जरा का साधन मानिए। लेखन से ज्यादा महत्व इसका है। फिर द्रव्य श्रुत का इतना व्याख्यान हो गया अब प्रयोग की आवश्यकता है।

प्रत्येक समीतियाँ निर्जरा में सहायक होती है। आचार्यश्री "निज कार्यवशात् किञ्चिदुक्त्वा विस्मरति श्रुतम्" कहा है। निर्जरा स्थान बढाना है तो सारी विद्यायें आना जरुरी है, हाँ आधारभूत होना चाहिए आचार्य शुभचन्द्र स्वामी ने ज्ञानार्णव में ध्यान के पूर्वयों

के बारे में बताते हुये कहा कि इसके बाद क्या करें फिर इसके बाद क्या करें।

आज भी समझ में आ रहा है कि गुरुजी ने मुझ कन्नडभाषी को हिन्दी में इतने आगे क्यों बढ़ाया। वे सदैव कहते थे - आधार मजबूत रखो। हमें कुछ नहीं आराधना कथा कोष की कहानियाँ याद करने को दे दी साथ ही आत्मानुशासन जो संकलित ग्रन्थ है उसकी एक कारिका ले लो एक घण्टे के लिए पर्याप्त है। शुरुआत में उसी से प्रवचन करते थे।

इसके साथ अनुप्रेक्षा स्वाध्याय पर भी ध्यान देना जरूरी है। अनुप्रेक्षा का मतलब केवल बारह भावना का चिंतवन ही नहीं। प्रवचन में पहले क्या बोलना शुरुआत कैसे क्या-क्या विषय सामग्री आदि का पहले से सोचना होता है ऐसे नहीं कि जाके बैठ गये। ये सब ग्रन्थों के आलोडन के बिना आ ही नहीं सकता। चिन्तन शैली समझ में आ जाती है। एक शब्द के पर्यायवाची शब्द जरूर आना चाहिए जिनका प्रयोग कर प्रवचन को सरल एवं प्रभावी बना सकते हो।

फिर एक घण्टे क्या हमें तो 14 घण्टे (रात) भी कम लगने लगते है। हमने क्षयोपशम भाव को लेकर इतना चिंतन किया, आप लोगों को दिया आज इस विषय पर दूसरा पाठक आगे बढ़ ही नही सकता। एक घण्टा बिना पुस्तक के स्वाध्याय हो गया वह अलग, बिना ग्रन्थ के ही

थिसीस लिख डाली।

भोपाल में करेन्सी और वस्तु के बारे में कर्म और नो कर्म का उदाहरण दिया। अच्छे-अच्छे डॉक्टर लोग भी महाराज ये तो Fit (फिट) हो गया। डा० राजेश (M.D.) - इसमें सिद्धान्त भी आगया। आप लोग निर्देशन तो देते ही है फिर तत्व की बात ही क्यों नहीं देते। सामने वाले को आगम / तत्व की बात दो। संवर हुये बगैर रहेगा नहीं।

अभी हम भी जो दोहे लिखे उन्हे मुखाग्र करने में लगे हैं। इससे आपका भी चिन्तन और बढ़ेगा। धर्मोपदेश के काम में भी आयेंगे। आम्नाय स्वाध्याय भी होना चाहिए / शब्द स्वतः ही आपके मुख से शुद्ध उच्चारित होंगे। "हियरींग, राइटिंग, स्पीकींग आदि से भी महत्वपूर्ण लर्निंग है। कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय भी इसी पर जोर दे रहा है।

- "भिन्न-भिन्न स्थानों पर तापमान भिन्न-भिन्न हो सकता है / होता है किन्तु भिन्न-भिन्न स्थानों पर रहने वाले लोगों का शारीरिक तापमान एक ही रहता है, क्यों की तापमान शरीर का नहीं आत्मा का होता है।"
- "आज अन्तर्जगत की बात कोई नहीं करता अन्तर्राष्ट्रीय बातें सब करते है।"
- "सबसे ज्यादा अपव्यय वाहनों से हो रहा है - प्रदूषण भी यह सब अनर्थदण्ड है।"

वार्ता हथकरघा कर्मचारी एवं सरपंच के साथ -

16-5-17 "मेहनत से डरना नहीं" मध्याह्न 3.30

इस संसार में गाय, भैंस, बोझा, हाथी, ऊँट आदि-आदि सारे के सारे अपने बड़े-बड़े पेट को भर लेते हैं। उनका जीवन चल रहा है या नहीं। हम तो मनुष्य है हमें क्या करना चाहिए। इसलिए आप लोग श्रम करें लाभ ही शाकाहारी बने। दूसरे को नहीं बोलना स्वयं तो त्याग कर ही सकते है। दूसरे को कष्ट पहुँचाना हिंसा है। आप लोग यहाँ आ रहे है कम से कम इतना त्याग अवश्य करें।

हम अपने लिए जिस प्रकार जीना चाहते है उनको भी जीने दे। हमारे निर्वाह के लिए वे अपना जीवन खो दे हमें अच्छा नहीं लगता। खेती-बाड़ी होती ही है। इसके (हथकरघा) माध्यम से भी आपको भरपुर मिलेगा। हाँ श्रम तो करना पड़ेगा। श्रम का मतलब ग्रामीण भाषा में मेहनत बोलते है। आप लोग समूह बना लेंगे अच्छा है। दूसरो पर भी प्रभाव पड़ेगा। अभी एक ही डाल में फिर दो डाल में भी कर सकते है। २०० लोग तक लाभान्वित हो जायेंगे। सीखने पर घर पर भी हथकरघा लगाकर काम कर सकते हो।

आप श्रम करेंगे तो यह काम आपका ही हो जायेगा। श्रम से डरना नहीं। मेहनत से आपको अपने आप मिलता चला जायेगा। गाँव मे रहने वाले भी नेतृत्व कर सकती है। आयास से डरना नहीं, आलस कभी करना नहीं। बैठे-बैठे भी भोजन पचता नहीं - श्रम तो करना जरूरी है। नुं

17-5-17 "छोड़ो साथ मायावी का" प्रातः 9.20

प्रायः सब लोगों की धारणा यही रहती है कि हम लोग अपनी तरफ से सावधानी से सेवा-चाकरी करते रहेंगे तो अवश्य ही जीवन चाहे स्व का हो या पर का हो बना रह सकता है। इसलिए सभी चौबीसों घण्टे इस कार्य में व्यस्त रहते हैं किन्तु सिद्धान्त अथवा स्वभाव अलग है। जब उसके अनुसार काम होता है तो माथा ठनकता है।

माथा ठनकने का मतलब जानते हो न आप। क्यों सुन रहे हो आप। उस कार्य से आप प्रसन्न नहीं अप्रसन्न होंगे। ऐसा कैसे हो गया? ऐसा तो हो ही नहीं सकता। अब मैं पूछना चाहता हूँ न्यूटन के अनुसार जब वर्षाकाल आता है तो धरती चारों ओर वनस्पतीयों से ढक जाती है। फिर न्यूटन के अनुसार गर्मी आती है ऐसी गरमी की वृक्षों के पत्ते सब झड़ जाते हैं और हड्डी-हड्डी मात्र रह जाती है पर कुछ ऐसे भी पौधे जो गर्मी में भी उनमें कोंपले फूटती रहती है भीतर में ऐसा स्रोत हरा रहा है जो गर्मी में भी हरी-भरी दिख रही है। आप ऊपर की ओर देख रहे हैं, भूल में हैं आप।

गुण - जाति क्या है। तत्व दृष्टि क्या है। बाहर का इतना अनिवार्य नहीं जितना भीतर का होता है। तापमान ऐसा एक बूंद भी नहीं है फिर भी यह स्वभाव इसी को कहते हैं उपादान। आप लोगों को सोचना चाहिए जीवन के आदि से लेकर अभी तक चौबीसों घण्टे

इसकी चाकरी की आगे भी कर रहे हैं। कार्य नहीं होता फिर भी इसको कई वर्षों तक रखना चाहते हैं। भिन्न-भिन्न औषधोपचार से इसका प्रबन्धन करेंगे।

पुराण ग्रन्थों को पढ़ते हैं, दीर्घ संहनन है, कोई परिवर्तन शरीर में आया नहीं। मोटा-ताजा भी देखते-देखते धड़ाम से चला जाता है। अब रोओ-धोओ किन्तु वह आने वाला नहीं। डॉक्टरों को दिखाओ, उसको बुलाओ-३ किन्तु ये कोई नहीं कहता कि इसकी आयु इतनी ही है। आज का विज्ञान भी इसी कारण अनेक संदेहों का पात्र बना हुआ है। इसकी आयु इतनी ही है इसको स्वीकारना है।

बात इतनी ही है। सेवा करो पर इसी से जीवित है- ऐसी प्रतिज्ञा तो मत करो, ऐसी गलत धारणा तो मत बनाओ। अन्यथा पुनः यह शरीर मिलेगा, पुनः रुलायेगा, पुनः दुर्गति होगी चाहे डॉक्टर हो, वैद्य हो, हकीम हो, देव हो, दानव हो अथवा चाहे श्रमण भी क्यों न हो। इसी सिद्धान्त पर चलते हैं तो कुछ प्राप्त होता है। भीतर में भी कुछ व्यवस्था है, जिसको कैमरे, माइक्रोस्कोप, सूक्ष्मदर्शी आदि से भी जानकारी प्राप्त नहीं हो सकती।

सभी के पास यह काया है। काया के निर्माण के बारे में आज का विज्ञान आज तक हैरान है। किसने बनाया पता नहीं लगा सका है। इसके निकट जाने

पर ही प्राप्त हो सकता है।

इसका मैनेजमेन्ट आज तक कोई न कर सका / न ही कर सकते हैं। जिन वैद्य जी को चिकित्सा के लिए बुलाया इनका ही अवसान हो सकता है - होता है। "मरते न बचावे कोई" अन्तिम पंक्ति से शुरू होगा मरते न बचावे कोई अतः जब तक है अवसर का पुरा का पुरा लाभ लेता रहें नहीं तो मायावी चिन्ह के समान दशा हो जायेगी।

विद्याधर लोगों के पास मंत्र चुटकी बजाते ही माया के माध्यम से निर्माण कर देते हैं। वर्षों तक रह सकते हैं नहीं तो दूसरे के हाथ में मायावी रचना है। इसके पीछे न लगकर इसका उपयोग भी कर सकते हैं। करें इस विश्वास के साथ में की इस अनुरूप में परिणमन करने वाला नहीं। मैं नहीं तो मेरे रूप परिणमन नहीं हो सकता ऐसा गाढ श्रद्धान करके भीतरी स्वरूप के बारे में, विचित्रता के बारे में पूर्व अध्ययन तो नहीं कर पायेंगे। हाँ जो सामने आता है उसके फल के बारे में हारता नहीं अपितु यथार्थता बनाये रखता है।

यह विश्वास बनाये रखें की यह मायावी पदार्थ हमारे साथ रह रहा है। अथवा हम इसके साथ रह रहे हैं। आप विश्वास पात्र को अपने साथ नहीं मायावी को रहने दे रहे हो। विश्वास डगमगा जाता है जो मायावी को साथ रखने का प्रबंधन कर

रहे हो। विपरित है ये हाँ कहो यानी कहो।

महाराज! विश्वास जमता नहीं है। ये मायावी हैं, मायावी तो ठगायेगा ही फिर भी आप उसी का साथ करेंगे हमसे कह रहे हो महाराज! आप विश्वास करो। हमारे अनुसार भरोसामंद तो नहीं है आपलोग।

अहिंसा परमो धर्मकी जय हो

19-5-17 "कहानी रामफल-सीताफल की" मध्याह्न 3.15

हतकरघा-महिलाओं के लिए -

आपने रामकथा तो सुनी होगी। उन्हें कितना कष्ट था, जंगल में रहते थे कोई एक निश्चित स्थान नहीं था। प्रतिदिन भयानक जंगल में रहकर भी बिना शिकार, बिना किसी को मारे जंगल के फल-फूल और नदी नालों के शुद्ध पानी से अपना काम निकालते थे। जंगल में ही झोंपड़ी बनाकर रहते थे। राजा होकर के भी जंगल में रहते थे। प्रजा मना कर रही है बस पिताजी की आज्ञा थी सो चले गये।

यह राम की ही विशेषता थी। पत्नि भी ऐसी (सीता) वह भी तैयार हो गयी। पति के साथ जो मिलेगा वही शिरोधार्य है। वर्षों तक जंगल में रहकर जीवनयापन किया। कोई भी चाहते नहीं थे कि जंगल में जायें किन्तु राम सहर्ष चले गये। एक भी दिन फालतु नहीं बैठ बस चलते जाना ही काम था। जब उस कथा को सुनते हैं तो आंसु स्वतः ही आ जाते हैं। आपको भी ऐसा ही

काम करना है।

ऐसा काम करना है जिसमें जीवों पर दया हो, जो हिंसा से रहित हो। लक्ष्मण को तो आज्ञा नहीं थी फिर भी भाई के लिए इतना बड़ा त्याग किया साथ में चले गये। भरत कहता है - मैं तो राजा बनुंगा ही नहीं, राजा तो आप ही है। भैया को छोड़कर हम नहीं रहेंगे। राम ने कहा - पिताजी की आज्ञा का पालन करना हमारा कर्त्तव्य है। भरत आपको राजा बनना ही है। निर्णय ऐसा ले लिया - आप ही इसको चलायेंगे। दोनों का काम हो गया।

आपने पिताजी की आज्ञा मानी, हमने आपकी आज्ञा मानी है अब आपको हमारी माननी है- आप अपनी दोनों चरण पादुका हमें दें उन्हें हम सिंहासन पर रखकर प्रजा का पालन करेंगे। वह प्रतिदिन उनकी पूजा करता और प्रजा की रक्षा करता। भरत को प्रजा हेतु घर में रहना पड़ा। वह साधु बनना चाहता था, राम ने कहा- बाद में अभी प्रजा का संरक्षण जरूरी है। ऐसा पुराणों में पढ़ा है। एक बार की बात है -

राम एक दिशा में गये, लक्ष्मण अलग दिशा में, सीता भी एक दिशा में सबने कहा हमें कम समय में भोजन लेकर आना है। थोड़ी ही देर बाद सब आ गये राम ने कहा - आज मैं एक अच्छा फल लेकर आया हूँ। आपलोगों को समझ में आ गया होगा। आज मैं सीताफल लेकर आया हूँ। सीताफल जानते हो? उसमें बहुत

से गुण होते हैं, ऊपर छिलके पर बहुत सारी आँखे होती है। थोड़ा नरम हो तो बहुत मीठा होता है।

लक्ष्मण ने कहा- हम तो अच्छा फल लाये हैं - इसको रामफल कहते हैं। ऐसा जीवन था - हिंसा न करके फलों को खाकर जीवन यापन किया है, ऐसे आदर्श पुरुष है। उनको सुनकर स्वार्थ जाग्रत नहीं होता, राम वन में नहीं जाते तो कर्त्तव्य क्या होता है पता नहीं चलता। आप सभी को हाथ-पैर स्वस्थ शरीर मिला है। श्रम करो - श्रम करोगे तो आपको उतना ही मिलता भी चला जायेगा।

एक लड़का अन्यत्र केन्द्र पर भोजन बनाने आया था। हमने नियम बनाया था ऐसे-ऐसे करेंगे। दक्षिण का वह लड़का भोजन बनाने के साथ-साथ हथकरघा भी सीख लिया। आज एक दिन में 10-12 मीटर बनाता है। परसों-नरसों हम ब्रह्मचारणी दीदीयों प्रतिभा मण्डल में गये तो वहाँ था। 50 के हिसाब से 12 मीटर के 600 रु प्रतिदिन 18000 रु. प्रतिमाह हो गये। आप लोग तो बहुत अच्छे से करेंगे। बच्चों को बहनों को भी तैयार करें। किसी भी प्रकार की आवश्यकता पड़ेगी, इनको कह रखा है।

श्रम का योग्य देना है, और आवश्यकता की पूर्ति करने में कमी न रखना। आप लोगों से यही कहना है। रामफल - सीताफल के

इस कथानक को याद रखना। इन लोगों ने कहा एक छोटी सी कहानी सुना दे, हमने तो छोटी नहीं पूरी कथा ही सुना दी। 12 वर्ष वनवास में रहने के बाद भी तीनों ने शुद्ध सात्विक भोजन किया। जंगल में जो कुछ भी मिला वह खा-पी लिया।

हम जबरदस्ती नहीं करेंगे। आप लोग काम करें, हमारा आशीर्वाद है। जब ये लोग श्रम करते हैं पहले से ही दिया हुआ है आशिर्वाद। आप 100-200 लोग एकत्रित होंगे तो देखते ही बनेगा। हम उसी तरह व्यवस्था करेंगे। 108 कुम (हथकरघा) को सुबह-शाम (मध्यान्ह) दो शिफ्ट में कर सकते हैं। जो-जो सीखना चाहते हैं वे इनसे मिल लें। आप सीखा सकते हैं। हरेक व्यक्ति काम करने वाला सीख जाये। उसको विश्वास हो जाये कि हम भी कमा सकते हैं।

बहुत सारी वैरायटी हैं, मात्र लहठा ही नहीं हैं। तरह-तरह की विधायें हैं जिसको जैसा चाहिए वैसा बनावट दे सकते हैं। श्रम करने वाले तो बहुत जल्दी सीख जायेंगे। समय पर काम करना चाहिए। बच्चियाँ सीखेंगी - गाँव का माहौल अच्छा होगा। दिन में काम करो - रात में भजन करो। हम लोगों का मुकाम अक्सर गाँवों में ही होता, रात में भजन चालु। कहीं-कहीं रात के 12 बजे तक रामकथा चलती रहती है। पुराण पुरुषों के चारित्र पढ़ने से चरित्र उज्जवल बनता है। उनको

कभी भी भूलो नहीं। दुनिया भी राम को याद करती है, हम भी उसी में शामिल हो जायें।

पुराण ग्रन्थों का एक भी कथानक काल्पनु नहीं है। प्रेरणा देने वाले हैं। सीता ने कितना कष्ट सहा / जंगल में दो-दो बच्चों को जन्म दिया कभी धैर्य नहीं खोया / राम के लिए भी नीतिवाक्य बता देती थी - जैसे मुझे छोड़ दिया धर्म को नहीं छोड़ना। नीति और चर्या में वह राम से दो कदम आगे ही थी। ऐसे गुण जो राम को भी प्रेरणा देते थे। उसी का परिणाम था। राम ने भी प्रजा का संरक्षण करते हुए रावण को रास्ता दिखाया।

आज आप सभी को पुण्य के उदय में यह कथा मिली, ऐसे ही नहीं मिलता है हमारे पास से। [सभी महिलाओं ने शाकाहार का संकल्प लिया।] बहुत अच्छा होगा पति-पत्नि दोनों ऐसा करें तो फिर कहना ही क्या? उनको भी प्रेरणा देते रहो - सभी काम ठीक होगा। बच्चे भी संस्कारित होकर इधर-उधर घुमेंगे नहीं। [एक महिला ने मार्मिक वक्तव्य दिया] 8-9 महिने के अंतरहीइस प्रकार का जीवन हो गया। जीवन में कठिनाई पूर्व कर्मों के कारण आती है।

राम-सीता आदि जो शलाकापुरुष थे उन पर भी कर्म का फल आया फिर उनके आगे हमारा तो कौनसा कष्ट है - जरा सोचो। जो हमेशा-हमेशा से

राजदरबार में ही रहने वाले विशेष भोगोपभोग की सामग्री का भोग करने वाले होते है।

उनको भी इस प्रकार का कर्मोदय में आया। माँ ने कहा- भरत का राज्याभिषेक हो। राम ने कभी नहीं सोचा, सीता ने भी नहीं सोचा, न ही राम की माँ ने सोचा, प्रजा ने भी नहीं। सभी ने यही सोचा कि यह कार्य उचित नहीं हो रहा है फिर भी कर्मों के सामने टलता नहीं हैं। समझ रहे है आप लोग। जी। हम ऐसा कार्य करे जिससे स्वयं का भी दूसरे का भी कष्ट दूर हो।

अभी आपने सुना बहुत ही प्रभावी रहा। इधर-उधर की बाते नही करो। सब को दिशा मिले। सब को यह कार्य सीखाओ। जो विलासता में न डूबे, जो करना चाहे उसे सीखाओ। इतना ही कहकर आज का यह वक्तव्य पूर्ण किया जाता है। ये लोग समय-समय पर माँग करते रहे आप लोग पूर्ति करने में सक्षम हो. इन्हीं भावनाओं के साथ!

अहिंसा परमो धर्म की जय हो

Note-

० सीता ने राम से विवाह किया जब कि जनक के स्वयंवर में अनेकानेक विद्याओं से सुशोभित विद्याधर राजा थे। फिर भी एक भूमिगोचरी से विवाह। रविषेणाचार्य ने कारण बताया चक्रवर्ती-नारायण ~~आदि पद निदान से किन्तु~~ तीर्थंकर पद भूमीगोचरी होती।

आचार्य ज्ञानसागर जी महाराज का समाधी दिवस

25-5-17 "गमछा ने दिया संदेश" प्रातः 8:15

आज का यह पावन अवसर गुरुजी की पुण्य तिथी के रूप में हमारे लिए आया है। गत साल यहाँ हथकरघा के रूप में जो प्रारम्भ हुआ वह विकासोन्मुखी होकर आज 108 हथकरघा के रूप में पूर्ण हो रहा है। धर्म, अर्थ, काम पुरुषार्थ गृहस्थो के बताये मोक्ष पुरुषार्थ इन तीन को पार करने पर होता है। धर्म पुरुषार्थ सब जानते है। अर्थ पुरुषार्थ एवं अर्थ में अन्तर है। "अर्थ जड़ है, किन्तु पुरुषार्थ उसमें जुड़ जाता है तो वह जीवित हो जाता है।"

आज हमें अर्थ की नहीं अर्थ पुरुषार्थ की आवश्यकता है। यह अर्थ पुरुषार्थ भारत में ही होता है। चारों में पुरुषार्थ लगा है, पीछे एक-एक शब्द लगा है। जैसे - धर्म पुरुषार्थ आदि। दया धर्म का स्थान पुरुष के लिए ही गया। पुरुष याने आत्मा और अर्थ माने के लिए। आत्मा के लिए धर्म, आत्मा के लिए अर्थ आदि। अर्थ पुरुषार्थ जीवन के लिए आवश्यक है।

अर्थ का मात्र संकलन न हो। फिर अर्थ पुरुषार्थ भी कहाँ तक आत मरणासन्न है फिर भी अर्थ पुरुषार्थ की ओर ही दृष्टि है यह खेद है। कुछ वस्तुएँ जीवन चलाने हेतु आवश्यक है। अर्थ

उत्पन्न करने के लिए आवश्यक है पर उससे जीवन को जोड़ना नहीं है।

वस्तुओं का उत्पादन अनिवार्य है। आज अनिवार्य की ओर पीठ है एवं जो अनिवार्य नहीं है उस ओर मुख है। चाहे विदेशी हो या चाहे देशी हो सब का हाल यही है, अर्थ की ओर मुख है। सबको धुन लग गयी है, सब उसी तरफ भाग रहे हैं। आज सभी नौकरी की ओर ही भाग रहे हैं। सुना था जैनियों के यहाँ सबसे कम नौकरी करते थे - आज सबसे ज्यादा नौकरी में जैनी ही मिलेंगे।

माता-पिता भी अच्छा मानते थे क्यों कि अच्छा पैकेज लेकर आ रहा है किन्तु आज दोनों ही संतुष्ट नहीं है। बिना प्रयोजन के कोई भी काम नहीं होना चाहिए। आज मुख की ओर मुख का प्रयोजन ही नहीं है। अर्थ पुरुषार्थ - दोनों तरफ अर्थ है बिच में पुरुष बैठा है। अर्थ माने धन पुरुष माने आत्मा, उस आत्मा के लिए अर्थ। कुछ समय बाद में उस अर्थ को छोड़ देता है।

काम पुरुषार्थ की संज्ञा ही है। जैन संस्कृति में विवाह मात्र वासना के लिए नहीं अपितु सत् संतान की पूर्ति के लिए अनिवार्य बताया। आप देखें 24 तीर्थंकरों में से 5 तीर्थंकर बालयति शेष 19 तीर्थंकरों ने विवाह किया वे शादी शुदा थे, यूं कहो विवाह से ही उनका जीवन

प्रारम्भ हुआ है। पांच बाल ब्रह्मचारी क्यों रहे, हो सकता है उनके योग्य वधु का प्रबंध न हुआ हो (व्यंग्य)। राजुल को तो बीच में ही छोड़ भग गये। गड़बड़ जैसा लगता है।

सामान्य व्यक्ति फिर भी ठिक है वे तो तीर्थंकर जिन्हें धर्म तीर्थ का प्रवर्तन करना है। सब कुछ होने के उपरान्त में सब रहस्य खुल जाता है। विवाह का रहस्य क्या है, इसे समझ लेते हैं। पहले कुछ पंक्तियाँ लिखी थी "बिना विवाह - प्रवाहित हुआ क्या - धर्म-प्रवाह"। धर्म का प्रवाह अर्थात सरीता की तरह तभी हो सकता है। बहता है तो नदी अन्यथा तालाब बन जायेगा। बहने के लिए एक स्थान से दूसरे स्थान तक, एक काल से दूसरे काल तक प्रवाह का होना अनिवार्य है।

प्रवाह तभी तक जब विवाह है सभी महाराज समझ ले इस रहस्य को। विवाह करेंगे तो संतान होगी, संतान होगी तभी परिवार समाज होगा समाज होगा तो सुख छिन जायेगा, ऐसा नहीं कहा गया। वासना क्या है? विवाह क्या है? ये सब भारतीय संस्कृति से ही समझ सकते है। विवाह से सत्संतान होने पर ही प्रवाह होगा।

अभी महाराज (विनम्रसागर जी) जी कह रहे थे उनकी बाते (ज्ञानसागर जी की) मेरे मुख से सुने।

उन्होंने जो भी कहा वह सूचनात्मक कहा उन सूत्रों की व्याख्या हमें करना पड़ता है।

यदि सामने वाला न समझे तो कान पकड़कर भी समझाया जाता है। वह रोने लग जाये तो रो ले। रुक जाये। रुककर के बैठ जा। जब पेट में चूहे कबड्डी खेलने लगेंगे तो वो इधर ही आयेगा। विवाह हो गया - असंयम छूट गया। विवाह होते ही वर-वधु नयी जिन्दगी में प्रवेश करते हैं महाराज आपका आशीर्वाद चाहिए। अभी तक कुछ भी खाते-पीते-करते थे अब तो जीवन में अंधेरा-अंधेरा सा दिखता है।

कर्यों की दायित्व का बोझ कंधे पर आ गया है, यह बोझ आते ही उसको बोध हो गया। मैं बोझ एवं बोध दोनों को एकार्थवाची मानता हूँ। "दायित्व का बोझ कंधे पर आ गया तो बोध आये बिना नहीं रहेगा।" तीन लोक को उपदेश देने वाले हो उनसे भी कहा पहले विवाह कर लो। एक पत्नि को संभाल नहीं पा रहे हैं। पति-पत्नि दोनों मिलकर ही समझ पाते हैं।

सत्संतान की प्राप्ति के लिए विवाह जरूरी है - महापुराण तो पढ़िये। इसमें कमी है तो वह दायित्व को नहीं निभा सकता। गुरुजी ने कहा - परिग्रह क्या है उसे पहले समझ लो। उन्होंने गमछा बेचकर अपने

जीवन की शुरुआत की।

गमछा क्या है। आप लोग जानते हो? गमछा वस्त्र का प्रतीक है। शादी की है तो गमछा जरूरी है। वासना को बांधने का कार्य है। आज विदेशी वस्त्र आ रहे हैं। 80 वर्ष के दादा जी भी आते हैं तो न वे फुल पेन्ट पहने हैं न ही Half पेन्ट पहने हैं। विचित्र से लगते हैं। मैं सबके सामने हंस भी नहीं सकता। अन्दर ही अन्दर हंसता हूं। ऊपर बनियान पहनकर हमारे सामने आ जाते हैं।

अपने सभी अंग को वस्त्र से ढाक लो! अंग-अंग पर वासना बैठी है। शरीर पर वासना को टिकने मत दो। यह संकल्प होता है, तभी दिगम्बर संत बनता है। ग्रहस्थ है तो वह दो-तीन कपड़े बिना बाहर नहीं निकलता। आज शादी होते ही यहाँ नहीं रहते विदेश चले जाते हैं फिर जब जो पैसा लेकर गया खर्च हो जाता है तो पिताजी को फोन लगाता है- पिताजी मैं वापस आ रहा हूं।

पिताजी कहते हैं जिस रास्ते से गये उसी से आओ। हमें क्यों बता रहे हो? आप रह रहे हैं आपको ही बचना है। पैसा ही सब कुछ मान बैठा- दायित्व को समझा ही नहीं, स्वयं को संभालना मुश्किल हो गया। व्यंग्यात्मक किसी ने कहा- अन्यथा नहीं लेना। वित्तमंत्री अब बजट तैयार करेन्गे, इसबार

का बजट बहुत अच्छा होगा। एक पाठक ने कहा - घर का बजट बना नहीं पा रहा वह भारत का बजट बना रहा है।

हथकरघा वही काम कर रहा है, भारत के बजट को बिल्कुल ठीक - ठाक कर देगा। आज गरीबी इसीलिए की अर्थ का स्रोत (उत्पादन) बंद कर दिया गया। हम परिश्रम नहीं करवाना चाहते - गलत बात है। पसीना आये बिना ये सब नहीं हो सकता। किसी ने आदर कहा - सामायिक में मन नहीं लगता इसमें मन लगता है। इसमें भी एकाग्रता की जरूरत है - ध्यान गया की सूत (धागा) गया।

टूटेगा तो आपको ही जोड़ना है अतः बहुत ध्यान रखते हैं। एकाग्रता ही जीवन का रहस्य है, यह समझा जा सकता है। सुनने में आता है - पहले विवाह होते थे तो कन्या किस घर से लाना है इसकी खोज होती थी? उस घर से लड़की लाना है इसलिए की उस घर के अच्छे संस्कार हैं। वो वहाँ से आयेगी तो प्रतिदिन एक साड़ी बनायेगी। लोग देखने आयेंगे ऐसी सुन्दर साड़ी बनाती है। अन्य लोगों को भी प्रतिदिन तैयार करेगी। मर्यादित रहकर यह सब काम करेगी।

इसके अतिरिक्त घर पर ही माता - पिता - पति - परिवार की सेवा भी करेगी। घर के बाहर गये बिना। करोड़ पति की संतान भी ऐसा

करती थी।

ऐसी-ऐसी कलायें जानते थे, विदेशी की कोई आवश्यकता नहीं। एक भी देश ऐसा नहीं जहां भारतीय वस्त्र का सम्मान न होता हो - पुस्तिका है पढ़ोगे तो आंखें खुल जायेगी। सम्मान का मतलब वे भारतीय वस्त्र को ले जाते थे। मूल्य नहीं बहाना है। गरीबी थी ही नहीं, मांगने की जरूरत ही नहीं थी। आज डिफाल्टर घोषित हो रहे हैं।

लोन (ऋण) लेकर काम कर रहे हैं। विश्व बैंक ऋण देकर सबको सम्पन्न बनाना चाहता है। हम कर्ज लेना नहीं - ये भी सूत है। कर्ज क्यों आया? अर्थ पुरुषार्थ को न समझने के कारण। आज ऋण लेकर पढ़ लेता है फिर योग्यता के अभाव में नौकरी नहीं मिलती। योग्यता की आवश्यकता है। विद्यालय नहीं चल रहे हैं, विद्यालय को कोचिंग सेन्टर चला रहे हैं।

अन्यथा न लें, कुछ कड़ु लग सकता है पर इस कड़ु से अपना मुख मिठ बना लो। योग्यता के अभाव में 80% से अधिक इंजिनियर डिफाल्टर अर्थात किसी काम के नहीं हैं। ये अखबार में बड़े-बड़े अक्षरों में छपा था। आज इतने बड़े-बड़े इंजिनियरिंग कॉलेज में क्या हो रहा है। वे योग्य नहीं हैं क्या? पैसा देकर पास हो

गये। माता-पिता क्या करें? आप सोचते अर्थपुरुषार्थ क्या होता है।

अभी का एक उदाहरण आपसे कहना चाहता हूँ। दक्षिण का एक लड़का दुण्डलपुर हथकरघा की भोजनशाला में काम करने आया। भोजन बनाने के बाद खाली समय में वह प्रतिदिन हथकरघा देखता रहता था। देख-देखकर उसने सभी विधायें सीख ली। आज वह प्रतिदिन 10 से 12 मीटर कपड़ा स्वयं निकालने लगा है। एक मीटर का 50 रु. वह बता रहा था आप ही बता दें, मैं गणित में कमजोर हूँ। 600 रु. प्रतिदिन कमा रहा है।

सुन रहे हैं आप। "Engineer - You Can Hear" मात्र 8-9 महिने में वह इतना कमाने लगा। शिक्षा क्या है? अर्थ पुरुषार्थ क्या है? इतना ही बताना चाहता हूँ। आज इंजीनियरों की हालत ये है कि 5-5 हजार की नौकरी कर रहे हैं। दुनिया क्या कह रही है? विकासशील देश में। शील हो तो विकास हो। शील का मतलब धर्म हो। कुछ लक्ष्य होता है, तभी विकास होता है। आप लोग तो बस आशीर्वाद दे दो हाथ उठाकर।

हाथ का मतलब संकेत होता है। आज भजन सुना रहे थे - हमें शक्ती की जरूरत नहीं है - हमें तेरे चरणों के निशां मिल

गये है। चलने वाले तो गयी बस उनके चरणों के निशान (चिन्ह) को पहचान लो फिर पूरी खोई मायने नहीं रखती। फिर कोई प्रश्न चिन्ह नहीं मात्र उत्तर ही उत्तर है।

जब गणित करते थे अंतिम पृष्ठ पर उत्तरमाला होती थी। हम मौखिक करके पहले ही उत्तर बता देते थे। यहाँ ये प्रक्रिया जानने वाला ही बता सकता है। गणित का हल एक ही सकता है, परन्तु प्रक्रिया अलग-अलग हो सकती है। जैसे - २० की संख्या लाना है - १०+१०=२०, ३०-१०=२०, १०० में ५ का भाग देतो २०, ५×४=२० उत्तर की ओर देखने लग जायेंगे तो गड़बड़ हो जायेगा। २×२=४ जब की ३×३=९ कहलायेगा एक में जोड़ है तो दूसरे में गुणा। गुणित क्रम से होता है।

अर्थ बढ़ेगा तो भी व्यवस्था गड़बड़ होगी। आज अर्थ का अर्थ नहीं समझ पा रहे। अन्यथा न ले। अभी नोट बंदी हुयी तब कितना हो गया। नोट बंदी बीच-बीच में होती रहनी चाहिए। जिन्होंने अर्थ पुरुषार्थ को नहीं समझा, वे सब गाफिल हो गये। C.A. की पढ़ाई होती है अर्थ के बारे में बताया जाता है। अर्थ पुरुषार्थ के बारे में नहीं बताया जाता।

केवल अर्थ और बैंकिंग के बारे में बताना

यह अधुरी पढ़ाई है। इसीलिए वह अर्थशास्त्र से विमुख है। अर्थशास्त्र वहाँ पढ़ाया ही नहीं जाता। जबकी अर्थ कौटिल्य तो अर्थ कौटिल्य कहलाता है।

जैनाचार्यों ने व्यवहार चलन के लिए अर्थ में 10 प्रकार के परिग्रह को बताया जिसमें हिरण्य भी एक परिग्रह है। व्यवहार अर्थ पुरुषार्थ से चलता है अर्थ से नहीं। इस अर्थ के साथ जीवन तभी सुरक्षित रहता है जब अन्य बातों पर भी ध्यान दें जैसे - हवा है प्रकाश है आदि। बैंक बैलेन्स बहुत है - आप अनबैलेन्स हो जायेंगे। अर्थ पुरुषार्थ का मतलब अर्थ से सुलझना है।

स्वतंत्रता से पूर्व ही बैंकों की स्थापना हो गई। क्यों? मैं पूछना चाहता हूँ कि आजादी से पूर्व (सन् 1935) ही बैंकिंग व्यवस्था इसलिए कि बाद में पता नहीं क्या करेंगे? मद्रास में भी Indian Bank की स्थापना 1935 में ही हो गयी थी। उस समय इंडियन शब्द का प्रयोग कैसे हुआ। किसी का ध्यान नहीं गया, क्यों की सबका ध्यान मात्र अर्थ की ओर था। ईस्टइंडिया कम्पनी की स्थापना पहले ही हो चुकी थी वहीं से ये इंडियन शब्द आया।

कोई ने नहीं सोचा, इसलिए महाराज! सूत्र की व्याख्या जरूरी है नहीं तो सब गड़बड़ हो जायेगा। दादा

भाई नौरोजी ने कहा अर्थ की गुलामी हमेशा-हमेशा बनी रही इसी उद्देश्य को लेकर रिजर्व बैंक ऑफ इण्डिया (RBI) की स्थापना हुई।

की स्थापना करना था। उसी की आज 2500 शाखायें हो गयी है। आज प्रत्येक व्यक्ति के लिए अनिवार्य हो गया है। दादा जी वगैरह अच्छा पहन लिया थोड़ा सा सतुआ खा लिया फिर बाहर चले भी जायें तो लू वगैरह की परवाह नहीं। वर्तमान में चिकित्सा के लिए भाग रहे हैं। जब की आपने पास सब है।

जल नहीं पावे, प्राण गमावें, भटक-भटक मरता। वस्तु परायी, माने अपनी, भेद नहीं करता।। "भेद विज्ञान जिसके द्वारा हो वही शिक्षा है।" भेदविज्ञान नही तो भेद डालते जाओ-यह विदेशी नीति है। "Divided and Rule" भेदविज्ञान महत्वपूर्ण है। ऐसी शिक्षा यहाँ छात्राओं को शिक्षिकायें प्रदान कर रही है। आज पहले तो मध्याह्न का सोचा था, पर क्या पता प्रकृति साथ दे या न दे अतः इन लोगो ने अभी रख लिया।

समाधी दिवस तो गर्मी में ही आता है। आप लोगो ने भी बड़े ही धैर्य के साथ उघण्टे सुना। शान्ति के साथ, कर्त्तव्य की पुरुषार्थ की बात सुनी। इसे अपनायेन्गे तो फिर मोक्ष पुरुषार्थ तो

चुटकी बजाते-बजाते आयेगा।

"जो कर्मे सुरा - सो धर्मे सुरा" जो कर्म में सूर होता है, वही धर्म में सूर होता है। इस प्रकार यहाँ कर्म की नहीं सक्रिय सम्यग्दर्शन प्रशिक्षण शिविर धर्मी में हो रहा है। यहां की कर्मठी शतदिन तत्पर है। अब तो शांति मिल गयी। प्रसन्नता के साथ तन-मन-धन खर्च करते हैं। कार्यकर्ता तब तब प्रसन्न नहीं जब उनकी समीक्षा नहीं करते। कुछ आलोचना हो तो भी उसको सुधार लेता है। प्रतिभा मण्डल की लक्ष्यार्थों ने भी ग्रामीण इलाकों में जाकर महिलाओं से सम्पर्क किया।

जरूरत मंद को धंधा मिल गया। परिश्रम करने योग्य तन को प्राप्त कर रहे हैं, सभी संतुष्ट हैं अन्यथा 9 से 4 5 और 5 5 से 10 8 कैसे होते? अभी कुछ लोग लाइन (पंक्ति) में लगे हैं। आगे की योजना है यहाँ की कर्मठी, प्रतिभा मण्डल और अब एक और मण्डल (पूर्व-पिछिका) देखें। मण्डल पर मण्डल तैयार हो रहे हैं। गमछा गुरुजी का रहस्यपूर्ण है। बुद्धो को क्या हमको भी नयी स्फूर्ति आ जाती है।

जेठ मास की अमावस्या के दिन 2 वर्ष तक राजस्थान में अकाल के समय की बात। यदि रेत का एक कण भी शरीर से आकर चिपकता तो ऐसा लगता मानो भाड़ का चना उचक्कर टकराया हो। ऐसे में भी पूर्ण आपत्ति के साथ अतिभक्षण

तक संलेखना का पाठ पढ़ाते - पढ़ाते चले गये। अलग से पढ़ाने की आवश्यकता ही नहीं। आप जैसा ही जीवन मिले।

उन्होने कहा निमित्त-निमित्त का इंजेक्शन तभी जब उपादान सही हो। आंखे बंद कर रखी है तो चश्मा क्या काम का? चश्मा उपनयन है नयन नहीं। चश्मा तो चश्मा है आंखो को पहले खोल - स्वयं भगवान भी आ जाये तो कुछ नहीं होगा। आंखे खुली रहेगी तो बोध उत्पन्न हो जायेगा।

गुरुजी बहुत ही सोच समझकर हम जैसे नादान को भी - तुम जैसों को नहीं। वर्षों तक उनका काम किया, उनकी कृपा थी अतः वह पाठ भी सरल हो गया।

अहिंसा परमो धर्म की जय। ॐ

कुछ हट के -

- शौच अथवा लघुशंका की बाधा को कभी रोकना नहीं चाहिए।

संस्मरण - सिद्धवर कूट से विहार हुआ। गर्मी का समय उसमें भी नौ तपा का समय चल रहा था। आ० श्री० पहले दिन जंगल नहीं गये दूसरे दिन ग्राम में भी जंगल नहीं तो बिहार स्थगित हो गया, फिर मिट्टी पट्टी आदि उपचार से जंगल हुआ तो आगे बढ़े।

26-8-17 "दूध - पानी का अन्तर बताता प्रथमानुयोग" प्रातः 11.40

प्रथमानुयोग ग्रन्थो को जब पड़ते है तो श्रद्धान में क्षायिकपना आये बिना नहीं रहता। दृढ़ता आती है इन ग्रन्थों के स्वाध्याय से। दूध का दूध और पानी का पानी कर देता है। अभी तो बिल्कुल ऐसा बैठा है जैसे दूध का धुला हो पर मट्ठा से भी नही धुला है।

कर्म कब उदय में आवेगा और कितने अनुभाग के साथ आवेगा कोई पता नहीं यह इन ग्रन्थों से स्पष्ट हो जाता है। रामचन्द्र जी को देखो - 8000 रानियों के साथ विवाह किया। आज तलाक-तलाक-तलाक की चर्चा। विवाह का अर्थ ही नहीं समझ पा रहे हैं। संभवसागर जी- लक्ष्मण की 16000 पत्नियाँ फिर भी राम के साथ वनवास में रहें।

रावण - सीता के भवों की कहानी उनके बारे में तो जानकारी मिल रही है, मैं राम के भवों के बारे में जानना चाह रहा हूँ। □

□ प्रत्यक्ष ज्ञान और परोक्ष ज्ञान में बहुत अन्तर है। आप सभी महाव्रती है अतः कभी भी अपने ज्ञान से निर्णय मत दो अन्यथा लुट जाओगे। आप कुछ भी बोलोगे वह नहीं हुआ तो फंस जाओगे।

□ निष्पक्षसागर जी का नमक के पानी पीने से उल्टी होने पर आ० श्री ने कहा बुखार में नमक का पानी अच्छा रहता है, या तो उल्टी या फिर तापमान को तो कम करेगा ही।

नँ

27-5-17 "सार्थक हो शब्द-साधना" प्रातः 7.30

मौन साधना सर्वश्रेष्ठ साधना मानी जाती है। मौन से शब्द सिद्धि एवं वचन सिद्धि होती है। शुरुआत में धीरे-धीरे बोलकर अपना काम कर सकते हैं। आप लोग रात में कैसे काम निकालते हैं - धीरे बोलकर तो दिन में क्यों नहीं कर सकते हैं? तेज बोलने से वृतों में भी दोष आ जाते हैं। आप ऐसा बोलें कि सामने वाला व्यक्ति और चाहेगा - और बोलें।

आपका और आपके शब्दों का महत्त्व और बढ़ जाता है। आज मोबाइल इत्यादि के जितने भी प्रयोग हो रहे हैं उसमें आप ही देखलें आवश्यक कितना है और अनावश्यक कितना हो रहा है। हमारी साधना रहती है। बैठे-बैठे क्या करें? चलो फोन कर लो। नहीं यह गलत है। आवश्यकों को समय पर करें। अपने पर प्रयोग करेंगे तभी ये संकेत काम आ सकते हैं।

हिसाब लगा लो जितना कम बोलना पड़े उतना अच्छा होता है। इससे बंध कम - निर्जरा ज्यादा होगी। दुकान ही नहीं संभाल सको तो हम कैसे खोलकर दे हैं। पूंजी लगाना पड़ती है। आज इस ओर सोच-विचार की कमी हो गयी है। हम सोचते हैं निर्दोषता कब आयेगी? सुन रहे हो? पढ़ा-लिखा है - सब कुछ है - संख्या बढ़ती जायेगी। जिससे हमारी आमदनी बढ़ती हो, घाटा कम

लगता हो उस कार्य को करना अच्छा माना जाता है।

इस दिशा में यदि नहीं सोचते तो आपका शिक्षिका बनना और उन छात्राओं के भविष्य को कैसे उज्जवल कर पायोगे। मोबाइल में जमाना (संसार) आ गया। शैक्षात्मक दृष्टि से निष्कर्ष सबके सामने आ रहे हैं। आणविक शक्ति (तरंगे) ऐसी इसके माध्यम से भयानक रोग हो रहे हैं। मोबाइल का शरीर पर कितना दुष्प्रभाव पड़ता है एक लेख पढ़ा था-इसे कहाँ रखना - कहाँ नहीं रखना। सुन रहे हो कि नहीं। आज मोबाइल की संख्या बढ़ती जा रही है।

भिन्न - भिन्न स्थानों से आप सब आयी हैं। संख्या बढ़ती जा रही है। पूर्व पिछिका की भी पूर्व पीछिका हो गयी है। ये सब होता है तभी ठीक है नहीं तो ये योग घाटे का हो सकता है। हम आपके कहने से बोल रहे हैं तो हमारा भी घाटा हो जायेगा। पुनः-पुनः वही बोलना - दुरुपयोग नहीं होना चाहिए। अध्ययन की दृष्टि, धर्म की दृष्टि, शरीर की पुष्टि आदि से सोचेंगे तो समझ में आ जायेगा।

सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्र के रूप में परिणत होगा। असावधानी भी बंध में कारण होती है। इससे असाता का भी बंध हो सकता है। कर्म सिद्धान्त के अनुसार भी छठें गुणस्थान तक असाता कर्म का बंध होता है। आप क्या चाहते हैं?

महाराज साता नहीं है?

इसलिए ज्ञान को उपयोग में लाओ तो दुकान अच्छी चल जायेगी। थोड़ा आस्रव-बंध तो होगा पर वह लाभ देने वाला होगा। हमारा आशीर्वाद भी तभी काम करेगा। जो उल्टा चलता है उसके लिए आशीर्वाद भी काम का नहीं। आप लोगों को प्रत्येक घड़ी आस्रव हो रहा है। काम में आने वाली बातें हमेशा-हमेशा याद रखते हैं। साता का बंध भावों पर आधारित है। प्रमाद के साथ है- मुनिमहाराज है- रत्नत्रय है तो भी असाता का बंध हो सकता है।

अन्यथा प्रवृत्ति से बचने का नाम संयम है। नहीं है तो आप अच्छे ढंग से चलो। अन्यथा दिवालिया होने में समय नहीं लगेगा। सामने वाला खरीदना चाहता है या नहीं। राजी हो गया माने खरीदना चाहता है अब तेजी करने से क्या मतलब। आज देखा भी नहीं- बोला भी नहीं- बुलवाया भी नहीं फिर भी चल रहा है। उत्तर क्या लिखोगे?

संकेत के अनुसार चल रहा है। जो नहीं चल रहा है उसको क्या संकेत? बैट्री (Battery) चार्ज होने के योग्य ही नहीं तो क्या होगा। अपनी-अपनी बैट्री को चार्ज होने के योग्य बनाये रखो नहीं तो हमारा भी खराब हो जायेगा। इसको बोलते हैं सावधानी। जिसको पालता है, उसी को कहा जाता है।

बाहर जा रहे हो। मां कहती है - बेटा - देखभाल कर चलना अन्यथा गिर जाओगे। मार्ग ही ऐसा है, इस प्रकार ही कहा जायेगा।

बोलना नहीं है। बोलना उतना ही जितना पर्याप्त हो। परीक्षा में पेपर में कितना लिखा ये महत्वपूर्ण नहीं है। प्रसंग के अनुसार लिखा है या नहीं। पुरुष उत्तर पुस्तिका से ज्यादा नम्बर मिल जायें ऐसी बात नहीं है। होश-हवाश में लिखना आवश्यक है। "शिक्षक संयमी ही होता है, इस बात को कभी मत भूलो।" वह सोचता है तो संयम से, देखता है तो संयम से, लिखता है तो संयम से असंयम से नहीं। रात में भी बना रहता है।

शब्द तरंग की भांति दूर तक चले जाते हैं। शब्द कभी भी सीधे कान में नहीं घुसता किन्तु टकराना आवश्यक है। टकराने के उपरान्त ही वह कर्ण का विषय बनता है - इस प्रकार का आगम वाक्य है। आपने आगम के अनुसार बोला है - अच्छे भावों से बोला है उसका अनुभाग दूर जो बैठा है वहाँ जाकर के उसको प्रसन्न करेगा और यदि गलत भावों से बोला है वह भी दूर जाकर उसके लिए बाणों का काम करेगा अर्थात अभिशाप का भाव होगा तो वैसा ही काम करेगा।

देवों में भी शापानुग्रह शक्ति होती है, जो

ऊपर-ऊपर बढ़त क्रम से होती है। शब्दों में भी बढ़त और घटत क्रम का असर पड़ता है। अच्छे भावों से शब्दका निर्माण किया अच्छा काम होगा / उसकी उम्र कितनी है। कहते हैं न आपके शब्द अभी तक भी ज्यों के त्यों कानों में गुंज रहे हैं। गुंजन अभी तक आपने किन भावों से शब्दोंका निर्माण किया है।

जैसे घण्टा बजाते हो, बजाने के बाद भी झंकार सुनाई देती है। कान के परिक्षण करने वाले उसी आधार पर जाँच करते हैं कब तक आवाज सुनाई दे रही है। बहुत सूक्ष्म (प्रभाव) सुनाई दे रहा है। इस प्रकार ये शब्द उत्पन्न होते रहते है। विज्ञान ने शब्द को पदार्थ माना है। लोक के अन्त तक दो समय में शब्द यात्रा कर लेता है। प्रथम समय में उत्पन्न होता है, दूसरे समय में लोकाग्र तक पहुँच जाता है। बस दो ही समय लगते हैं।

अब हम आपसे पुछना चाहते हैं कि आपने शब्द निकाला - शापानुग्रह शक्ति के साथ / उस शब्द से सूक्ष्म जीव तो नहीं टकरायेंगे किन्तु बादर जीव टकरायेंगे और बाधित भी होंगे। दिवार को भी भेदकर जाने की शक्ति है शब्द के पास। अब विचार करो इतने जीवों को घातते हुये वह शब्द यात्रा करता है। अतः बोलने की सार्थकता होनी चाहिए। आपने

तो दे दिया अब वह टकरायेगा। जिसके पास इंटेलिजेन्स (Intelligence) उसी से जाकर टकरायेगा।

जिस प्रकार मिसाइल आदि छोड़ते हैं। उनके नंबर होते हैं ऐसे नहीं की जहाँ कहीं भी छोड़ दें। उतनी क्षमता के अनुसार वह काम करती है। वचन वर्गणा की तरह ही मनोवर्गणा के अन्तर्गत भी आ जाता है। आपने यहाँ बोला अथवा मन में सोचा वहाँ उसके कानों में Ear Phone लगा है ऐसे उसको सुनाई देता है। सब समझ में आ जाता है। सम्प्रेषण की क्षमता बोलते हैं।

इसलिए आपको एक-एक मिनिट सतर्क रहने को कहा। आचार्यों ने हमें सावधान कर रखवा है - करने योग्य हो तो ही करिये अन्यथा मत किजिये। महिनों तक नहीं, वर्षों-वर्षों तक चलता रहेगा। उसके पास पिच्छी भी नहीं - रुमाल भी नहीं सोच लो। अतः धीरे-धीरे चलिये, भावों को संभालते रहिये। अच्छे-अच्छे शब्दों को बोलिये।

आप पूछते हैं - महाराज ये कैसे करें। तो पुराण ग्रन्थ पढ़ लिजिये। कैसे सीता, राम बच रहे हैं। सारी की सारी विधियाँ - रास्ता - अयन बता रखे हैं उसी अनुसार चलते हैं। बहुत सोच-समझकर अपने शब्दों को निकालिए। हम तो अभ्यासी हैं - ऐसा अहंकार मत

करीये। मन-वचन-काय की स्थिरता इसके लिए बहुत जरूरी है।

धारणा बनाना है। इतना ही पर्याप्त समझता है। विषय वस्तु के अनुसार - विज्ञान के अनुसार- सिद्धान्त के अनुसार आप लोगों की भाव प्रणाली आधार पर हमने यह विषय रखा। परिणामों के आधार पर ही फल मिलता है। शब्दों का निर्माण - यह बड़ा कठिन पेपर है। आप लोग तो ऐसो - ऐसो कह रहे हो। सूक्ष्म से सूक्ष्म उतना ही परिणाम मिलता जायेगा।

दूसरी प्रतिभा में भी व्रतों के अतिचारों से बचने हेतु त. सू. में आया है वचनों का सही प्रयोग हो। इस बारे में चिंतन नहीं तो कैसे होगा। देवगति में अलग पूंजी एवं मनुष्य गति में अलग पूंजी मिलती है। मनुष्य गति की पूंजी मोक्ष का समर्थन करती है। गंभा करके नहीं कमा करके उपयोग करो। बहुतों ने स्वीकार कर लिया, कुछ नहीं करते हुये भी शामिल हो गये। अशुभ कर्मों की निर्जरा का माध्यम है। इतना ही कहना है।

नं० तभी मिलेगा जब सही हल करते हैं। अब आप व्रती हो गये हैं। अपनी के ऊपर गलत प्रभाव न पड़े। व्रती की अपनी सीमा रेखा होती है। ये अनिवार्य है इसलिए कहा। हमारी अपनी आमदनी बढ़े, इसलिए हमने कहा

यह पक्का है। आप सभी के लिए भी राजमार्ग खुल जाये यह उद्देश्य है। प्रासंगिक है।

ये सब बातें ध्यान रखना जरूरी है। एक-दूसरे के पूरक बनो। अभी 16वें स्वर्ग से ऊपर नहीं, निर्जरा करना है। दो दल होते हैं- नरम दल एवं गरम दल। नरम बनकर काम करोगे तो काम होगा। गरम होगा तो नरम भी होगा। जो भी हो - नरम बनो। अभिमान को छोड़कर उसे जला दो। दवाई काम कर जायेगी। आप लोग चौके में क्या करती हैं- पहले दिन ही तैयार करके रख देती हैं कि क्या बनाना है।

दाल है चावल है आदि-आदि

प्रातःकाल का समय बच जाता है तैयारी पहले से हो तो। भविष्य की चिंता नहीं करना है। व्याख्या ऐसी हो जिसके द्वारा अर्थ सरल हो जाये एवं समझ में आ जाये। शब्द ऐसे लेना चाहिए कि व्याख्या की जरूरत ही न पड़े। मौलिक भाषा का उपयोग करें शब्द कोष का नहीं।

अहिंसा परमो धर्म की जय हो

प्रश्न जो अनुत्तरित है -

- मारणान्तिक समुद्घात का कारण क्या?
- योग निरोध के काल में असमानता क्यों?
- राम को 14 वर्ष के वनवास का कारण क्या?
-

28-5-17 "बोधात्मक नहीं - शोधात्मक है" स्नातकोत्तर" प्रातः 7.30

भाषा माध्यम है भावों को देने के लिए। जंगल में रहने वाले भी एक-दूसरे को अपनी भाषा में भावों का आदान-प्रदान करते हैं। टूटी-फूटी भाषा है उनकी, वे जो करते हैं हम लोगों को उसका ज्ञान न होने के कारण समझ में नहीं आ पाता। भिन्न-भिन्न देशों में भी इसी प्रकार होता है। धीरे-धीरे भाषा परिष्कृत होती है - हम मंज जाते हैं। मंज जाने का मतलब पेंसिल-पैन से लिखते-लिखते अच्छे ढंग से लिखने लग जाते हैं।

इसी तरह भाषा में है, देशी भाषा से शुरुआत करते हैं फिर उसमें आम भाषा शामिल होती जाती है। बस सजातीय भाषा होना चाहिए। बुरी चीज की आदत पड़ जाती है तो सही चीज की तरफ आना बहुत ही कठिन होता है। पैर ही नहीं उठते। बोलो पर्याय ही बदलेगी तब ही होगा - कुछ लोग तो ऐसा मानते हैं। सोचने में आता है क्या कर रहे हैं आप। नायक शब्द के माध्यम से दूसरे का भाव पकड़ में आ जाता है।

मैं कहना कुछ नहीं चाहता - कथ्य आपके दिमाग में आ रहा होगा। वस्तु का परिचय पहले कराना चाहिए, ज्यादा भाषा में उलझना ठीक नहीं। शब्दों का जाल बिछाना ठीक नहीं है। दो प्रकार से चित्र बनाते हैं - एक पेंसिल

के माध्यम से रूपरेखा (outline) । कभी-कभी वह outline बारीक भी होती है। दूसरा चित्र रंग से भरा होता है। रूपरेखा बनाने का अर्थ रेखा से ही रूप आता है यह गलत बात है।

रूप जो आता है वह वस्तु का अपना होता है, रेखा से उसकी अभिव्यक्ति होती है। काव्य दो प्रकार के होते हैं - दृश्य काव्य एवं श्राव्य काव्य। दृश्य दिखाता है श्राव्य सुनाता है। सुनने से दिखाने का महत्व ज्यादा है। चित्र बनाना - रबड़ से मिटाया पेपर घिस दिया अब दूसरा पेपर (पन्ना) मिलने वाला नहीं है। ये सब विद्यायें धर्मनिष्ठ पदार्थ तक नहीं जाती तब तक ये सब संकेत का काम, भूमिका का काम होता है, इसी को शिक्षा कहते हैं।

शिक्षा ज्यादा हो जाती है तो भी अल्प समय में लक्ष्य तक नहीं पहुंच पाते हैं, आज ये ज्यादा हो रहा है। परोक्ष के माध्यम से हो रहा है अथवा सांव्यवहारिक प्रत्यक्ष के माध्यम से। श्रवण-स्मरण में परोक्ष ही है। इससे ऊपर उठना है। Reading, Hearing, Writing और Speaking (Speaking) इन सबसे Learning अपने आप में अलग है। बच्चों को उसी में तैयार करो।

पाँचों इन्द्रियाँ जहाँ काम काम नहीं करती उस अरूपी के लिए शब्द का माध्यम क्या? अनुमान इत्यादि से ही काम होता है क्यों की प्रत्यक्ष तो है ही

नहीं। सुन रहे हैं की नहीं।

वहाँ रंग-रोगन कुछ नहीं है, बच्चों को रंग-रोगन चाहिए। रंग-रोगन सांव्यवहारिक प्रत्यक्ष में आ जाता है। यद्यपि इसको ज्यादा महत्व नहीं है, पर अपने आप में महत्त्व है। शिक्षा के क्षेत्र में सांव्यवहारिक प्रत्यक्ष का महत्त्व है। पांचो इन्द्रियों के विषयों में भी सांव्यवहारिक प्रत्यक्ष लगाया जाता है जैसे- ठण्डा-गर्म आदि। चुटकी बजा दी इसका अर्थ क्या है?

कर्ण इन्द्रिय का विषय है चुटकी। बच्चा भी चुटकी बजाते ही प्रसन्न हो जाता है। उसको सांव्यवहारिक प्रत्यक्ष हो गया। इससे कोई भी अपना भाव प्रकट करता है। परीक्षा न होते हुये यह प्रत्यक्ष के निकट ले जाने वाला होता है। इस प्रकार शिक्षा की पद्धति को सांव्यवहारिक प्रत्यक्ष की तरह चलायें तो बच्चों एवं शिक्षकों सबका भला होगा।

यही लघु शोध प्रबंध है जो शिक्षकों को प्रबंध देना चाहता है। M.A. (16वीं कक्षा) स्नातक का ही दूसरा रूप है, जो शोधात्मक रूप रखता है। शिक्षा का बोधात्मक रूप स्नातक तक ही मानता हूँ। अब बोध की बात नहीं शोध की बात करिये। शोध का अर्थ स्नातकोत्तर है। स्नातक शोध नहीं है। शोध में मंथन की बात है। जब कक्षा में पढ़ते हैं तो एक-एक कक्षा ही पढ़ते हैं किन्तु जब स्नातकोत्तर में आते हैं तो एक

वर्ष नहीं दो वर्ष लगते हैं।

प्रश्न उठता है कक्षा में एक वर्ष क्यों एवं यहाँ दो वर्ष क्यों? वहाँ बोध की बात है यहाँ शोध की बात है। बोध अब समृद्ध हो गया है अब तो उसे शुद्ध प्रयोगात्मक करना है, चुलिका/अवशेष के रूप में वर्णन करना है। शिक्षा समय खाऊ नहीं होनी चाहिए। समयखाऊ अर्थात कालभक्षी बोलते हैं। पहले ऐसा नहीं होता था।

आचार्यों ने कहा भोजन करने के लिए तो 15 मिनिट ही पर्याप्त है - पाचन के लिए समय चाहिए। सुन रहे हैं? जठराग्नि तेज भी हो तो 3-4 घण्टे तो चाहिए ही। शिक्षा में भी ऐसा ही है - बोलने या सुनने के लिए 10-15 मिनिट ही पर्याप्त है पर उसे पचाने के लिए - "विद्याकालेन पच्चयते" कहा। स्नातकोत्तर (शोध) के लिए समय अनिवार्य है। मैं इसे कक्षा नहीं मानता।

पूर्व पीठिका कह दो, लघु शोध प्रबंध भी कह सकते हैं। कुछ ऐसे प्रशासनिक शिक्षा के बारे में सोचते हैं तो उसमें स्नातकोत्तर (P.G.) नहीं केवल स्नातक होना पर्याप्त है। बाद में वह प्रशिक्षण के रूप में आ जाता है। प्रशिक्षण सांकेतिक होता है उसमें कक्षा लगाकर पढ़ाने की बात नहीं है। शिक्षा की अवधी कम हो - कम का मतलब ज्यादा कम नहीं। प्रयोग में लाने जायेंगे तो अपने आप ही

होता चला जायेगा।

पाठ्यक्रम पर आधारित होता है, जैसे पाचन जठराग्नि पर आधारित होता है। जैसा सामने वाला शिक्षक पढ़ा रहा है उसको पढ़कर विद्यार्थी हाथो-हाथ प्रश्न भी कर लेता है। तीन बार में आत्मसात हो जाता है - कानों से सुना - पृच्छना (प्रश्न पूछा) और फिर अनुप्रेक्षा (दोहराना) अब पढ़ने की कोई आवश्यकता नहीं है। आगे फिर चाहते हो तो आम्नाय करो। आम्नाय अर्थात स्पष्ट रूप से उच्चारण (बोलना) फिर चौथा स्वाध्याय का भेद आता है - धर्मोपदेश। स्थायी बनाना चाहते हो तो धर्मोपदेश करो।

इससे आगे कुछ शेष रहता ही नहीं है। स्वाध्याय के ये पांच ही भेद बताये हैं। पांच विधाओं के बाद न लिखने की, न ही पढ़ने की आवश्यकता है। पहले न किताब होती थी न ही कॉपी - स्मरण में रहता था। अब तो बस Notes लेते जाओ। Font Notes कहते हैं - font तो font ही बन गया है। पाठ्यक्रम में जो है उसका क्या होगा? देखो! आप लोग समझ नहीं रहे हैं।

माँ पढ़ाती रहती है, सुनाती भी है। उसके मुख से सुनती भी रहती है। गलत करता है उसे बुलाकर ठीक कर देती है। (ज्यादा पुस्तक की ओर ले जाते हैं तो गड़बड़ होता है। जैसी सीधा

रास्ता अच्छा रहता है। मोड़ है तो वह सीधा नहीं माना जाता। अब हाइवे भी सीधे हो रहे हैं। इसी प्रकार आज यह विधा है सीधा करने की आवश्यकता है। इसमें ज्यादा समय नहीं लगता।

उच्च स्तरीय शिक्षा हो रही है पर उच्चारण ही समाप्त है तो स्तर क्या होगा? जब तक पूर्ण नहीं वह लिखता - बोलता आ रहा है। पहले स्मृतिवर्धक विधायें थी - दिमाग में ज्यों का त्यों रह जाता था। तो यह स्नातक एवं स्नातकोत्तर शब्द बहुत महत्त्वपूर्ण है। दूसरा काम करना चाहता है तो स्नातकोत्तर की कोई आवश्यकता नहीं। L.L.B करता है अब L.L.M. की आवश्यकता नहीं किन्तु यदि प्रशिक्षण देना है तो वहाँ पात्रता की जरूरत है। शोध संबंधी परीक्षायें होती है जिसे P.G. आप कहते हैं।

प्रयोग की ओर आयें, सार्थक करना चाहे तो फिर med की ओर आयें। आपसे पूछना चाहता हूँ हस्तशिल्प आदि जो विधायें होती है उनमें पढ़ाई कहाँ तक होती है। वहाँ कुछ है ही नहीं। सुन रहे हो कि नहीं। जो जीवन निर्वाह के लिए सशक्त माध्यम है। जीवनोपयोगी कार्य इसी तरह होते चले जाते हैं। आप अपनी भाषा में उसे इंजिनियर आदि कहते हैं।

बहुत पढ़ा - लिखा है - सिविलइंजिनियर

है। हस्तशिल्प वाला आता है वह अपनी कला आपको दिखाता है - ये पेंसिल दिखाता है। पुछता है - कहाँ सीखा आपने। कौनसी विद्यालय में सीखा। कितने वर्ष में सीखा। आपके पास प्रमाणपत्र तो हैनहीं - हम तो प्रमाण पत्र के पीछे लगे हैं।

वह कहता है - हमारा प्रमाण पत्र कभी चोरी नहीं जाता है। न ही वह बिकता है। उठाकर ले जाना चाहो तो ले जाओ। इसको विद्यालय का रूप देते हो तो बहुत अच्छा होगा। ये बताओ एक किसान को हम इंजिनियर नहीं कहेंगे क्या? कृषिक Engineer है जो एक बीज को सहस्त्र बीज में परिवर्तन कर देता है। यह कला मात्र उसी के पास है। 4-5 महिने में ही प्रयोगशाला है उसकी।

ज्यादा पानी न हो अतः चारो तरफ मेड़ बनाता है। पानी अधिक होने पर मेड़ से बाहर रास्ता खोल देता है। सूर्यनारायण भी साथ देते हैं - हवा बहती ही रहती है। समय-समय पर खाद डालता रहता है। परिश्रम करता है बस काम हो गया। चार महिने में फसल लहलहाती है।

इतना उत्पादन संसार की किसी भी फेक्ट्री में नहीं हो सकता है। फिर पुछते हैं - आप कौनसे देश में पढ़कर आये हो। मतलब हमारी वस्तुनिष्ठ दृष्टि रहे। हमें शिक्षा प्राप्त करना

है ये रट नहीं लगाना हमें तो वस्तु प्राप्त करना है। आज की शिक्षा वस्तुनिष्ठ नहीं है।

संकेत के माध्यम से भी काम होता है। अंगुली से इशारा किया - मैं कुछ नहीं जानता - वो जानता है। शिक्षा देने वाला - शिक्षा लेने वाला और शिक्षा इन तीनों की महत्ता है। आइंसटीन ने कहा - "आज के लोग एक प्रकार से जो पढ़ रहे हैं - पढ़ा रहे हैं आदि - आदि कर रहे हैं वे चिंतन को नष्ट कर रहे हैं।" सुन रहे हो कि नहीं। जो व्यक्ति पढ़ रहा है, वह चिंतन नहीं कर सकता।

ये युक्ति है। अरे! सरस्वती को थोड़ा सा विश्राम तो लेने दो। 16-16 घण्टे जो पढ़ेंगे तो क्या होगा? पाठ्यक्रम ऐसा बनाया ही क्यों? सोचो तो सही। हमारी छोटी-छोटी सी कविताएँ बड़ी-बड़ी किताबों का निर्माण करा देती है। "खेती बाड़ी है, भारत की मर्यादा, शिक्षा साड़ी है।" इस पर अब बच्चों द्वारा शोध लिखा जायेगा। बड़ी-बड़ी किताबों से मतलब नहीं। सार क्या है? प्रयोजन क्या, अर्थ क्या है?

इसलिए हमें चिंतन की ओर आना चाहिए। महाराज चिंतन की ओर बढ़ जाते हैं तो हिमांग में कुछ भी नहीं आता। पहले भी हिमांग में कुछ नहीं था - मात्र किताब थी। स्वयं के चिंतन

से शब्दों का विस्तृत अर्थ निकाल सकते हैं।

आइंसटीन ने सही कहा- आज की शिक्षा प्रणाली भी चिंतन को नष्ट कर रही है। आपकी भावाभिव्यक्ति - आपकी शैली यह बता देती है कि इनके चिंतन की शैली क्या है। वाक्य का निर्माण - प्रस्तुति आदि से नहीं भी बताना चाहो तो भी सामने वाला समझ जाता है। प्रस्तुति का अर्थ जानते हो? "प्रकृष्ट रूपेण स्तुति इति प्रस्तुति।" प्रकृष्ट रूप से स्तुति करना प्रस्तुति है। प्रस्तावना जिसे कहते हैं। प्रस्तावना पढ़ते ही उस ग्रन्थ का सार दिमाग में आ जाता है।

आज बच्चों के लिए ये सब न होने से हानिकारक हो गया। कब - कितना - क्या लेना चाहिए ये प्रक्रिया ही समाप्त हो गयी है। समय आपका हो गया है। कुशाग्र बुद्धि - प्रत्युत्पन्न मति - व्युत्पन्नमति वाले होते हैं। ये शब्द ऐसे हैं उसी प्रकार देखो। कभी पूछा नहीं आज पूछ लेता हूँ ये सब अखबार ले जाते हो इसका कभी उपयोग होता है या नहीं।

(सभी ने कहा - जी करते हैं) विषय वस्तु का आग्रहन हो। शोध प्रबन्ध हेतु पुस्तकों की संख्या नहीं देखना, 50 पृष्ठ में भी अच्छे से अच्छा शोध लिखा जा सकता है। चिंतन के माध्यम से ही शोध प्रारम्भ होगा है। "जितना पढ़ेगा उतना चिंतन को नष्ट कर रहा है।" "आंखें बंद करने से चिंतन की धारा खुलती है - आंखें खोलने से पढ़ाई।"

अहिंसा परमो धर्म की जय हो

29-5-17 "महत्वपूर्ण रस नहीं लोलारस" प्रातः 8.00

जहाँ लोकतंत्र रहता है वहाँ की स्थिति अलग एवं जहाँ लोकतंत्र नहीं रहता वहाँ की स्थिति अलग होती है। दोनों की एक ही तुलना हम कैसे करेंगे। एक जगह श्रम करके काम करना चाहती है यहाँ की जनता श्रम से बचना चाहती है। यहाँ की शिक्षा पद्धति एवं वहां की शिक्षा-प्रणाली में बहुत अन्तर है। जनता का राष्ट्र के प्रति क्या बहुमान है, वह शिक्षा पद्धति से अवश्य देख सकते हैं।

भिन्न-भिन्न भाषायें होती है-प्रत्येक राष्ट्र के प्रति बहुमान हो। आज अखण्ड होने से भारत सिकुड़ सा गया है। पहले जितनी भी जनता-छात्र-छात्रायें होते थे उनके सामने इस बात को रखा जाता है। आज पढ़ते-पढ़ाते हैं, कितना समय नीति के समर्थन में देते हैं। आप सभी शैक्षणिक क्षेत्र से जुड़े हैं यदि शिक्षा में संस्कार नहीं हो, यदि आप बहुमूल्य समय नहीं दे सकते तो क्या होगा।

अभी तक पाठ्यक्रम ही निर्धारित नहीं हुआ। 12वीं कक्षा का क्या होगा। इसलिए राजा जहाँ होता है, वहां की नीति अलग जहाँ प्रजा को ही राजा बना दिया जाता है तो फिर प्रत्येक व्यक्ति राजा हो जाता है। अब एक राजा-दूसरे राजा को पढ़ाये तो कौन पढ़ेगा। सुना तो था- चीन को भारत से 2½ वर्ष बाद स्वतंत्रता मिली किन्तु व्यवस्थापकों की बात को काटते हुये कहा

5 वर्ष बाद नहीं आज रात 12 बजे से सभी राजकार्य चीनी भाषा में ही होंगे। जितनी भी शिक्षा संस्थायें विदेशी भाषा आज से ही समाप्त।

भारत ऐसा सोच सकता है बातें तो बहुत करता है। चुनाव से पूर्व पंचवर्षीय योजना एवं चुनाव होने के उपरान्त दूसरे चुनाव की बातें करता है। जब बच्चे के पास भाषा ही नहीं तो भाव क्या समझेंगे। 70 वर्ष हो गये - इस प्रकार लाने का भाव ही नहीं कर पाये किया भी तो एकमत नहीं हो पाये। बहुमान नहीं होने से संघर्ष चलता रहा। पुनः प्रकाश में लाया ही नहीं गया। बैंकों में जो निर्णय लिये उन्हें छिपा नहीं सकते - लिखे हैं।

12वीं कक्षा तक का अध्ययन - अध्यापन भारतीय भाषा में हो। यही से नीति लागु हो, और महाविद्यालयीन क्रम जो रहेगा उसके लिए भारतीय शिक्षा के साथ भारतीय भाषा का ही प्रयोग होगा। तब तक भारतीय भाषा को भी हम इंग्लिश के समान रूप दे देंगे अतः Englishकी आवश्यकता नहीं। आज तक यह भाव अमल में नहीं आया। उस समय एक से एक धुरंधर भाषाविद् बैठे थे, क्या निर्णय लिया।

शासन की एवं शिक्षा विदों की क्या मंशा है - पता नहीं। विदेशों ने इसी नीति को अपनाया और आगे बढ़ गये। हर क्षेत्र में ऐसा ही

हुआ है उसका परिणाम आपके सामने है।

अनुसंधान के विषय में ये देश बहुत पीछे रह गया। इसीलिए विश्व की 200 विद्यालयों की सूची में भारत का नाम ही नहीं है। अनुसंधान हमेशा हमेशा देश के इतिहास पर होता है। हम दूसरे देशों पर अनुसंधान कर रहे हैं, अतः उन्हीं देशों की सुविधाओं को लाने में जुटे हैं। सुविधाओं की इतनी आवश्यकता है ही नहीं जितने आज हो गये हैं। शोध के बारे में मैंने कल भी कहा था।

शोध का मतलब जो अध्ययन किया उसका चिंतन प्रारम्भ कर दो। पाचन जो होता है वह लालरस से होता है। लालरस का मतलब समझते हो। लार / रस पदार्थ में है या जिव्हा में है? एकदम हाँ या ना में उत्तर क्यों दे रहे हो? (गलत बोलने पर) रस पदार्थ में हो सकता है पर लालरस तो जिव्हा में ही होता है। जब तक भोजन के साथ लालरस का मिश्रण नहीं तब तक पाचन नहीं हो सकता है।

बार-बार स्वाध्याय में रखना अनुप्रेक्षा है। शोध वाला अनुप्रेक्षा ज्यों का त्यों उसका अपना चिंतन होता है। रसीले पदार्थ तो बाहर से खरीद सकते हो पर लालरस तो जो कण्ठ में / जीव्हा में है वही रहेगा। यदि वह लालरस बाहर न आये तो वो किसी काम का नहीं। मान लो किसी को कण्ठ / गले में रोग हो गया अब सीधा पेट में छेद

कर नली लगा दी। उस नली से डाल दिया मुद्दा - कैसा लगा बेटा? तुम्हारे पसीन्दे व्यन्जन बनाकर पेट में डाल सकते हैं, खिला तो नहीं सकते। समझ में बात आ रही है?

70 साल से यही कर रहे हैं। जीव्हा से सम्बन्ध ही छुट गया। लालारस तो चला गया, लाला भी चले गये, लाली भी चली गयी। कैसे होगा? मंथन / चर्वण के बिना लालारस का निर्माण नहीं। शोध के लिए मंथन जरूरी है। मंथन के साथ काल की सीमा नहीं। इसके लिए एक वर्ष - दो वर्ष की अवधी नहीं। हर क्षेत्र में यह मंथन अनिवार्य था। किसी ने भी इसे नहीं देखा। हर शोध ग्रन्थ का निर्माण विदेशी शोध के आधार पर ही हो रहा है।

उसी की प्रशंसा हो रही है, वे ही उद्धरण दे रहे हैं। पौधों को बड़ी बना लिजिए। इसमें लिख भी दो - निर्देशक महोदय की कृपा से यह कार्य सम्भव हुआ है। इतिहास उन्ही का होगा। प्रभाव उन्ही के - संकेत भी उन्ही के होंगे। तभी तो हमने पुछा कि ये निर्देशक बनाने की परम्परा कहाँ से आयी है। कोई बात नहीं हम इधर से गिनती नहीं इधर (नीचे) से गिनती चालु कर देंगे। इतनी कुशलता तो हमारे पास है।

यदि रस ही हमारे पास नहीं है तो उसे आगे प्राणों तक कैसे पहुंचायेंगे।

शोध कार्य महत्त्वपूर्ण है पर दूसरों का शोध नहीं अपना शोध करना है। हमारा पाचन हमारे लिए काम में आयेगा दूसरों का पाचन हमारे काम का नहीं। इसमें नकल करनेकी कोई बात ही नहीं होती है।

शोध के लिए कभी भी शोध का पुनः कभी शोध नहीं होता फिर निर्देशक की क्या आवश्यकता है। आप अपने हाथ चलाते जाइये मंथन करते जाइये नवनीत जरूर प्राप्त होगा। कोई भी औषध (रस) तैयार की जाती है तो उसमें शक्ति बढ़ाई जाती है - वैद्य लोग जानते हैं। इस शक्ति को आयुर्वेद में पुट बोलते हैं। औषध वही है पर चोट पड़ने से शक्ति बढ़ती जाती है। यह चोट औषध नहीं किन्तु इस चोट के माध्यम से सुप्त अवस्था जाग्रत होती चली जाती है।

उसके भाग बढ़ते हैं जिसे अनुभाग भी बोलते हैं। अनुभाग भावों पर आधारित रहता है। वह क्षमता उस चोट पर आधारित होती है। वह चोट भी लोहे की चांदी - सोने आदि के खलबट्टे से अथवा अग्नि के माध्यम से भी दी जाती है। जिसके लिए अनिवार्य है उसी को ऐसी क्षमता वाली औषधी दी जाती है। सारा का सारा मंथन चोटों पर आधारित है।

अब निर्देशन क्या वस्तु है हमें बताओ। कक्षा में निर्देशक हो सकता किन्तु प्रयोगशाला में निर्देशक

की जरूरत नहीं। वो भारत को दिखना चाहते हैं कि हमारा नं० ये है। आपको डा० की उपाधी चाहिए। अतः ये सब हो रहा है।

आज इसकी कोई आवश्यकता नहीं की मैं प्रमाणित करता हूं/करती हूं.....। ये मेरा शोध है। मेरी अपने अनुभव/मंथन/दृष्टि है। आप कहीं से भी पूछ सकते हैं। जैसा मंथन मैंने किया वैसा किसी ने नहीं किया इसलिए निर्देशक की कोई आवश्यकता नहीं है। निर्देशन परम्परा कहां से प्रारम्भ हुयी ये भी शोध का विषय है। रात-दिन एक किये थे तब हुआ है यह शोध। वो घुमा रहे हैं आप घुमते जाते हैं।

वाहन को घुमाओ आप घुमो नहीं। वाहन से पहले स्टीरिंग (हैण्डल) उसे घुमाते हैं- आप तो स्वयं ही घुम गये। दुबला-पतला भी ३०-५० टन वजन को भी यूं घुमाते ही गाड़ी को घुमना पड़ता है। पैरों में Accelerator है- सब कुछ आपके हाथ में है तो फिर निर्देशक कौन है? जैसे ड्राइवर का एक सहयोगी होता है- Cleaner कहते हैं। उससे वह काम लेता रहता है। क्लीनर ड्राइवर नहीं है ये अलग बात है कि वह धीरे धीरे ड्राइविंग सीख लेता है।

इसलिए शोध विद्यार्थी को कहना चाहता हूँ कि निर्देशक से क्या मिलता है? फिर आज तो उप-निर्देशक, सहायक निर्देशक आदि-2 और हो गये हैं।

सम्पादक महोदय लेखक नहीं हैं किन्तु वह जो कुछ भी है उसका सम्पादन स्वयं करता है। लेखक कुछ भी देदे किन्तु सम्पादक महोदय तो आप हैं। शोध आपका अपना है तो उनके संकेतों के संकलनकर्ता हैं संपादनकर्ता नहीं। ये वचन कटु लग सकते हैं पर तथ्यपूर्ण हैं।

आज भारत से शोध प्रणाली उठ गयी। मात्र नकल हो गयी है। विदेश का अनुकरण कर रहे हैं। अध्यापन जो करता है - वादों की समस्या का समाधान करते - करते ही उसका शोध ग्रन्थ तैयार हो जाता है। एक समस्या का समाधान करने में छः छः या नौ महीने लग जाते हैं - अन्य कोई कर भी नहीं सकता। सामने वाला भी प्रभावित होता है। प्रश्न करते हैं तो शोध के विषय में करते हैं। परीक्षा का प्रतिफल शोध का विषय नहीं। प्रश्न पत्र के उत्तर में एवं शोध विषय में बहुत अन्तर है। अब आप ही समझ लें इसमें निर्देशक की क्या जरूरत। हाँ वह व्यवस्थित करने के काम आ सकता है।

मंथन आप का ही चलेगा। लालारस व्यंजन में नहीं व्यंजन में रस रहता है। व्यंजनों के उस रस से ऊपर उठना चाहते हो तो लालारस से ही आयेगा। यदि व्यंजन को भी घुटक लोगे गोली की तरह रस नहीं बनेगा। मंथन - चर्वण से रसदार बनाते चलिए। जितना - जितना अनुभाग बढ़ता जाता है उतने - उतने ही प्राण बढ़ते जाते हैं। जितना प्रयोग में लायेंगे उतना ही

बल - शक्ति - वीर्य - कान्ति बढ़ेगी। शोध का माध्यम पराश्रित हो गया है।

जो शोध मंथन कर रहा है, उससे किसी भी तरह से पूछ ले वह जवाब दे देगा। क्यों की वह उसकी अपनी कृति है। प्रमाण के साथ उत्तर देगा। आप घुमायेंगे तो भी वह नहीं घुमेगा। सामने वाले को भी मानना पड़ता है। इसलिए उनके (निर्देशक) हस्ताक्षरों के हस्तक्षेप की कोई जरूरत नहीं है क्योंकी अपना है। और यदि ऐसे ५०० पृष्ठ भी जो अपना नहीं तो वह सपना है। इसलिए शोध के क्षेत्र में भारत अभी बहुत पीछे है।

पीछे क्या अभी तो चालु भी नहीं है। इसी कारण २०० विश्व के विद्यालयों में भारत नहीं। सुनकर लगता है। जिसने सबको दिशा दी उसकी यह दशा। प्रतिभा सम्पन्न होने के बाद पढ़ाने का कार्य किया जाता है। गधा बोलते है- बच्चों का क्या रुझान है। उनकी जिज्ञासाओं को शान्त करना-उसी से मंथन करता है उन्हें संतुष्ट करता है। शोध का विषय बच्चों की कृपा का ही प्रसाद है। प्रश्न उठता है तभी मंथन प्रारम्भ होता है। शोध के क्षेत्र में पुस्तक का सहारा ही नहीं चाहिए।

संकेत देना भी है, जो पाठ्यक्रम है उसी के अनुसार प्रारम्भ कर दिजिए। हमारे यहां आगम

में इसी को अनुभाग बोलते हैं। औषधीय क्षेत्र में पुट/भावना बोलते हैं। सहस्रपुटी अभ्रक, चौंसठ प्रहरी पीपल आदि। उस औषधी को भावित-शोधित करते हैं।

संशोधित शब्द आता है। पारद को संशोधित करने वाला श्रेष्ठ वैद्य होता है, हर व्यक्ति यह नहीं कर सकता है इसी तरह हर व्यक्ति नहीं पढ़ा सकता है। कल चर्चा में सुन रहे थे जो बड़े ही धीमान (कुशाग्रबुद्धि) होते हैं उन्हें ही शिक्षक का काम सौंपा जाता था। पढ़ तो कोई भी सकता है पर पढ़ा नहीं सकता। इस प्रकार पहले भर्ती हो जाते हैं बाद में योग्यता के अभाव में आप पढ़ा नहीं सकते अतः जा सकते हैं। ऐसे ही Engineer एवं डॉक्टर्स का हाल हो रहा है।

योग्यता के अभाव में बस प्रमाण पत्र दिये जाते हैं - शोध में भी यही हो रहा है। मानस तरंग में लिखा - मूक माटी के बारे में - आलोचना की प्रणाली में लोचन दिये हैं इस कृति ने आधुनिक शिक्षा प्रणाली को। समालोचना न कड़ु होती है न मधुर - स्वरूप बताया जा रहा है। खुलम-खुल्ला छोड़ देना चाहिए ताकि मूल्यांकन सही-सही हो।

आज तक हम केवल मीठे स्वाद से ही आकृष्ट होते आये हैं। कड़ु आलोचना भी आवश्यक है। ऐसे लोगों को तैयार कर दो जो समालोचना कर सके। कितना संग्रह करोगे। संग्रह तो संग्रह होता है। दही का तो मंथन होता

है, तक्र का नहीं। उसका मंथन तो हो चुका है।

दूध भले ही खरीदकर ले आ सकते हो, मटकी भी, मथानी भी, रस्सी भी खरीद सकते हो किन्तु अपने ही हाथों से दूध का जो कुछ भी करना है सो कर लो अन्यथा नहीं जमा पाये तो फट जायेगा। दही को शोध नहीं कहेंगे क्यों की उसे नवनीत नहीं कह सकते। इस रस्सी - मथानी - मटकी की भी विशेषता नहीं। दही जम गया अब मंथन की विशेषता है।

पाठ्यक्रम के बाद शोध का विषय दही के रूप में हाथ में आता है। मेरा काम अब घी निकालने का है। घी निकालने के बाद वर्षों हो जायें तो भी कोई तब्दीली नहीं। ऐसा शोध का विषय मैं मानता हूँ। यदि कहीं कोई कमी है तो शोध अभी पूर्ण नहीं हुआ। एक विषय पर जीवन पर्यन्त भी शोध चल सकता है। पैसे के लिए करता है तो पैसा ही दिखता है - शोध नहीं। अब कक्षा की बात नहीं, निर्देशक की भी बात नहीं, शोध की बात है।

समय हो गया है। हम पिछड़े हुये है या बिछुड़े हुए है। पिछड़ना अलग है - पिछड़ गये किन्तु यदि बिछुड़ गये तो रास्ता ही अलग हो गया। चींटीयों से सीख ले सकते है। हजारों चींटीयां एक ही लाइन से चलती है, दूसरी दीवार के पास ही चलती है। आप लोग जिस कार्य को करने

जा रही उसे चिंटियों की तरह एकता के साथ करे।
"एकता वात्सल्य के अभाव में टूट जाती है, वात्सल्य
से एकता और मजबूत होती है।"

कई बार कह चुके हैं-
दोबारा कहूँ - याद भी कर सकते हैं। बीच में पूछता हूँ
याद भी करते हैं या नहीं। "स्मरण नहि उपयोग में लाओ।"
लालारस को याद रखेंगे तो पता चलेगा। व्यंजन नहीं
भी बनाते वे भी रस लेते हैं। रस तो प्रत्येक पदार्थ
का गुण है - पुद्गल का गुण है। 32 दांतो से रस नहीं -
जिव्हा से लालारस प्राप्त होता है।

इसीलिए निघंटु - चरक
आदि आयुर्वेद ग्रन्थों में भी कहा गया है - कभी भी
थूंकना नहीं चाहिए। उस थूंक में कई प्रकार के रोगों -
दोषों को दूर करने की क्षमता रहती है। श्लेष्म भी
उसका अपव्यय न करे - पौष्टिक होता है जो पचाने के
लिए आवश्यक है। उसी लालारस से पाचन शक्ति
समृद्ध होती है। पैसा खर्च मत करो बस श्रम पैदा करो।
सामने वाले दाँत मात्र दिखाने के लिए होते हैं। 32 दांत में से।
जैसे आपलोगों के यहाँ कुछ बर्तन मात्र सोफीस (दिखाने)
में रखे रहते हैं लाइन लगाकर (श्रम के बर्तन अलग ही
होते हैं।

आप लोग श्रम करीये - श्रम से रसो को उत्पादित
करीये। गरीबों के लिए कैसे करते हो? आप लोगो के लिए

कितनी व्यवस्था करनी होती है-ज्यादा खर्चीला मत होइए। खर्च कम हो-ज्ञान का अर्जन ज्यादा हो। ज्ञान की ओर ध्यान देंगे तो ठीक रहता है।

कल किसी ने चार लाइन लिख कर दी थी, नीचे लिखा था "पूर्वपीठिका"। एकता वात्सल्य के बिना नहीं। हमारा यही कहना है- "एक से जुड़ना नहीं किन्तु एकता का निर्माण करना है।" ता प्रत्यय (मय) उसी जैसा के लिए आता है। एकमेक हो जाना। इसका रस अलग ही आता है। कल 12वीं कक्षा का परिणाम सुनाया। सभी के सभी प्रथम श्रेणी से उत्तीर्ण हुए। पर छात्राये थी। भिन्न-भिन्न विषयों में योग्यता रखती है- उन्हें सामने लाये।

मनोविज्ञान - राजनीति - अर्थशास्त्र

में 90 से ऊपर नं. कहीं-कहीं 100 को छु लिया। उसमें यहीं की एक गुप्ता लड़की भी है जो जेनेरल है। समिति के बाद गुप्ति का ही नम्बर आता है। काय वचन से भी मनोगुप्ति कठिन है। मनोगुप्ति से वह शेत प्रतिशत नं. ले आयी। प्रतिभास्थली का नाम हो गया। छात्रा से भी अधिक खुशी आपको हो रही है हमारी प्रतिभास्थली की छात्रा है। उसको जितना आनन्द नहीं आपको जितना आता होगा। इसीलिए हमारे पास बताने के लिए घुम रहे हैं। जो कुछ भी एकता के साथ हो उसका परिणाम ऐसा ही निकलता है।

अहिंसा परमो धर्म की जय। नुँ

शून्य को स्वीकारा

30-5-17 जैन धर्म में... प्रातः 6.30

शून्य का आविष्कार जैनियों के यहीं से हुआ है। महावीर स्वामी की देशना में भी एक को संख्या नहीं माना, दो से संख्या स्वीकारी है। संस्कृत में भी एकवचन - द्विवचन एवं बहुवचन रूप सूत्र आता है। गणित - ज्योतिष - आयुर्वेद छंद शास्त्र इत्यादि सभी लौकिक शास्त्र में आते हैं फिर भी काम में आते हैं।

जहाँ अक्षरों का संकेत अंकरूप में देते हैं तो कम समय में अधिक अर्थ को समझ सकते हैं। जैसे Short-hand होती है सांकेतिक भाषा से कम में पूरा अर्थ समझ सकते हैं। इसी प्रकार गणित के माध्यम से - कब प्रारम्भ हुआ पता नहीं। भगवान महावीर स्वामी ने ऐसा बताया - दो तरह की गणित लौकिक गणित एवं अलौकिक गणित। पल्योपम, सागरोपम आदि सब अलौकिक गणित है।

विज्ञान शून्य को Nothing / Empty मानता है कुछ भी नहीं है बस 0 है। mile Stone दो तरफ से देखते हैं एक तरफ जहाँ जाना है उसकी दूरी दिखती है तो दूसरी ओर जहाँ से चले हैं वह। मैं पूछता हूँ क्या वह उलटा सिरवा है नहीं। उलटा नहीं सिरवा पर व्यक्ति की अपेक्षा सिरवा है। 0 का मतलब भी यही है।

भागफल में ज्यों-ज्यों संख्या बढ़ती जाती है त्यों-त्यों भागफल घटता जाता है।

संख्या बढ़ रही है ऐसा नहीं 1/2 है, 1/4 आदि।

दिन में भी लाइट का उपयोग करते हैं तो अपव्यय है। सूर्य प्रकाश का उपयोग करो। (घड़ी दिखाने पर लाइट वाली)

शिक्षा में आमूल चूल परिवर्तन आवश्यक है जो पढ़ाई है उसका लोभ छोड़ना बहुत कठिन है। गांधी जी नेहरू जी के चक्कर में आ गये। कोई भी वस्तु का ग्रहण-त्याग उसकी उपादेयता पर निर्भर करता है। विदेशी शिक्षा पद्धति लाभप्रद है यह धारणा जो बना ली है वही गलत है। मेहरी से तो खटपटी इकार ही आवेगी।

कुछ हट के —

o मुनिराज को वचनों का प्रयोग सोच समझ के करना है तभी भाषा समीति रहती है। अरे / यार आदि शब्द नहीं बोलना अन्यथा लोग कुमार ही नाम कहेंगे क्या यही सिखाया उन्होंने? तुम की जगह आप का प्रयोग करें। आप बहुवचनान्त भी एवं आदर सूचक भी है। छोटे एवं बराबर वालों को भी आप बोलें। शब्दों का चयन हो। प्रवचन धारा प्रवाह हो ज्यादा जल्दी-जल्दी भी नहीं तथा न ही धीरे-धीरे सोच रहे हैं। शब्द बोले तो लगे - "मुख चन्दू ते अमृत झरे" — तोल मोल कर बोलना चाहिए।

03-5-17 "अन्तर राग एवं धर्मानुराग में" प्रातः 8.45

मोह का अर्थ राग नहीं होता है। राग अलग है और मोह अलग। इसी तरह वात्सल्य भाव का होना अलग है, गुणीजनों में प्रमोद भाव होता है। सम्यग्दृष्टि के पास में प्रशम संवेग अनुकम्पा आस्तिक्य भाव अवश्य होते हैं। मोक्षमार्ग में राग को स्थान नहीं धर्मानुराग को स्थान है। जिन गुणियों के प्रति हम आकृष्ट है उनके प्रति राग होना धर्मानुराग है।

उनके प्रति विनय होना अलग है एवं अनुराग होना अलग है। सराग सम्यग्दृष्टि का लक्षण बताते हुये कहा – "प्रशमसंवेग अनुकम्पा आस्तिक्य ..... सम्यग्दर्शनमूलक्षणं" / वितराग सम्यग्दर्शन आत्मा की विशुद्धि परक होता है। इस प्रकार सम्यग्दर्शन दो प्रकार का होता है - सराग एवं वितराग। चतुर्थादि में सराग सम्यग्दर्शन जो प्रशम संवेग आदि रूप होता है। गुणानुराग का मतलब आप पढ़ते हैं न - गुणिजनों को देख हृदय में मेरे प्रेम उमड़ आवे।

प्रमोद भाव होगा ही यह स्वभाविक गुण है। इसमें विशेष्य - विशेषण की भी आवश्यकता नहीं है। विचार से दूर रहेंगे तो समाज पर प्रभाव पड़ेगा। अधर्म को धर्म से ही दूर कर सकते हैं। अब प्रयोग की जरूरत है। प्रमोद भाव में धर्मानुराग नहीं रखता है तो एक प्रकार वह गुणी की श्रेणी में

नहीं आता। आलोचना तो नहीं कर रहा। उसे सम्यग्दर्शन की श्रेणी में नहीं रख पाये ऐसा तो नहीं कह रहे हैं। चूल-घुसरित है तो उसे फटकार दो। यदि ये नहीं करते तो कैसे होगा।

इस पद्धति को मांजना बोलते हैं। बार-बार मांजने पर साफ होता है। चश्मा का प्रयोग करते हो। बार-बार साफ करते हो, इसी कपड़े से नहीं महाराज! इसके लिए अलग कपड़ा रखते हैं। इसी प्रकार सम्यग्दर्शन को साफ करने हेतु अलग कपड़ा रखा जाता है। अपने अपने कपड़े से अपना आइना साफ करें। सम्यग्दर्शन अपने लिए है। अपना कर्तव्य मानकर करें। हाँ अड़ोस-पड़ोस पर प्रभाव पड़ जाये तो अच्छा ही है।

रोग सहन करने की क्षमता यदि भीतर में है तो कभी भी रोग आयेगा नहीं और कमजोर है तो रोग आकर आपको दबा लेगा। सम्यग्दर्शन को मलीन नहीं करना है दूसरे को अच्छा लगे ऐसा नहीं, अपने पास रोग आये ही नहीं इसके लिए सावधानी की आवश्यकता होती है। "तत्त्वार्थश्रद्धानं सम्यग्दर्शनं" कहा। जैसे-घी तप जाता है - स्वाद नहीं आयेगा लेकिन उसकी सुरभि नाक तक आये बिना नहीं रहती। वह गंध स्वभाविक रूप से नासिका का विषय बनती है। अनुभव करना आगे है।

वर्षा होती है अब बिजली चमकना,

ठण्डी - ठण्डी हवा चलना ये सब स्वभाविक गुण हैं। यदि अंग नहीं है तो सम्यग्दर्शन कैसे चलेगा। प्रभावित होता है कोई व्यक्ति तो है, हमारा उद्देश्य यदि प्रभावित करने का होगा तो वह सामने ही नहीं आयेगा।

आने दिजिए ग्राहक को। जब आयेगा तो प्रभावित हुए बिना नहीं रहेगा, फिर अपने आप ही काम हो जायेगा। विदेशी दुकान छोड़कर आपकी देशी दुकान पर आ रहा है। इसलिए अपनी प्रशंसा न करें। जुगुप्सा २२ वंशाय में एक कषाय है। जुगुप्सा मतलब नाक मरोड़ना। मन से-वचन से-काय से आप दूसरे लिए नहीं स्वयं के लिए धर्म कर रहे हैं। ये ध्यान रखना। स्वप्न में भी नहीं सोचना। क्या कहा।

हम अपने लिए ही कर रहे हैं। यदि दूसरे पर प्रभाव पड़ जाये तो अलग बात है। आप प्रभावित करना चाहो है तो हम कहेंगे मान के लिए कर रहा है। अथवा अन्य भाव लगा है। सहज रूप में करते जाओ। अभिमान - दिनहिनता से बचने के लिए धर्म का सहारा लिया जाता है। दूसरे के लिए दिया जा रहा है तो नाक मत मरोड़ो। आप से प्रभावित हो जायेगा। अभिमान न करें। यह शोध का विषय है। मन में क्या-क्या भरा हुआ है, इसे खोलो। फिर शोध करें। कर्म का उदय

रहता है।

अभिव्यक्ति न हो सावधानी भी रखी जाती है। मेहमान घर पर आ जाये तो अब घर में कोई कमी नही है- राम राज्य चल रहा है ऐसा सामने वाले को समझ में आये आप लोग व्यवहार करते है। भनक भी नहीं लग सकती। बहुत अच्छा चल रहा है। सभी लोग ऐसा करते है यह नीति है।

इसलिए कहा- अपने गुणों को ढको- दूसरे के गुणो को उगादो। अपने दोषो को उगाहे तथा दूसरे के गुणो को ढांके। हम उल्टा करते है। यदि ऐसा करे तो पसीना आ जायेगा। धर्म बहुत सरल है- स्वभाविक है, उसके लिए ज्यादा मूल्य चुकाने की जरूरत नही। न ही वह बेचा जाता है, न ही कोई छीन सकता है। पर हम लोगो की बुद्धि काम नही आती है।

विज्ञान इसको दमन की प्रक्रिया मानता है। जो ठीक नही है। विज्ञान कहता है- हम अपने वेगो को रोके नहीं- ऐसा नही है। कौनसे वेगो को रोकना और कौनसे को नहीं यह विवेक होना चाहिए- आवेग को रोके संवेग को नहीं, उद्वेग को रोके निर्वेग को नहीं। वेगों को बहाये- पर वेग बढाने का मतलब गाड़ी 80 में चलाना। यदि आप गाडी 80 में चलाना चाहते हो तो सबसे पहले ब्रेक्स अच्छे हो, रोड अच्छी हो, गाड़ी अच्छी हो। यहाँ

अमेरिका जैसी सड़क तो है नहीं। गाड़ी तो खराब/पुरानी है।

द्रव्य-क्षेत्र-काल-भाव का भी अवश्य ध्यान देना चाहिए। बहुत सारी बातें हैं पर हड़बड़ी की कोई आवश्यकता नहीं है। जैसे एक (अंक) चला जाये तो शून्य का कोई मूल्य नहीं रहता। सब कुछ किया सावधानी नहीं रखी तो सब चला गया। सम्यग्दर्शन अंक के समान है। इन्द्रियों को रोकने (वश) की जरूरत है, विज्ञान नहीं मानता है। वह कहता है ब्रह्मचर्य लेना सम्भव ही नहीं। अब्रह्म को स्वभाव मानता है।

उसे मालूम नहीं इसका पालन करते हैं तभी बड़ी-बड़ी शक्तियाँ आती हैं। करुणा को दबाओ नहीं। रोग को दबाइये नहीं। भय नहीं करना चाहिए। विज्ञान सबमें डरता ही है। डरना चाहिए। डरीये नहीं- कभी भी हार्ट-अटैक नहीं होगा। ये पक्की बात है। टेंशन न बढ़ायें तभी Intuition साफ होता है। ये सूत्र दिये जाते हैं शिक्षा के समय।

हर बात में संदेह करेंगे तो गलत होगा। संदेह होना स्वभाविक है पर आज यह धर्म ही हो गया है। पैर रखना है- देखकर रखो कोई काँटा आदि न हो, जीव जन्तु न हो। पैर रखो ही नहीं गलत बात। साहस रखो। पानी कितना गहरा है। कहाँ गड्ढा है ये सब देखके और आगे बढ़ते जाओ। इतना ही पर्याप्त है।

अहिंसा परमो धर्म की जय।

31-5-17 "बहुत नहीं, अच्छा बोलो" मध्याह्न प० ड०

छोटे बच्चे विद्यालय जाने में आना कानि करते हैं, प्रलोभन देकर भेजा जाता है। रोता भी है पर उसे आगे बढ़ने का उद्देश्य है। जब बोध होने लग जाता है तो स्वयं ही जल्दी करता है जाने की। संख्या भी बढ़ती चली जा रही है। इधर पिताजी उसको दुकान पर भी बैठने को कहते हैं। वह कहता है - हमारा विद्यालय छुड़वा दो (हम एक ही काम कर सकते हैं या तो दुकान अथवा विद्यालय।

इसी प्रकार आप लोगों का है (पूर्वपीठिका के लिए)। आपको हम दूसरा काम बताना नहीं चाहते। बुरा तो लगेगा ही नहीं। 10 वीं का लड़का 12वीं को चलाने लगे- आवश्यकता है ही नहीं। धर्म हमेशा समय के द्वारा ही बोध देता है। समय नहीं हो तो सारी की सारी सामग्री फेंक दो, किसी काम की नहीं है। समय कभी भी फालतु न जाए। निष्प्रयोजन न हो, प्रयोजन हमेशा-हमेशा सामने होना चाहिए।

आप लोगों के साथ-साथ सारे के सारे लोग (आम जनता) बैठ गये यह तो सार्वजनिक सभा हो गयी। सब लोगों को काम करना है। पूर्वपीठिका की पूर्वपीठिका भी बैठी है। ज्यादा तो नहीं कहना चाहता (आप लोग तो कैसे भी समय निकाल लेते है और हमारे पास समय ज्यादा है ही नहीं। एक बहन - आ० श्री आपने बहुत समय दिया। बहुत समय देना ठीक नहीं समय-समय पर समय कम भी

दे दे तो अच्छा है।

अभी तक सभी परीक्षाओं में यह नियम सुना है। परीक्षा का समय 3 घण्टे ही मिलता है - ज्यादा नहीं। घण्टी बजाकर जागृत भी करते हैं। पूर्व कर लिजिए जो कुछ भी करना है कर लिजिए फिर हम डाँटेंगे नहीं। चाहे वह नेट - गेट - केट कुछ भी हो। प्रशासन सम्बंधी हो - परीक्षा का काल 3 घण्टे ही है। हमें भी इस प्रकार का नियम सब काल में सबके साथ अपनाना होगा। बहुत समय मत मांगा करो। बहुत नहीं - अच्छा समय दिया करो।

अच्छा कहते ही इसमें बहुत सारे अर्थ निकल आते हैं। बहुत समय देने के उपरान्त भी मांगते हैं अतः अच्छा कहो। एक पर्याप्त शब्द भी आता है। पर्याप्त की परिभाषा क्या? हमने जब पढ़ा था, उस समय सोचा 50% जब होता है तो आधा (half) हो जाता है। इससे काम निकाला जाता है और इसके ऊपर बढ़ते ही अर्थात 60% होने पर पर्याप्त (enough) कहा जाता है। अतः परीक्षा में 33% वाला अपर्याप्त नहीं 50% को पार कर देना चाहिए।

हमारे यहाँ पर्याप्तियाँ इसी ओर बताती है। पर्याप्त नाम कर्म होता है तब पर्याप्तियाँ पूर्ण होती है, जैसे-जैसे पूर्ण होती जाती है अब आजीवन ज्यों की त्यों बनी रहती हैं। अपनी दिशा में पर्याप्त मिल चुका है। पर्याप्त काम करेंगे अपनी पर्याप्ति के अनुसार,

ये जीवन का मूल्य बिन्दु है।

पर्याप्ति अर्थात कार्य करने की क्षमता। अन्तर्मुहूर्त में पर्याप्ति पूर्ण हुई अब जीवन भर काम करती रहती है। "बार-बार जिन्दगी की ओर न देखकर जिन्दगी के उद्देश्य की ओर देखिये।" उद्देश्य की ओर देखते ही अपने आप समय प्रारम्भ हो जाता है।

एक बहन - यहाँ से जाना सबसे कठिन पेपर है। हमेशा-हमेशा पेपर में कोई भी प्रश्न सरल होते ही नहीं, कठिन तो होता ही है। जिससे जीवन सम्पन्न होने वाला है, उसको कठिन क्यों कहते हो।

कठिन कहते ही मन-वचन-काय बल कमजोर दिखने लगता है। धीरे बोलें (वाणी संयम)। हम सकते अथवा करेंगे भी बात नहीं करते हम तो करें ऐसा आशिर्वाद मांगो। बोलना असंयमी का सूचक। अपनी Income को कोई भी [ज्यादा] खर्च नहीं करना चाहता। बल का प्रयोग नहीं करना चाहिए। जितना आवश्यक हो उतना ही करें। "ज्यादा चिंतन भी चिंता का विषय है।" चेतन को सोचना चाहिए चिंतन को नहीं भी करें तो भी चेतना का प्रभाव चलता रहता है। अतः मन-वचन-काय इन तीनों बलों का प्रयोग नहीं करेंगे।

शब्द भी लग जाते हैं जैसे चोट लग जाती है। चोट के घाव तो भर जाते हैं पर जीभ के घाव नहीं भरते। एक बहन - "जीभ के घाव तो भर जाते

है जीभ से घाव नहीं भरते।"

समझने का कार्य हो चुका है- प्रयोग करो। करते जाओ। हम स्थिर हैं - स्वस्थ हैं अनावश्यक है। बोलने के लिए बाह्य न करें। एक बात कहकर समाप्त करता हूँ। गुरुजी आकर बैठ गये - शिष्य भी आ गये। सब मौन हैं। गुरुजी कुछ भी नहीं बोल रहे हैं। एक शिष्य - हम कुछ पूछना चाहते हैं, आप लोग भी ऐसे ही पूछना चाहते हैं न।

गुरुजी ने कहा - बैठ गये गुप्ति हो गयी। बोले गुप्ति तोड़ दी। गुप्ति को छोड़कर समिति में क्यों आये। समझ में आ गया। तो गुप्ति अच्छी होती है या समिति। धवला जी का प्रसंग आपके सामने रखा।

अहिंसा परमो धर्म की जय। नें

Foot Notes :-

□ आचार्य श्री से श्रुतपंचमी के दिन चारित्र शुद्धि व्रत का निवेदन किया गुरुजी ने कहा - पुरी नहीं की ओर मत देखो हमें तो एक लोहे से प्रयोजन है। बस २८ मूलगुणों का अच्छे से पालन होता जाये। शौच के बाद शुद्धि करके बोले - ज्यादा पढ़ने - लिखने की जरूरत नहीं मात्र पंचपरमेष्ठि का स्मरण भर रहे। अंत तक यही काम आयेगा

□

7-6-17 "इन्द्रजाल से बचो" प्रातः 11.40

प्रत्येक क्षण आध्यात्मिक दृष्टि रखो तभी अग्रसर रह पाओगे। आत्मा की ओर देखोगे तभी निश्चय की ओर जा पाओगे। कोई भी बात करो - कुछ भी देखो बस उसमें दृष्टि अध्यात्म की ओर होना परम आवश्यक है। संसार में पांचो इन्द्रिय के विषय चारों ओर भरमार पड़े हैं। उसी ओर दृष्टि गयी तो लुटने में समय नहीं लगेगा।

चंचल भाव से बचो। प्रतिपल दृष्टि अध्यात्म पर होगी तो भले ही आप नीचे भी यदि गिर जायेंगे तो तुरन्त अगले ही पल खड़े हो जायेंगे। मैं मानता हूं एक जगह भाव स्थिर नहीं रहते पर पुरुषार्थ पूर्वक आत्मा की ओर दृष्टि तो रखी ही जा सकती है। यह संसार माया का जाल है। हाँ। इस मायावी संसार से बचने का मात्र एक ही उपाय है - आध्यात्मिक दृष्टि। प्रत्येक पदार्थ क्षणभंगुर है। जो दिख रहा है वह पुद्गल है। आप पुद्गल पर कुछ विश्वास कर लो आत्मा की ओर दृष्टि स्वयं आ जायेगी।

जो एक समय पहले था अब वो नहीं हैं। रत्नत्रय धारण करने वाला वो मैं नहीं हूँ। ऐसे में शरीर से भी आपकी दृष्टि हटेगी।

"निशामयति निर्शेष मिन्द्र जालोपमं जगत्"

इन्द्र जाल के समान इस

संसार के भोग बताये। यह संसार ही इन्द्रजाल है। इनसे कभी भी तृप्ति होने वाली नहीं है। पद्मपुराण में मधुराजा को देखो - हाथी पर बैठे-बैठे वैराग्योत्पन्न हो गया। सब शरीर पर शस्त्रों के घाव हैं तो भी आत्मा की ओर दृष्टि जाते ही सारे के सारे विषय भोगों को क्षणभंगुर जान तृणवत् त्याग दिया। पहले भोगों में इतना आसक्त था कि अपना त्रिशूल ही भूल गया। — — — — — — — — — — सामने सेना है पर अब तो दृश्य ही बदल गया। शत्रुघ्न जो युद्ध के लिए ललकार रहा था वह भी प्रणाम करता है। इसी तरह प्रत्येक क्षण हमें अपनी आत्मा की ओर दृष्टि रखना चाहिए। तभी "प्रशमाय - वनान्त - मास्थिताः" की वह उक्ति चरितार्थ होगी। भोगों से तीन काल में कोई संतुष्ट नहीं हुआ है। यह जगत की लीला ऐसी विचित्र है। इस वैचित्रता को देख वैराग्य होना चाहिए। — — — — — — — — — — प्रथमानुयोग पढ़ने से हृदय में बहुत दृढ़ता आती है। भीतर तक हलचल मचा देता है। छुरी पैनी लगाकर व्यवसाय किया है - ध्यान तो रखो। लोग आते हैं आपके दर्शन लाभ के लिए पर हमलोगों की तरफ देखेंगे तो ये बैठेंगे ही। फिर बातचीत करना शुरु कर दिये तो कहना ही क्या? उठने का नाम ही नहीं लेंगे। ऐसे में आपका क्या होगा? अतः बाहर से ही दर्शन करें ऐसी व्यवस्था करो।

12-6-17 "जमाने की नहीं बात जमाने की करें" प्रातः 9 बजे

जो कार्य करना चाहते हो वह अन्यत्र के सभी लोग भी चाहते हैं पर प्रयोग करने के उपरान्त ही अनुभव में आता है। जैसे अभी एक व्यक्ति के हाथ में थाली थी सभी व्यक्ति व्यवस्थित हाथ लगाकर संयम के साथ, तेज आवाज में अर्हं निर्वपामीति स्वाहा एक साथ बोलकर चढ़ा दिया।

इसी प्रकार कभी-कभी देखता हूँ प्रभु जी के मस्तक पर धारा होती है उस समय दोनों ओर एक-एक व्यक्ति हाथ में कलशा लेकर खड़े हो जाते हैं बाकी सब लोग पंक्तिबद्ध खड़े होकर इस प्रकार हाथ लगाते हैं की न करने वाले को बाधा हो न देखने वाले को बाधा हो। सभी के परिणामों में/भावों में शांति होती है। शांति भी परिणामों से एवं अशान्ति भी हमारे हमारे ही परिणामों से होती है।

यहाँ तो सब ध्यान रख लेते हो पर चौके में गड़बड़ियाँ होती है। आप कहते है- घुसने नहीं देते हैं तो आप घुसते क्यों हो? प्रवेश करके आइये न। घुसकर क्यों आते हो आहार देने की भावना है तो प्रवेश कर आइये। यहाँ अर्घ्य चढ़ाया, मुझे अच्छा लगा, वहाँ बोल नहीं सकता। समझ में बात आ गयी। भीड़ देख ली तो हमने बोलना प्रारम्भ कर दिया।

इसलिए कोई भी धार्मिक अनुष्ठान करते हो उसे पूर्ण संयम एवं विवेक के साथ करो। विवेक के अभाव में आपको उस धार्मिक क्रिया का कोई भी लाभ नहीं मिल पायेगा।

जल्दी करने से कार्य नहीं होता है। जितना समय लगना है, जितना हम अपेक्षित है तभी काम होगा। समय के अनुसार चलिए तभी निश्चित रूप से सफलता मिलती है। सफलता तभी मिलेगी विधी के अनुसार करते हो। विधी के अनुसार करने पर ही केवलज्ञान की प्राप्ति होती है। समय पर काम हुआ कब? जब विधी का ध्यान रखोगे। इस विधी को आगम से, गुरुओं से जो करते आये उनसे समझकर करे।

आप यदि दुकान चलाते है। बेटा आपसे भी अच्छी चलायेगा और नाती तो और आगे वह कहता है दादा जी आप तो घर पर बैठो हम आपसे भी अधिक अच्छी तरह से दुकान को जमा देंगे। आपसे भी यही कहना है "जमाने की बात मत करो, बात जमाने की बात करो।" जमाकर बात करो। मोक्षमार्ग में भी बात जमाने की आवश्यकता है तभी सफलता प्राप्त होती है।

भले ही आप अणुव्रत के रूप में पालन कर रहे अथवा महाव्रत के रूप में हो

बात तो जमाकर ही करना होगा। हमारी बात समझ में आ गयी न। हव।

मध्यान्ह में कुछ अलग होता है। अभी प्रातःकाल में इतना ही पर्याप्त समझता हूँ। लोगों की भीड़ देखकर हमने परोस दिया। अब आप जहाँ कहीं से आये हो वहाँ तक पहुँचा है। हाथ लगाने का भी प्रभाव पड़ता है। अच्छी विधी है यह। "जमाने की बात नहीं - बात जमाने की है।" इस बात को बिना खर्चा भी बहुत दूर तक पहुँचा सकते हो। बिना पत्रिका के यह काम कर सकते हो।

हमारे पास तो कोई पैसा है नहीं। जब कभी भी लोग आते हैं उन्हीं के माध्यम से कार्य हो जाता है। अब ये आप लोगों की बात है कि इस बात को सब तक कैसे पहुँचाये। बिना विज्ञापन के खर्च किए बिना यह कार्य सहज हो जाता है।

अहिंसा परमो धर्म की जय। नँ

संस्मरण - "बीना बारहा में 27 टन की बड़े बाबा की मूर्ति को वेदी में विराजमान करना था। जो काम बड़े-बड़े इंजीनियर नहीं कर सकते थे। वहीं के स्थानीय गांव के मिस्त्री ने एक ऐसी ट्रॉली बनायी जिस पर रख बड़े बाबा को सहज ही गर्भ गृह में ले गये एवं अपने सिंहासन पर विराजमान कर दिया।"

प्रतिभा स्थली
[प्र. बहनों के लिए विशेष] →

15-6-17 "आवश्यक से अवश्य होती निर्जरा" प्रात 7.00

मोक्षमार्ग में संकेत के माध्यम से हम लक्ष्य तक पहुँच जाते है। जैसे गाय - बैल - घोड़ा आदि चले जा रहे हैं किन्तु किसी ने आवाज दी - संकेत दिया वे सभी आ जाते हैं। किसी से चला नहीं जा रहा है पर जो चल रहे हैं उन्हें देखकर वह भी चलने का प्रयास करता है। इसी को लर्निंग कहते है। फिर पकड़-पकड़ कर चला देते हैं।

जिसे भूख कम लगती है उसे मना-मनाकर खिलाया जाता है, ज्यादा खाने वाला तो थाली को भी साफ कर देता है। इससे हमें सीखना चाहिए, इसी का नाम शिक्षा है। वो ही तो हम कह रहे है। 50 वर्ष से जो पढ़ा रहे हैं, वो हैरान है क्यों की प्रयोग नहीं किया, आप प्रयोग करों। प्रयोग में वस्तु सामने आ जाती है। आज मात्र लिखो - पढ़ो - सुनो यही रह गया है। इसी से परीक्षा में दिमाग खराब हो जाता है।

शब्द का अर्थ होता है, वह पकड़ में आया नहीं। मान लो सुनने में आया प्रभुजी! संकेत हाथ का देखा फिर सुना प्रभु जी तुरन्त समझ गये प्रभु जी ऊपर है। परोक्ष में है दिख नहीं रहा वह भी महसुस होने लग जाता है। प्रयोग करना अति आवश्यक है। प्रयोग के अभाव में शिक्षा का महत्व नहीं। वस्तु देखो। आप लोग पढ़ते क्यों नहीं? महाराज हम देखते है किताब नहीं W/S

(वॉट्सप) हम से ही क्रमण बनते हैं वही सहनशील बन पाता है।

आज बच्चों को आगे निकाल दिया जाता है निकलता नहीं है। रिजल्ट आने वाला है - कहाँ से आने वाला है। रिजल्ट क्या वस्तु है? दूसरे के आधीन हो गया। जिसने प्रयोग किया वह उस पढ़ने वाले से भी आगे का है। अभ्यस्त हो जाता है नया - नया रूप लाकर रख देता है। रिजल्ट में निश्चित रूप से मात्र नम्बर पर ही ध्यान रहता है।

मैं कहता हूँ साक्षात्कार, जिसे आमुख भी कहते हैं उसमें कम नम्बर वाला भी अच्छी प्रस्तुति करता है उसे जल्दी ले लेते हैं क्यों? वह एक ही हजारों और तैयार कर लेगा। लिखित रूप से तो हम कोई नियमावली बनाते ही नहीं। इसके बाद ये करो - इसके बाद ये करो / क्या करो? बैठ जाओ सामायिक करो / बैठकर ही सामायिक करते हो / सोना नहीं है आनन्द आने लगता है।

२५ घण्टे में ६ कर्म होते हैं उन्हें व्यवस्थित कर दिया गया है अब आपको सोचना है ही नहीं कि क्या करना है। हमारे यहाँ शयन करना भी मूलगुण कहा है। सोने के भी नम्बर, भोजन के भी नम्बर मिलते हैं, इनसे भी कर्मों की निर्जरा होती है। भोजन लेते हैं कितना लेना, कैसे लेना, कब लेना तभी निर्जरा होगी। भोजन करना

है पर स्वाद नहीं लेना है।

ये बंधन नहीं है। जो जिस भूमिका में है उसी अनुरूप करे। एक अविरति की अपेक्षा तो आपका स्थान ऊपर है। इसलिए ये आवश्यक कर्म है। अवश्य ही निश्चित समय में करने योग्य वह आवश्यक है। इसके बाद क्या करना - इसके बाद क्या करना ये सब बातें बन्द कर दो उपयोग करना शुरु कर दो।

प्रश्न - माताजी के लिए किस तरह करना चाहिए?

आन्सी - जिस कक्षा में बैठे हैं उसी की बात चलेगी। इधर-उधर की बात नहीं। जाना-आना तो लगा ही रहता है जैसे रेलगाड़ी पर लिखा है कलकत्ता से मद्रास तो वहाँ से वापस कलकत्ता आदि स्थान उसी प्रकार यहाँ है। सबसे ज्यादा हानि वही जो चिंता में ही रहता है, इसके बाद क्या करना है? जो सामने है उसे पहले कर ले बाद का मत सोच।

हमारे यहाँ जितने भी प्रश्न है उनमें लगभग सभी के नम्बर समान है। मान लो सभी के 10-10 नम्बर है। जिस समय सामायिक तो उसी समय सामायिक हो, जिस समय भोजन तो उसी समय भोजन हो। कुछ ऐसे भी लोग जो मुख्य कॉपी से दुगुने पेपर ज्यादा भर देते हैं। ज्यादा लिखा तो नं. ज्यादा मिल जाये आवश्यक नहीं। कथ्य क्या है? आज शोध की दिशा में ऐसा ही हो

रहा है। इतने पृष्ठ हो गये। एक वाक्य भी शोध का विषय हो सकता है।

ज्यादा आशिर्वाद दे दो महाराज! ढेरसारा आशीर्वाद दे दो! अच्छे से आशीर्वाद दे दो। ये सब इसी बात को इंगित करते हैं। काम नहीं हुआ तो कह देते हैं आपने अच्छे से आशीर्वाद नहीं दिया। आवश्यक कार्य करते जाओ, क्या-क्या करना है अपने आप सामने आ जाता है। प्रयोग का अर्थ ही है उस कार्य के प्रति साक्षात् आपका जुड़ाव है।

"शब्द की यात्रा, प्रत्यक्ष से अन्यत्र, हमें ले जाती"

शब्द आते ही जो सामने है उससे दूर हम चले जाते हैं। इसलिए हमें शब्द नहीं अर्थ प्रत्यय की ओर देखना है। उपयोग अर्थ की ओर जाते ही वस्तु की ओर आ जाता है। उस व्यक्ति के बारे में कहा आ रहा है। अर्थ समझ में आ गया। क्या था, कहाँ रखा था किसलिए रखा था। यह प्रयोजन आ गया। खोले या न खोले हैं अब शब्द भी गायब - अर्थ भी गायब - प्रयोजन भी गायब हो गया।

एक प्रश्न के बाद दूसरा प्रश्न अपने आप आ जाता है। यह वर्षों तक बना रहता है। जिज्ञासा शान्त हो जब आशा शान्त हो। ज्ञान की आशा का नाम ही जिज्ञासा है। प्रयोग न होने के कारण यह हो गया। संतुलित कार्य

करो मतलब सही - सही कार्य करो। आज पालड़ी कभी इधर तो कभी ऊपर-नीचे असंतुलित हो रही है। अर्थ के माध्यम से शब्दों को तौला जा सकता है।

कुछ लोग बहुत सारा बोलते हैं लेकिन अर्थ पकड़ में ही नहीं आता। सोच समझकर काम करो ना। कुछ लोग पेपर में ज्यादा भी नहीं लिखते कम भी नहीं लिखते। फालतु एक शब्द भी नहीं होना। संतुलित का अर्थ यही है अपव्यय से बचना। कभी-कभी कहा जाता है सारभूत निबंध लिखिये। मान लो 1000 शब्द है 800 शब्द में लिखना लेकिन सावधान! पुरा का पुरा भाव आना चाहिए। तीन घण्टे में 1500 बनाना तो सरल था पर 800 करना तो कठीन काम है।

अपनी अभिव्यक्ति से आपको करना है। पहले परीक्षा में लाइन की कॉपी होती अथवा लाइन बनाकर लिखते थे। "बैलाइन पर आप लाइनदार बनो"। जैसा बोला जा रहा है उसी अनुरूप करो। दक्षिण का कहे - पश्चिम चले जाओ, ठीक नहीं। आज इन विधाओं में तथ्य नजर नहीं। कोई भी विद्या प्रयोग के अभाव में तथ्यहीन हो जाती है। प्रयोग करते रहते हो तो वह जीवित रहती है। इस प्रकार प्रयोग करते रहो।

विधिवत् कार्य करने से अल्प समय में ही परिणाम मिलते हैं। हमारा विश्वास अटूट है। हुंह! (व्यंग्य) हमें आशा है, पूर्ण विश्वास है आप स्वीकार करेंगे। विश्वास

को बनाये रखें।

समय का उपयोग कर लिजिए। प्रश्न - छात्राओं में अध्यात्म कैसे? कषाय नहीं करना चाहिए। स्वयं ही डाट-डाट कर समझाते हैं, कान पकड़ते हैं तो प्रयोग करीए वह दोबारा आने की भावना करेगा। एक आध बार हो तो अलग बात है।

गाय का बच्चा रास्ता नहीं भूलता क्यों? क्यों की वो माँ को नहीं भूलता। माँ कभी रास्ता भूलती ही नहीं। बड़ा हो जाता है पढ़ना तो माँ को नहीं पुछेगा, तब उसी अनुसार देंगे। आपको अपने अनुसार नहीं पढ़ाना। पहले विद्यार्थी को पढ़ना है फिर पढ़ाना है। आप पहले विद्यार्थी को पढ़ो। भगोनी। तपेली में कुछ बना कर रखा है पर सामने वाले के अनुसार ही परोसा जाता है।

सामने वाले की कितनी क्षमता है। बच्चा आता है तो उसी अनुरूप देते हैं। घोल-घोल कर पीला देते हैं। यह पद्धति है, वह आपकी बात समझ लेगा तो वह आप ही के पास आयेगा। संकेत आदि के माध्यम से समझाया जाता है। समय तो हो गया होगा।

अहिंसा परमो धर्म की जय।

"जुगाड़ का ज्ञान सबके पास है, बस आत्मा को कर्मों से पृथक करने का जुगाड़ ज्ञान हो जाये, ज्यादा कुछ नहीं।"

[प्रतिभा स्थली छात्रावास उद्घाटन]

17-6-17 "गुरुजी का गुरुकुल" प्रातः 9.20

गुरुजी के विचार / गुरुजी की दृष्टि भविष्य में क्या हो ? तो अतित का अनुसरण हो। अतित के अनुसरण का अर्थ अज्ञान में भटकना। यह जीव अज्ञान को अंधकार नहीं मानता। पैसा, सुविधायें, ऐशो-आराम को दुख नहीं मानता। उनमें सुख मानकर आज तक उलटी धारणा कर रखी है।

उसे ज्ञान की ओर ले जाने के प्रयास का नाम ही अतीत का अनुसरण है। बाहरी संस्कृति का अनुकरण करना भटकन है। यह उपक्रम जो देख रहें हैं उस अतीत को बताने के लिए किया है। इस प्रकार का भाव (गुरुजी) इनका था। इस शिक्षा पद्धति की ओर ले जाने का था। पूर्वजों ने जो पाया अथवा पूर्वजों ने जो किया वह हमें भी मिल सकता है। बस हम उनका अनुकरण कर रहें हैं।

यहाँ के प्रबन्धकों द्वारा बार-बार निवेदन किया गया। एक मन्दिर हो गया फिर दूसरा मन्दिर हो गया। एक वह भी मन्दिर बना जहाँ भगवान नहीं हैं। किन्तु वह मन्दिर ऐसा जहाँ भले ही भगवान न हो पर भगवान बनने की शिक्षा अवश्य मिलती है। विषय-कषाय एकदम नहीं छुटते किन्तु छोड़ने का ईरादा तो किया ही जा सकता है। गुरुजी

ने अपना प्रत्येक क्षण अंतिम समय तक विद्याध्ययन में ही गुजारा। थकावट तो उन्हें होती ही नहीं थी। और-और की ओर ही सदैव बढ़ते जाते थे।

अब आप स्वार्थ नहीं करना। जो भी भव्य प्राणी आये उसे इस गुरुकुल परम्परा का लाभ मिलना चाहिए। उन्हीं (गुरुजी) का पुण्य-पुरुषार्थ आज फल रहा है। इससे पूर्व जबलपुर में यह कार्य प्रारम्भ हुआ था। दो-तीन वर्षों में ही यहाँ पर भी जो कुछ भी आवास-विद्यालय मिला उसी में रहकर आज इस नये भवन में पहुँच गये जहाँ आगे की पढ़ाई होना है।

आवासीय भवन भी प्रारम्भिक दशा में तैयार हो चुका है। बहुत बड़ी प्रतिज्ञा थी। जो जिस ओर जाना चाहता है सदैव वही ध्यान में रहता है। वह दिन कब आयेगा? आज वह दिन भी आ गया। अब पुरुषार्थ की ओर कदम बढ़े। ये सब व्यवस्थायें बाहरी हैं, मुख्य तो हमारा पहले स्व के लिए एवं पर के लिए भी होता जाये।

माँ के लिए शिशु होता है। गर्भ में भी उसके भोजन-पानी की क्या व्यवस्था होती होगी? माँ योग्य आहार-पानी जो स्वयं खाती है

उसी के साथ- साथ गर्भस्थ शिशु का पालन-पोषण होता जाता है।

हमारा भी प्रतिभा मण्डल को हमेशा- हमेशा यही कहना है- माँ की भाँति बनो। माँ तो पालन कर रही है, पुरुषार्थ से बाहरी लोगों को भी योगदान देती रहती है। ये प्रबन्धक लोग भी उनके लिए भी उत्साह बढ़ जाये। व्यवस्था में कमी होना स्वभाविक है। जो व्यवस्था है उसी में उत्साह के साथ कदम आगे बढ़ते जायें।

ऐसा नहीं मन में आना चाहिए कि- अरे! ये तो हुआ ही नहीं। अभी पद्म-पुराण में विद्याधर लोगों का वर्णन आया। उन विद्याधरों के पास ऐसी-ऐसी शक्तियाँ की चुटकी बजाते-बजाते नगर का निर्माण हो जाता उनमें भी कुछ न कुछ कमियाँ तो रहती ही थी। इतना वैभव रावण के पास किन्तु लक्ष्मण का एक चक्र लगा रावण कहाँ चला गया। इसलिए वैभव की ओर मत देखो - रामायण से बात होता है।

जीवन को कैसे संवारा जा सकता है? दुसरों को कैसे संभाला जा सकता है? इतना ही पर्याप्त नहीं, विवेक के साथ/उत्साह के साथ आगे कदम बढ़ाना है। अभी 200-250 की संख्या है आपका संकल्प 300 तो पार करना ही है। अभी हम इसे चार आना मानते है। बच्चों को कभी अखबड़ रुपया नहीं

दिया जाता। महंगाई बहुत है तो चवन्नी-अठन्नी ले लो। ऐसा करते-करते रुपये तक जाना है। ये पक्का है। चवन्नी लीक से खर्च की अब अठन्नी लीक से खर्च की अब रुपया तो मिलना ही है।

एक आना-एक आना करते-करते ही रुपया होता है। आप लोगों को मांगना नहीं है। बिन मांगे मोती मिले..... । बस देते रहना है। इनसे मतलब नहीं रखना है परिणाम-उद्देश्य के अनुसार सही-सही करोगे तो फिर कोई भी प्रबंध कर देगा। इस प्रकार लक्ष्य थोड़े ही दिन में प्राप्त हो जायेगा। कर्त्तव्यनिष्ठ होकर पुरुषार्थ करते चलें आयें। गुरुजी का भी यही भाव था।

विदेशी संस्कृति ने विकराल रूप बना लिया है। आप लोगों की जागृति को देखकर लगता है कि अब शिक्षा-पद्धति में आमूल-चूल परिवर्तन होने वाला है। प्रतिबिम्ब तो पड़ेगा ही जल होगा तो अलग प्रकार से तथा सामने कोई दिवार आदि (चिकनी) उसकी छाया में अलग प्रकार का प्रतिबिम्ब दिखेगा। ऐसे ही उज्जवल भविष्य के लिए कर्त्तव्य को जीवन मानकर चलेंगे तो फल तो निश्चित है।

फल कहीं जाने वाला नहीं। फल पकेगा अब आप डाल से तोड़ो या मत तोड़ो वह तो गिरेगा ही।

बस आप अपनी झोली भर फैलाकर रखो वह उसमें टपक जायेगा। प्रतिभा मण्डल भी ऐसा ही कार्य कर रहे हैं। अब प्रतिभा - प्रतीक्षा और तैयार हो रही है ऐसा बता रहे हैं।

शासन - प्रशासन, धीमान - श्रीमान् जो भी देख रहा है सब प्रभावित हो रहे हैं। चल-चरखी प्रशिक्षण केन्द्र भी छत्तीसगढ़ में अलग ही हो गया। लोग आ रहे हैं मात्र 4-5 महिने में ही वे प्रशिक्षण प्राप्त कर अपने आप को गौरान्वित महसुस करते हैं। काम की ओर / पुरुषार्थ की ओर दृष्टि चली जाती है तो ऐसा होता है।

फिर मांगने की आवश्यकता नहीं। भारत का ऐसा ही अतीत रहा है। इतना ही पर्याप्त है। गुरुजी की भावना, उनकी निष्ठा, उनके इरादे को हमेशा याद करो। हजारो-लाखों ही नहीं पुरा का पुरा देश भी कृतकृत हो सकता है, ऐसा मन्त्र दिया है उन्होंने। उन्हीं को याद करते हुए आज का यह वक्तव्य पूर्ण करता हूँ। ये लोग तो आये है और चले जायेंगे। आप लोगो को यहीं पर रहना है।

जबलपुर का ही अनुसरण जैसा लग रहा है। वहां सेमा-सदन में भी इसी प्रकार की व्यवस्था थी। ये सभी शाखायें - प्रशाखायें फला देती रहेगी।

तरणी ज्ञान सागर गुरु-तारो हमें ऋषीवृ।
करुणाकर करुणा करो, यही से दो आशीष॥

अहिंसा परमो धर्म की जय

18-6-17 "सबसे बड़ी औषधी है- विश्वास" प्रातः 11:40

किसी भी औषधी को लेने से पूर्व हमें विश्वास होना चाहिए। वैद्य जी पर भी, औषधी पर भी एवं स्वयं पर भी। विश्वास एक प्रकार से अनिवार्य है चिकित्सा में। विश्वास से कुछ भी ले ले कि हो जायेगा। किन्तु विश्वास सही दिशा में हो। पथ्य-कुपथ्य का ध्यान सर्वप्रथम रखना है। हमारा आहार-विहार-विचार सात्विक होना जरूरी है। ऐलोपैथी दवा दवा नहीं हानिकारक है।

कैंसर में जो कीमो लगाते है - भयंकर वेदना होती है। हड्डी में से ब्लड पदार्थ लेकर जाँच करते है। कीमो के बाद वह कोई काम का नहीं रह पाता है। जिंदा बच भी गया कोई मतलब नहीं रहता। बाल सब साफ - खून पुरा बदल देते है। बिना कीमो भी व्यक्ति की आयु है तो जी पाते है।

एक बार खाजा राम जी (महावीर जी मार्बिस वालों के पिताजी) को कैंसर था। डॉक्टरों ने जवाब दे दिया हमारे पास लाये तो हमने उम्र पुछी - 70 वर्ष। समाधी की भावना रखी। हमने शरीर की स्थिति देखकर जो कुछ खाने में लेना है बता दिया। शाम में चारों प्रकार के आहार का त्याग करा दिया। असाता साता में बदलने लगी। बस कुछ-कुछ ठीक होने लगे।

थोड़े ही दिनों में स्वस्थ हो गये। 16 वर्ष अर्थात 86 वर्ष की आयु पूर्ण कर गये।

मोटे व्यक्तियों की समाधी नहीं हो सकती, इसलिए शरीर भारी नहीं होना चाहिए। समाधी में जल्दीबाजी नहीं होती। धीरे-धीरे अपनी चर्या को सुधारो। एक आंवला में 27 नारंगी (संतरे) जितने तत्त्व विद्यमान होते हैं। कौन कहता है मैं रस नहीं लेता। मेरे और आपके रसों में अन्तर है आप फल- सब्जी के रस लेते हो मैं धान के रस जैसे मूंग की दाल का रस, गेंहू का रस (लपसी) चावल का रस (माण्ड/पानी) जो शरीर के लिए बहुत लाभप्रद रहता है।

हर बिमारी के लिए डॉक्टर के पास भागना मूर्खता है। हमारे यहां उपचार के तरीके बताये हैं→ "विद्या- भेषज- मन्त्र- तोय- हवनै" (शान्तिभक्ति) अर्थात पानी भी चिकित्सा करता है, विश्वास हो तो।

इसके साथ ही मोह के त्याग से साता का बंध होता है। वैद्य जी किसी अमीर को ज्यादा धन की औषधी लिखे उनके लिए वही ठिक है। तभी काम होगा। इसीलिए कहा- कुछ भी बिमारी हो अप्रमत अवस्था में बैठ जाओ। यहां असाता भी साता में बदल जाती है क्यों की मात्रा साता ही बंधती है। बहुत से घरेलु उपचार अपने अनुभव से बतायें। नुँ

26-6-17 "वीणा का तार" प्रातः 9.25

वीणा वादन जो करता है वह ध्यान भी रखता है. यदि वीणा का कोई तार ज्यादा कस जाता है तो संगीत का आनंद नहीं आता है। वीणा का वादन करने वाला ही इस बात को जानता है कि तार कितना कसना है, ज्यादा करे तो टूट भी सकता है।

यदि तार को ढीला कर देता है तो भी सुर नहीं, उतना ही कसना चाहिए जिसके सुर को सुनने वाला आनंद को प्राप्त हो जाए। ये उदाहरण हमने इसलिए दिया की जीवन भी वीणा के तार की तरह है। ज्यादा कसो भी नहीं, ढीला भी नहीं छोड़ो।

अहिंसा परमो धर्म की जय हो

27-6-17 "रुक जाना नहीं" प्रातः 9.20

शुभ का अवसर है। स्नानादि से निवृत्त होकर दादाजी पूजन सामग्री हाथ में लेकर जिन दर्शन हेतु जाने लगे। नाती भी साथ में चलने की जिद करने लगा। तब अपने काम में लग गये। नाती फिर कहता है हम भी आपके साथ चलेंगे। दादा कहते है चल नहीं पाओगे। नाती कहता है हम चल लेंगे। चल दादा ने कहा।

अब दादा जी की चाल भी पौता के अनुसार धीरे-धीरे चल रहे है। कुछ समय बाद चाल धीमी हो जाती है। अब पौता धीरे-धीरे कहता है दादा जी - पैर दुखने लगे है। हमने क्या कहा था, अब पैर दुखे या जो भी हो। दूर नहीं है थोड़ा सा ही है।

बहुत सारा हो गया। दादा जी - बस थोड़ी सी और है। अब आ ही रहा है। पोता कहता है - जब मन्दिर आ ही रहा है तो हम इतें ही बैठ जायें। — सोचो! अब दादा जी क्या उत्तर देंगे। जब आ ही रहा है तो हम यहीं पर बैठ जाते हैं काहे के लिए परिश्रम करें। आप दर्शन करीयाओ (करके आओ) वापस में हम यहीं मिल जायेंगे। ऐसा ही कई लोगों का हाल है। खड़े हो जायें कब तक चलेंगे। चलना कब तक? जब तक पथ मिलता है। मोक्षमार्ग इसी का नाम है जो मंजील तक पहुँचा देता है। — अब पैर उठाओ, पहले तो उत्साह के साथ तैयार हो जाते हैं। फिर महाराज आपने ही तो दिया था हमने मांगा था ये बात अलग है। आपने पहले क्यों नहीं बताया। हम अपनी चाल बदल देंगे। धीरे-धीरे चलें, संघे-संघे चलें। संग अलग होता है और संघ अलग होता है। संघ चतुर्विध संघ होता है। मोक्षमार्ग में अपनी-अपनी शक्ति के अनुसार कदम उठाते जाओ। — — — — — — — — — — — — ये भी बात है कि बीच-बीच में आवाज देते जाओ। Hmm Please। कहीं बैठ तो नहीं गया है। सम्मेदशिखरजी में आप लोग ऐसा करते हैं। पिछे वाले को आवाज देते रहते हैं। वह पोता होशियार था। दादा जी तो दादा जी रह गये। — अहिंसा परमो धर्म की जय हो

50वाँ दीक्षा दिवस - स्वर्णिम संयम महोत्सव

28-6-17 "मूल पर ध्यान पहले हो" प्रातः 8.00

असंयमियों से दूर रहे। उनके अनुसार हम चलने लगेंगे तो दोनों का ही अहित हो जायेगा। वे हमारे अनुसार चलें। आवश्यक पहले बाकी सब काम बाद में हों। मैं बहुत समय देता हूँ इसका ही गलत परिणाम है। बाबा जी से कहा - देवलोक में भी माला जपते रहना। शीतल सागर जी - 28 मूलगुण में बाकी सब तो ठीक है पर पंचेन्द्रिय विजय की क्या सीमा बनायें?

आ० श्री - मुख्य रूप से पहले मूलगुण का पालन हो तभी उत्तर गुण का पालन करने का लाभ मिल पायेगा। मूल को गौण कर उत्तर का पालन करना समझदारी नहीं। उपेक्षा संयम बाद में अभी अपहृत संयम का भी अर्थ से पालन नहीं हो रहा है। एक पेपर में तो डिक्टेशन मार्क दूसरे में सप्लमेन्ट्री आना ठीक नहीं है। इसी तरह बहुवचनात्मक शब्दों का प्रयोग करें। छोटों से भी आप कहकर बात करें।

आज्ञा देने से सामने वाला बंध जाता है अतः कभी आज्ञा न दें। आदेश शास्त्रवत् कहा। कर्म काटने हेतु कर्म करें। सबसे बड़ी बात तो आचार्यों ने स्वाध्याय को न तो 28 मूलगुण में रखा न ही 6 आवश्यक में रखा। इसलिए सामायिक के समय सामायिक करें। स्वाध्याय उत्तरगुण है मूलगुण नहीं। अपथ्य जहाँ हो वहाँ कभी भी अपनी सम्मति नहीं होना चाहिए। हुँ

28-6-17 "समय को देखना ही है संयम" प्रातः 9:10

आप लोगों ने अभी वह दृश्य देखा, हमने भी देखा। हमने सोचा 15 मीनट में पूजा हो जायेगी। ये ध्यान रखो- संयम क्या वस्तु है? संयम वह जहाँ समय नियन्त्रण में आ जाता है। मैंने देखा इतना समय किसी और को दे देता तो कुछ काम होता लेकिन अंत में जब कम समय में भी मंगलकलश का निर्माण कर दिया तो लगा कम समय में भी अपना काम पुरा कर सकते है।

यह मंगलकलश दिखाने के लिए नहीं। जो प्यासे है उनकी प्यास बुझाने के लिए तथा जो भूखे है उनकी भूख शान्त करने के लिए है। यदि समय को नहीं पहचान पाओगे तो संयम को नहीं पहचान पाओगे। संयम को देखें- य को बीच में से उठाकर म के बाद रख दे समय बन जाता है। आज संयम दिवस है। इन्होनें आज के लिए संयम ले लिया। कठोरता में संयम नहीं कोमलता होना चाहिए। संयमोपकरण पिच्छी को कहते है - कोमलता की प्रतिक है।

ताली बजाने से संयम दिवस नहीं मनाया जाता है। हाँ ताली वहाँ पहुँच सकती है जो सो रहा है उसे जाग्रत कर सकती है। दूसरे की जाग्रती के लिए स्वयं जागना परम आवश्यक है। महावीर भगवान अकेले दिक्षित हुए उनके साथ कोई नहीं। स्वयं ही चलना पड़ेगा। आप कहते हो - महाराज

आप हमारा साथ देंगे। भगवान महावीर स्वामी को भी बहुत कम समय मिला था। 30 साल तो घर में ही फिर भी इस कम समय में भी उन्होंने करके बताया। कम समय में किया तो काम छोटा किया होगा ऐसा भी नहीं है।

जो काम ऋषभदेव भगवान ने किया वही महावीर स्वामी ने किया दोनों ने बराबर काम किया। परीक्षा में पर्चे तो तीन ही मिलेंगे। उन तीन पर्चों का भी सही उपयोग करके अपने अंधकार भविष्य को उजाले में ला सकते हो। अतीत को याद करके जो सिद्ध गये उन्हें याद करके अपने गौरव को लौटा सकते हो। तभी इंडिया को भारत के रूप में परिवर्तित कर सकेंगे।

अभी आप सभी एक-एक अर्घ्य के साथ प्रयोग देख रहे थे। महा अनर्घ पद के लिए बिना पुण्य कार्य किया। मैंने देखा आँगन मण्डप में ये कौनसा मण्डप आ गया। अपने समय एवं धन का इसी प्रकार सदुपयोग होना चाहिए। अपने पद का सही उपयोग करें एवं अपने पद का सही उपयोग करें अन्यथा जीवन का यह स्वर्णिम अवसर चला जायेगा।

स्वर्णिम तभी जब संयम के साथ जुड़ जायेगा। आप लोग स्वर्ण देख रहे हैं। ये कलश है - स्वर्ण का, रत्न का, यह चांदी का कलश है। आप कौनसे

कलश है? आप रत्नत्रय से अभीप्सित हो सकते हो। प्रयोग के लिए रखेंगे तो कल्याण का मार्ग प्रशस्त कर सकते हैं। सामने वर्षायोग है।

अभी वर्षायोग स्थापना में 15 दिन हैं। महाराज लोग भी होश में आ जायें। मैं किसी से बंधता नहीं, न ही किसी को बांधता हूँ। मैं निर्बन्ध बनने की बात करता हूँ। तीन दिन क्या वर्षभर मना सकते हो, वर्ष क्या भारतवर्ष कम पड़ सकता है। आजकल तो डे सिस्टम है। संयम दिवस भी एक दिन मना लिया। हो गया आपका संयम दिवस पूर्ण। तीन दिन की व्याख्या अवश्यकता हमारा तो आज हो गया।

आप हजार बार नमोऽस्तु कर सकते हैं, हमारा एक बार आशीर्वाद ही पर्याप्त होगा। एकबार ही कितने बारों को निकाल देता है। महावीर भगवान हाथ उठाकर आशीर्वाद नहीं देते तो क्या आशीर्वाद नहीं कहलायेगा? आशीर्वाद का मतलब होता है "शुभम् भूयात्" अर्थात दुःख मिटाने का कारण है आशीर्वाद। आपकी दृष्टि में भगवान है या नहीं मालुम नहीं किन्तु भगवान की दृष्टि में आप जरूर हैं। उनकी दृष्टि में तीन लोक तैर रहे हैं। आप भी उनको अपनी दृष्टि में बैठा सकते हैं।

जब तीन लोक के नाथ मानते हो तो फिर अनाथ कैसे हो सकते हो। जब कण में

भी भगवान बैठ सकते हैं फिर आपने मन में क्यों नहीं बैठ सकते? आप तो पैर फैलाकर बैठते हैं - यह असंयम के कारण ऐसा होता है।

आपसे निवेदन है, जो आपको यह संयम मिला है बहुत महत्वपूर्ण है। मात्र दुर्लभ मनुष्य पर्याय में ही यह प्राप्त होता है। देव और नारकी तो सभी असंयमी ही होते हैं, तिर्यञ्च आपके सामने है क्या हालत है। मात्र मनुष्य पर्याय में ही किन्हीं - किन्हीं को यह संयम हो सकता है। तीन लोक में भी मात्र ढाई द्वीप में ही, ढाई द्वीप में भी भोगभूमी में नहीं, म्लेच्छ खण्ड में भी नहीं। भरत क्षेत्र में भी सम्पूर्ण भरत क्षेत्र में कितना स्थान बच जाता है।

इण्डिया नहीं भारत में ही संयम पल सकता है। विदेश की उपासना करने वाला क्या संयम का पालन करेगा। इसलिए मैं हमेशा कहता हूँ भारत को भूलना बहुत बड़ा अपराध माना जायेगा। द्रव्य क्षेत्र काल भाव प्रत्येक के लिए अनिवार्य है। धर्म साधन करने की स्वतंत्रता मिली है नहीं तो कौड़ी भी नहीं है।

70 वर्ष व्यतीत हो चुके हैं मन की दासता, इन्द्रियों का गुलाम और तन की परतन्त्रता से ऊपर उठ संयम की ओर कदम बढ़ाओ यही संयम महोत्सव मनाने का लाभ होगा। अहिंसा परमो धर्मकी जय।

22-6-17 "उम्र कितनी" मध्याह्न 3:30

चित्त लेने वाले से पर बैठकर लें तो अच्छा रहेगा। बैठने वाले आवाज करेंगे ही - इतना संयम अवश्य रखें। आज आपके सामने यह संयम दिवस की / संयम के बारे में कहा जा रहा है। गुरुजी ने दीक्षा के उपरान्त मार्मिक बात कही थी। गुरुजी के पास सभी वरिष्ठ लोग, नेता, संस्कृति से जुड़े लोग आते थे, बनारस से निकले थे वे / सकारात्मक सोच आदि वाला व्यक्ति उनके पास आया और तुरंत पूछता है - महाराज आपकी उम्र कितनी हुयी है?

अब समझो आप धार्मिक सभा में आये हो / जिसने पूछा वह क्या सोच रहा होगा। आपकी उम्र, आप कहाँ से आये, आपका क्या काम होगा आदि-आदि। गुरुजी जैसे बैठे थे वैसे ही बैठे रहे। वह फिर से बोला - मेरी जिज्ञासा है आपकी सही उम्र क्या है। दोबारा बोलने पर गुरुजी ने सोचा दो बार बोल दिया अब अपने आप ही बात हो जायेगा। वह तीसरा पूछता है - मेरी जिज्ञासा का उत्तर मिल जाये। आप सुन रहे हैं?

जब गुरुजी के मुख से सुना तो लगा कि क्या अध्यात्म है उनके भीतर। बोले भीतर से प्रतिक्रमण करके बाहर आया हूँ; बस! इतना ही काल मेरी उम्र है। प्रतिक्रमण के बाद अन्तर्मुहूर्त में नीचे आना पड़ता ही है। 5 मीनिट भी नहीं हो सकती आप 80 वर्ष की गिनती गिन रहे हो। मैं क्या गिन

सकता हूँ, गुरु की स्मृति भर दे सकता हूँ।

यही वास्तविक संयम है।

नीचे गिरने को शास्त्रों में प्रमत अवस्था कहा। प्रत्येक साधक अप्रमत से प्रमत की ओर आता ही है। इसीलिए आचार्यों ने अप्रमत रहने का उपदेश दिया। किसी के कान पकड़ लें तो गुस्सा आ जाता है। जब तक आप गुस्सा को नियन्त्रण में नहीं कर सकते किसी के कान पकड़ने पर नाराज नहीं होते तभी संयमी बन सकते हो।

आचार्य कुन्दकुन्द ने बार-बार कहा तुम उन्मत्त हो / प्रमत हो तुमने प्रमाद को पाल रखा है। हर अन्तर्मुहूर्त में अप्रमत हेतु जगा रहता है। जीवन में 50 वर्ष की गिनती कर रहे हो ध्यान रखना दो तिहाई काल प्रमाद में जाता है। ये अनिवार्य है अप्रमत से प्रमत का काल अधिक कहा है। सुन लिजिए अच्छे से एवं याद रखीये चाहे पढ़ा-लिखा हो या अनपढ़ हो, दीर्घ सेवन वाला भी क्यों न हो इतना काल प्रमाद में जाता ही है।

मन की यह सब समीक्षा की गयी है। आप प्रमाद से उठते ही नहीं। संयम क्या होता है इसका प्रवचन नहीं - संवेदन किया जाता है। फिर भी आप संयम की बात कर रहे हैं असंयमी होकर भी यह महत्वपूर्ण है। बात करते-करते ही एक दिन वह आयेगा

जब आप भी संयमी हो जायें। अभी मेरे से गलत हो गया इतना भाव तो आयेगा।

आजकल लोग एक निश्चित दिन मनाते है। संयम दिवस / जन्म दिन मनाना चाहते है अर्थात तप को भी बांधना चाहते हो। किसी ने कहा महाराज स्वरूप की क्या परिभाषा है। जिसकी न कोई Age है तथा न Image है वही स्वरूप की परिभाषा है। उस स्वरूप को न समझ पाने के कारण ही ये सब बिमारियां लगी है। उस अखण्ड अविनाशी आत्म तत्त्व का साक्षात्कार करो।

उनकी (गुरुजी की) बात सुनी तब मैंने सोचा ये सब तो किताब में मिलना मुश्किल है। किसी व्यक्ति से सुनना कहीन है - ऐसे गुरुजी उत्तर हैते थे। शास्त्रीय पद्धति से जो कुछ भी उन्होंने अपने जीवन को बनाया हो। वे जब भी बैठते थे एक वृद्ध व्यक्ति बैठा है - एक ग्रामीण व्यक्ति बैठा है ऐसा लगता था। वह काव्य/शास्त्र आदि का मात्र अध्येता ही नहीं निर्माता है। उन्होंने इस जगत को कालीदास आदि विद्वानों की टक्कर में अनेक साहित्य का अवदान दिया।

उनके जीवन पर जितना चिंतन करो उतना कम होगा। उन्होंने जितना भी साहित्य लिखा सभी अप्रकाशित था क्योंकी वे सदैव अपने

में लीन रहते थे। वे जानते थे कि संयम की घड़ियाँ कितनी है - पता तक नहीं।

एक बार एक व्यक्ति आये उनसे कहा - महाराज हम आपका साहित्य प्रकाशन करा देंगे। उन्होंने कहा - देखलो ये रचना मेरी तो है नहीं। इतनी निस्पृहता थी उनमें। आज सर्वाधिकार सुरक्षित लिखा होता है। एक छोटी सी पुस्तक भी निकलती है तो उस पर लिखा होता है - सर्वाधिकार सुरक्षित। पहले मैं जब लिखा देखता एक गोले में (cp) इसका अर्थ क्या होता है मैंने पूछा तो किसी ने कहा Copy Right. इसी को सर्वाधिकार सुरक्षित कहते हैं।

पढ़ना तो है पर प्रकाशन का अधिकार हमारे ही पास रहेगा। "स्वान्तः सुखाय" का क्या अर्थ। कवियों का जीवन स्व के लिए, अनुभवी का जीवन स्व के साथ दूसरा कोई लाभ लेना चाहे तो कोई बाधा नहीं है। वे प्रचार - प्रसार को नहीं प्रयोग को महत्त्व देते थे। उन पर पढ़े - लिखे हो या पैसे वाले हो या पद-प्रतिष्ठा वाले हो कोई प्रभाव नहीं पड़ता था। कहीं भी रहे उससे चिपकने की बात ही नहीं।

आज यह स्थिति है कि बिना गोंद भी चिपक सकते हैं। चिपकना हमारी अपनी मान्यता पर आधारित है। विषयों से भरा जीवन है

लेकिन गाफिल करे ऐसा नहीं है। अन्यथा सभी गाफिल हो जावें। गाफिल होना हमारी मान्यता पर आधारित है।

ऐसा ज्ञान हमें उनके अवसान के समय मिला। अवसान का मतलब जीवन के अन्तिम समय में मिला। जब हम गये तब उन्होंने कहा था- बहुत विलम्ब कर दिया ब्रह्मचारी जी। हमने कहा- आप बुलायेंगे तभी तो। कहाँ वे हिन्दी भाषी और कहाँ हम कन्नड़ भाषी। हव-हव कह देते थे। 'हूं' का मतलब ही स्वीकारिता है। कुछ नहीं आता तो बस जो गुरु बता रहे हैं उसे स्वीकार कर लो अपने आप ही आ जायेगा।

उन्होंने एक बहुत अच्छी बात कही जो बच्चों के लिए ही नहीं अभिभावकों को भी बहुत प्रभावित करेगी। उन्होंने कहा- संकोचित मत रहो, डरो मत, बस कोरी स्लेट रखो। सुन रहे हैं आप। हव। 21 वीं शताब्दी वाले क्या जानेंगे स्लेट और बरता। आप चाहते हैं तो अपनी स्लेट कोरी रखें। दूसरा जो कुछ भी पहले लिखा होगा उसे साफ करना अनिवार्य होगा। तभी कुछ नया लिखा जा सकता है।

कुछ धरिया गलत बना दी थी तो उसे बदल डालो। इसीलिये कहा गया है- जहाँ न जावे रवि- वहाँ जावे कवि और जहाँ न जावे कवि- वहाँ जावे आत्मानुभवी। वे आत्मानुभवी अतिथि के

रूप में रहते थे। आज तिथी समाप्त हो गयी वार और Date आ गयी।

आप लोग हमें भी तिथी में बाँध रहे हो। इतने वर्ष हो गये - इतने वर्ष हो गये। आज वे नहीं है। उनका नश्वर शरीर यहाँ से गया है, आत्म तत्त्व तो उनका कोरा - कोरा है वह यहीं है। ऐसा उन्होंने अपना जीवन व्यतीत किया था। शरीर उनका बिल्कुल जीर्ण - शीर्ण किन्तु एक भिन्न आभा को उन्होंने तैयार किया। अपने पर लज्जा सी आती है कि जितना उत्साह उनमें था उतने उत्साह से हम आप लोगों का सहयोग नहीं कर पाते हैं।

ऐसे अतिथी थी वे एक अनगढ को भी ढोका-ढोकी कर मोती बना देती रखते थे। अतिथी शब्द को चरितार्थ करने वाले थी। बस इतनी ही क्रम है जितनी प्रतिक्रमण / प्रायश्चित कर बाहर आया हूँ। इससे ज्यादा क्रम नहीं इसीलिए प्रतिक्रमण का विधान किया गया है। अप्रमत्तदशा में तो अतिक्रमण होता है अतः सावधानी के लिए प्रतिक्रमण किया जाता है।

आप लोग अतिक्रमण करते रहते हैं। आप लोग संयम दिवस मना रहे हैं। हम भी गुरुणी के उदाहरण देकर रिझाते जाते हैं इससे ज्यादा हवाला हम दे नहीं सकते। उन भावों को हम नहीं पा रहे

हैं। भावों को बुनने की प्रक्रिया आह्लाद उत्पन्न करने वाली है। मूर्त से अमूर्त की ओर ले जाने वाली है।

ऐसा कोई भी जिज्ञासु उनके चरणों में आ जाता- वह अपना समाधान अवश्य पा लेता था। आगे ऐसा कहा करते थे कम समय मिला है उसका सदुपयोग करो। प्रतिभा सम्पन्न विद्यार्थी समय की ओर नहीं देखता। बस! प्रश्न पत्र पढ़ता है और लिखता जाता है। जिस प्रश्न का उत्तर लिख रहा है उस समय दूसरे प्रश्न की ओर भी ध्यान नहीं देता। आप लोग- महाराज आशिर्वाद दे दो अगली कक्षा में पहुँच सकें। आपके आशीर्वाद के चमत्कार से इस परीक्षा में पास हो जायेंगे।

आप सामायिक कर सकते है, पर हम परीक्षा में मेहनत नहीं कर सकते हैं। अभी आपने संयम का उदाहरण देखा। बालिकायें आयी और सबने पेटी-चरखा प्रारम्भ कर दिया। सूत के माध्यम से सूत्र का निर्माण कर दिया। कोमल सूत है कहीं टूट न जाये इस बात का ध्यान रखा। जब ये उसमें सूत भर रहे थे पर कैसे? प्रमाद के अभाव में भर रहे थे।

इसीतरह संयम को भी प्रमाद के अभाव में कभी नहीं कर सकते हैं। पढ़े-लिखे से भी आगे का काम इन

लोगों ने कर के दिखाया। विश्वास हो तो देख लिजिए। ऐसा वस्त्र जो आरोग्य वर्धक है। स्वास्थ्य के लिए मांगलिक काम करता है। प्रतिभा ब्यसी की बहनें पहले स्वयं प्रशिक्षित हुई और अब अनेकों को प्रशिक्षण दे रही हैं। ग्रामीण महिलाओं को भी तैयार किया है।

भूरण्यसंगी जी ने भी कहा- हमें तो यह चमत्कार सा लगता है। ध्यान के माध्यम से यह होता है। वह व्यक्ति स्वावलंबित बनकर परिवार का आधार बन जाता है। इस प्रकार यदि सभी करने लगे तो दरिद्रता परिसर में भी नहीं घुस सकेगी। कोई भी मांगने वाला (भीख) नहीं मिलेगा।

आज पढ़े-लिखे होने के बाद भी मांगने वाले हो गये हैं। सब लोगों को सरकार कहां से देगी रोजगार। स्वावलंबित होना चाहते हैं तो इसे सीख लेना चाहिए। ऐसा कोई भी शब्द नहीं था जो भारत से वस्त्र न लेता हो। इन सबको इस वस्त्र को पहनने में शकुन मिलता था। आपको इतिहास की कोई जानकारी नहीं है। अभी जो विदेशी संस्कृति है उसी के बारे में सुनते हैं और काम करने लग जाते हैं। इतिहास तो पढ़ो। इतिहास में पुरुषों की भी एवं महिलाओं की भी कलायें

बतायी गयी है।

"कला बहत्तर पुरुष की, तामें दो सरदार।
एक जीव की जीविका, दूजा जीव उद्धार॥" पुरुषों की 72 कलायें एवं स्त्रियों की 64 कलायें होती हैं। आप इन सब से दूर हैं। आप तो ऐसा मंच बनाकर नेताओं को बुलाकर मांग सकते हो। स्वयं उत्पादन करोगे तो मालुम पड़ जायेगा। अपव्यय भी नहीं होगा।

आज संयम दिवस मना रहे हो। एक विशेष बात अपव्यय को कैसे रोक सकते हैं। आपके यहाँ 4 व्यक्ति हैं और 8 वाहन हैं, यही अपव्यय है। देश पर बोझ है। देश के सामने तेल की महान समस्या है। इस सभा में है कोई ऐसा जो संयम दिवस पर इस तरह का नियम लेना चाहते हैं। 4 की जरूरत है तो 4 ही वाहन रखें। पहले भी वाहनों का प्रयोग होता था किन्तु वे विधाओं के माध्यम से चलते थे। आज आपको ढकेला लगाना पड़ता है। तेल विदेश से लेना होता है, सो अनुबन्ध कर रखा है।

रक्षा करना भी कला के अन्तर्गत आ जाता है। परिग्रह रखते हो - मना नहीं है किन्तु उसका संरक्षण तो करो। पहले इस प्रकार का नियम दिलाया जाता था। अब ऐसा नहीं है। आपका ही बच्चा आपको आकर कहेगा - पिताजी था तो आप रहेंगे

या मैं रहूँगा। इसी लिए अपव्यय हो रहा है।

कोई है जो ये नियम लेना चाहते हैं। इस प्रकार से करेंगे तो देश एवं सरकार को सहयोग कर सकते हैं। आप देश के नागरिक हो। अन्यथा आपको भी खटकेगा। कांटा लग जाने पर उसे निकालने से पूर्व यूं-यूं किया जाता। वो कहता है अरे धीरे करो मेरे दर्द हो रहा है। कांटा जो गढ़ा वो कथा धीरे-धीरे गढ़ा क्या? बोलो। आपने ऐसा भार उस काँटे पर रख दिया। एक बिंबटल के हो। बोला ना। पाँव का भार दे दिया।

वर्षों से गढ़े काँटों को निकालना चाहते हो तो.....। गुरु जी छोटे-छोटे वाक्यों में ऐसे समझा देते थे कि सभी समाधान प्राप्त कर लेते थे। और दे लेना। लोभ है क्या करें, ऐसे गुरुजी थे। अब तो हिन्दी का भी एक ही दिन चलता है। आजकल यह ऐसा ही दिन आप लोगों ने मनाया है फिर तीन दिन क्यों रखा? जीवन पर्यन्त भी संयम को सदैव ही धारण करते रहें तो भी क्या?

एक सत्य है और दूसरा अहिंसा। सत्य भीतर की ओर ले जाता है तथा अहिंसा भीतर एवं बाहर दोनों की ओर। यदि इनका विस्तार चाहिए तो इतिहास पढ़ें अथवा पुराण ग्रन्थों में पढ़ना प्रारम्भ कर दो। पुराण पुरुषों के बारे में बच्चो को जरूर पढ़ना

चाहिए। इतिहास से भी यही चिन्तन मालुम होता है। पहले के विद्यालयों में यह सीखाया जाता था। आज के विद्यालयों में ये सब कुछ नहीं बताया जाता।

ज्यादा तो नहीं अन्तिम बात कहकर समाप्त करता हूँ। इतिहास के अभाव में भारत का नाम ही गुम कर दिया। 100 वर्ष पूर्व इण्डिया शब्द ही नहीं था। भारत भेषण वालों भा र त कहो। ये बच्चे खुश हो जायेंगे। हमारे बाप-दादा कभी कोई समस्या में नहीं रहे और आज कदम-कदम पर समस्या से ग्रसित हैं। आपने दादा जी को नहीं देखा पर उनके इतिहास को तो जान ही सकते हैं।

आप महावीर भगवान की जय बोलते हो। वो कौन थे? क्या थे? पुराण ग्रन्थों से ज्ञात होता है। अपने स्वाभिमान को जागृत करने की आवश्यकता है। वह तभी होगा जब इतिहास पढ़ेंगे। सही दिशा में पुरुषार्थ करो। वर्षा हो रही है। यहाँ के लोग आये थे कल बोले महाराज ½ दिन की सीमा में रख लेंगे आप पानी न आये ऐसा आशिर्वाद दे दें। वह सीमा पूर्ण हो चुकी है। अब मैं कुछ नहीं कहता।

एक बार एक गाँव में थे। 8 दिन से वर्षा नहीं हो रही थी। गाँव के लोगों ने देखा यहाँ तो बाबा आये हुए हैं सो हमारे सामने आकर बोलते हैं- अपनी भाषा में - "बाबा पानी लानो है"। रविवार का प्रवचन

था हमने कहा देखो- देखो। योग की बात है रात में पानी चालु हो गया। अब वह रुकने का नाम ही नहीं ले रहा। रुके तब तो किसान बीज बोयें। जैसे अभी आप जाना चाहते हैं पर तभी जब पानी रुके तभी तो आप जा पायेंगे। वे लोग फिर से आये और कहने लगे - "रोक दे" उनकी भाषा में कहा।

मैं क्या कर सकता था? बस 1½ दिन मिल जाये। मैं अब जिम्मेदारी नहीं ले सकता। किसान माला फेर रहा है। परोपकार की भी बात करो मात्र स्वार्थ की ही बात नहीं। गुरुजी कहते थे - इधर-उधर की बातें दिमाग में नहीं रखा करो। अभी विद्यार्थी की बात कही ना जो प्रश्न कर रहे हो उसी पर पुरा ध्यान केन्द्रित करो तभी उत्तर अच्छे से लिख पाओगे। गुरुजी ने कहा था- समय बहुत कम है, उस समय का सदुपयोग करना ही संयम दिवस है।

उन्होंने आदि से अन्त तक अपने जीवन में दूसरों को किसी न किसी रूप में प्रेरणा दी है। कमियाँ बहुत हैं- सुधार करना है बस कदम-कदम पर उनका स्मरण करके ही चल रहा हूँ। जैसे उन्होंने अपनी काया और मन को नियन्त्रण में कर लिया था, कभी दूसरो की सेवा नहीं ली, दूसरे पर ही उपकार करते रहे। थोड़ी देर में पानी भी--। उठते-उठते कम हो जायेगा। तरणि ज्ञान सागर गुरु ---- अहिंसा परमोधर्म की जय।

29-7-17 "आओ जाने G.S.T." प्रातः 9.40

कल आपके सामने यह कहा था आप लोग अपव्यय से पहले बचिये। कुछ न कुछ कम तो करो यदि अपव्यय से बचते नहीं तो अर्थ पुरुषार्थ फेल हो जायेगा। जैसे आज भारत का हाल हो रहा है। आज धर्म तो करते हैं पर धर्म की परिभाषा नहीं जानते। धर्म कैसे करें यह जानना अति आवश्यक है। आप पूजन तो करते हैं, पूजन कैसे करते हैं, ये मालुम ही नहीं। प्रसंग है इसलिए बता रहा हूँ।

आप जब पूजन करते हैं चावल गिराते हैं। असावधानी का नाम ही असंयम है और सावधानी का नाम संयम। कैसे चलायें यह महत्त्वपूर्ण है। पहले तो चावल बिरा देते हैं फिर उसी पर पाँव रखकर चले जाते हैं। बिखरने की प्रक्रिया असंयम की ओर ले जा रही है। विधी के अभाव में वह पुरुषार्थ संज्ञा नहीं पा सकता। इसलिए हर आवश्यक सावधानी से करें।

मानता हूँ गृहस्थ है पर इसका मतलब ये नहीं। आप गाड़ी चला रहे हैं, पीछे सभी बैठे हैं। जो बैठे हैं वे सो भी सकते हैं किन्तु चलाने वाला सो जाये तो। सोना तो दूर झपकी भी ले ले तो सबको सुला देगा। इसलिए जो उनिंदा (निद्रा की इच्छा वाला) ह०ग० में क्या कहते हैं इसे "उनिंदा" (वह स्टेरिंग पर गिर जायेगा तो इसी को इसत् निद्रा भी

कहते हैं।

दूसरे पर उपकार नहीं कम से कम अपने घर तो उपकार करो। आपकी असावधानी से दूसरे को मन-वचन-काय से क्षति हो तो यह आपका अव्यवहार कहलायेगा। आपसे सहयोग पाना था वह तो दूर और उलटा हो गया। अतः दूसरे के लिए क्या-क्या सावधानी होना चाहिए, अपव्यय का मालुम पड़ जायेगा। सावधानी का विशेष ध्यान रखें। आज हर काम में मैनेजमेन्ट लाया जा रहा है इसका मतलब हर काम में असावधानी बुसी है।

प्राचीन काल के अनुसार प्रबन्धन करने का मतलब ही संयम है। आठ द्रव्य के लिए ही मात्र संयम नहीं, प्रत्येक कार्य में संयम की जरूरत है। समय कितना लेना यह मेरे से पहले पूछो। मुझे लाना है - पूछना मेरा अधिकार है। मैं तो 9 बजे ही आऊंगा - हमने सोचा अब तो वहीं होना है पूजा - पण्डाल आने में 5 मीनिट और लग गया। फिर पाद प्रक्षालन (एक दो तो कि। स्वर अलग - इस पांव का अलग फिर उधर ही चालु हो गयी। भगवान को आप कर सकते हैं।

मैं आपको नहीं कर सकता हूँ किन्तु मैं तो अपव्यय से बचुंगा। कल अपव्यय की बात कही थी। एक-दो व्यक्तियों ने हाथ उठाया था। आचार्यों ने इसे अनर्थदण्ड कहा है। इण्डा जिस

प्रकार पीटता है, अनर्थ दण्ड भी उसी तरह है। आप पिट रहे हैं मुझे सहन नहीं होता और आप पीठ दिखा रहे हैं। भारत पिट रहा है।

व्यवस्था रखीये। हर देवी में बारीकी से अध्ययन हो रहा है। आचार्यो ने मैनेजमेन्ट नहीं किया है पर व्यवस्था पुरी दी है। विधी रखी। भोजन करने के लिए न हमें मना किया न आपको। बस कितना लेना - कब लेना - कौनसा करना यह पहले कहा। [मुनिमहाराज का तो एक भुक्तिको एक मूलगुण में रखा] आज इसका उल्लंघन कर रहे हो। अस्पताल कौन बनायेगा? सरकार क्यों बनायेगी?

आप ही सरकार है। आप नागरिक के कर्त्तव्य से विमुख हो गये हैं। जिस राष्ट्र के नागरिक अपने कर्त्तव्य से विमुख हो जायेंगे वह राष्ट्र कभी भी उन्नति को प्राप्त नहीं कर सकता। इसलिए कहा आप अपव्यय से बचें। वाहनों के कारण आज वास्तु बिगड़ रही है. बस पार्किंग - पार्किंग - पार्किंग। देवालय के नीचे भी पार्किंग। पहले भगवान के समवशरण में जाने के लिए एक - आध किमी पैदल चलकर जाते थे अब तो भगवान की सीढ़ियों पर ही कारलगा रहे हैं।

पाँच भाई हैं पांचो मंदिर के बाहर पांच गाड़ी लगा देते हैं। आने-आने वाले परेशान होते हैं। आप कहते हैं - हमने टैक्स दी है। किसको दिया

है टैक्स? आवश्यक कितना है? यही दुरुपयोग हो रहा है।

हर व्यक्ति गाड़ी - बिल्डिंग - फैक्ट्री बढ़ाने में लगा है। प्रदूषण फैलाने में लगा है। Smart city तो सब कहते हैं - Smart village की बात कोई नहीं करता है। यह सब पैसे का दुरुपयोग है। अपने धन का सदुपयोग करें जो आरोग्य एवं विकास में कारण बनें। पहले भी कहा था - आज प्रासंगिक है इसलिए कहना चाह रहा हूँ।

अमेरिका में आर्थिक मंदी को दूर करने हेतु कमेटी बनायी गयी। कमेटी द्वारा आर्थिक मंदी जल्दी दूर हो। कमेटी के गठन की सूचना राष्ट्रपति के पास पहुँची तो वे चुप रहे। उनसे कहा इसमें कोई कमी हो तो बता दो। दो बार कहा। तीसरी बार कहने पर उन्होंने जो कहा वह सुन लो, आप भी ध्यान से सुन लो। जब तक भारतीय अर्थशास्त्री को इसमें स्वीकार नहीं करोगे तब तक मैं इसे स्वीकार नहीं करूंगा।

भारत के लिए ताली बज गयी। जो भारत के पास हिमाग है वह विश्व में नहीं है। अपव्यय करने वाला कभी अर्थशास्त्री नहीं हो सकता। अर्थशास्त्र में शून्य भी नहीं मिलेगा। मान लो दुकान खोलकर बैठे हैं और लुटाना शुरु करदे, क्या होगा? दिवाला

क्या दिवालीया हो जायेगा। महावीर के समान वह भी हो जायेगा। जैसे भगवान महावीर दीवाली के दिन सब छोड़ के निकल गये वैसे ही वह भी जल्दी ही दिवालीया हो जाता है।

राजस्थान में शटर तो बंद हो तथा देहरी के ऊपर पन्ना रखे हो तो लोग समझ लेते है क्या हुआ? ये आदमी दिवालीया हो गया है। आज दिवालीया होने के बाद भी फर्क नहीं पड़ता है। अर्थव्यवस्था भी ऐसी नहीं रही। गलत को स्वीकार कर लेना चाहिए। असंयम के कारण ही यह होता है।

खाने के संबंध में भी यदि असंयम रखा तो अकालमरण होता है। आप स्वयं बचें एवं अपने अड़ोस - पड़ोस तथा सम्पर्क में आने वाले को बचाइये। पहले दीवाली पर खातों का मिलान होता था अब 31 मार्च आ गयी। आप लोग ऐसे मानने वाले नहीं हो। कानून लगा देंगे सब मानेंगे। दो-तीन दिन में आने वाला है। G.S.T. फिर जी खी Yes-Yes (यश-यश) करेंगे।

जो नियमावली है उसी अनुसार चलना आवश्यक है। हरेक व्यक्ति के लिए यह किया है। बैल को वश में करने हेतु नाक में नत्थी, हाथी के लिए अंकुश, ऊँट के लिए नकेल और गाड़ियों में ब्रेक

लगाया जाता है तभी गाड़ी चलाने वाला सुरक्षित रहता है। आप G.S.T. का अर्थ हमारे अनुसार लगा सकते हैं। G = गोम्मटसार, S = समयसार एवं T = तत्त्वार्थ सूत्र आप लोग तत्त्व के अनुसार बोलिये, समयसार के अनुसार तोलिये तथा गोम्मटसार के अनुसार किसे हटाना एवं किसे रखना इसे ध्यान रखीये।

आप लोग अन्यथा न लें। एक दिन का संयम दिवस फिर भी तीन-तीन दिन संयम दिवस वह भी असंयमी होकर बहुत बड़ी बात है। गाड़ी कम नहीं कर पा रहे हैं फिर भी कह दिया।

अहिंसा परमो धर्म की जय। ॐ

30-7-18 "गुरु जहाँ, वहाँ कंडीशन कहाँ" प्रातः 9.20

आप दीपक जलाते हैं तो दीपक से प्रकाश प्राप्त होता है। काहे का दीपक जलाते हैं- प्रश्न होता है तो क्या उत्तर देंगे। दूध डालकर दीपक जलाओ। बाती उसमें भीगो दो। प्रकाश देगा- नहीं। क्या दूध में घी नहीं है? है तो फिर जलना चाहिए। घी नहीं हो तो दूध काहे का।

चलो आगे बढ़े। अब दूध का दही जमा दिया उसमें दीपक जलाओ। और आगे चले- नवनीत का गोला निकाला उसमें बाती को डाला फिर दीपक जलाया- नहीं जला। जब तक उस दूध का विधीवत् घी नहीं बनेगा तब तक दीपक नहीं जलेगा। इसी तरह आप सब के

भीतर आत्म तत्त्व है पर सुगंधी नहीं।

ये तत्त्व जब प्राप्त होंगे तब होंगी। आचार्य कहते हैं जो बाधक तत्त्व हैं प्रकाश में उन्हें हटाना होगा। विधिवत् दूध को जमाकर उसे घण्टे बाद जो दही प्राप्त हो उसे मथकर नवनीत को गरम कर घी निकाल सकते हैं। इसी तरह आत्मा को भी विधीवत् जब संयम मार्ग में बढ़ते हैं तभी प्रकाशित कर सकते हैं। दूध में, दही में, नवनीत में वह सुगन्धी नहीं जब घी में परिणत होगा तभी सुगन्धी आयेगी।

आप चाहे तो अल्प संयम में भी उस सुगन्धी का लाभ ले सकते हैं किन्तु असंयमी ऐसे गंध को कभी भी अनुभव में नहीं ले सकता। चाहे एक वर्ष तक क्या १० वर्ष तक वह ध्यान करता रहे घृत भी नहीं मिलेगा हाँ लाइन में आ सकते हैं। दूध के बिना भी उस घृत की प्राप्ति नहीं होगी। खोवा बनाने से भी घी वाली सुगन्धी नहीं मिलने वाली। खोवा में पानी उड़ गया पर वह घी नहीं बना। आप लोगों को ऋद्धियाँ प्राप्त हो सकती हैं पर ऐसे ऋद्धि सम्पन्न वाले भी बिना ऋद्धि वाले के चरणों में नमोऽस्तु करते हैं।

ऐसे वे मुनिराज होते हैं। ये ऋद्धि और प्रसिद्धि लौकिक है। अहमिन्द्र जीवन में भी यह बड़ी प्राप्त होने वाली नहीं है। वे भी चाहते हैं इस पद को पाना पर होगा तभी जब विधिवत् करेंगे। ऐसे भी कई जीव जो पल्ले में पहले से ही क्षायिक सम्यग्दर्शन लेकर

लेकर आये हैं पर अंतिम समय तक असंयमी ही बने रहते हैं अन्त के अन्तर्मुहूर्त में दीक्षित होकर मुक्त हो जाते हैं।

महाराज साहस नहीं हो पाता। नींद में रहते हैं। सोने के लिए चाहता हो किन्तु जगह नहीं है क्या करते हो? झपकी तो ले ही लेते हो। असंयम के काल में आनन्द नहीं ले सकते। कंडीशन ढीले दिजिए। कुछ दिन तो शर्त मान लिजिए। असंयमी की शर्त माने तो संयमी की सुगन्ध कौन सुंगेधा। आप बहुत कुछ होते हुए भी कुछ भी नहीं कर पाते हम कुछ भी नहीं तो भी बहुत कुछ कर लेते हैं। आचार्य कहते हैं किसी के वशीभूत होने में काम नहीं। ऐसे में 100 नहीं 1000 वर्ष भी जीना जीना नहीं है।

स्वतंत्रता क्यों पायी पता ही नहीं है। अपने स्वाभिमान को भूल गये हैं। संयम के प्रति-उद्देश्य के प्रति जागृत होना अति आवश्यक है। हमेशा-हमेशा जागृत रहने की आवश्यकता है, झपकी भले ही आ जाये किन्तु भीतर से चिन्तन चलता रहता है। एक चिन्न चलता रह सकता है फिर आंखे बंद करो या खोलो। कल नहीं परसो एक अच्छी बात कही - जो सो रहा है वह जाग नहीं रहा ऐसा नहीं है। व्यवहार में जो जागता है वह निश्चय में सोता है और जो निश्चय में जागता है वह व्यवहार में सोता है। असंयम की गंध वाले को संयम की सुगंधी नहीं आती।

आचार्य वीरसेन महाराज ने

भी कहा देवों में संयम की गंध भी नहीं आती है फिर भी कषाय में रहते हुए भी निःकषाय / देवता स्वरूप लगते हैं। आप भी कषाय करते हैं पर हल्की कषाय करते हुए भी जी सकते हैं। वो कैसे ? आपके भीतर है उसे तोलें फिर निकालें।

भी तभी प्राप्त होगा जब विधिवत् करेंगे, हमको आत्म तत्त्वकीतभी प्राप्ति होगी जब बाहरी क्रियाओं से ऊपर उठ जाते हैं। कुछ ऐसी क्रियायें जिनमें साम्य हो सकता है पर अन्तर बहुत है। आप भी खड़े - खड़े भोजन करते हैं। महाराज बनने का अभ्यास कर रहे हैं। आप भी अनुकरण कर रहे हैं पद्धति का। एक व्यक्ति करता है अनेक व्यक्ति उसके पीछे लग जाते हैं। बाहर से नहीं करते भीतर से ही करते हैं। एक स्थान पर आचार्य कुन्दकुन्द देव ने कहा - जो नी जीव अपरिग्रही होता है।

वह भोजन - पान नहीं करता फिर भी आप देते जाते हैं तो वह लेता जाता है। आ० ने इसीलिए २८ मूलगुण में एक बार भोजन रखा। उपवास करने का नहीं रखा। आप भी एक ही बार खा लो। हम जैसे नहीं खा पायेंगे, क्यों की आप अपरिग्रही नहीं हैं। सोचेंगे तब पता चलेगा। बार - बार कहता हूँ परिसह कहो या मुर्छा कहो एक ही है। उतने ही अस्त्र के साधन विद्यमान हैं। निरिहवृत्ति वाले ही इसे कर सकते हैं। एक तारीख कल से आ रही है। शायद लागु करना पड़े।

मनमाना कर रहे हो। अब जड़ा से खात हो जायेगा। इतिहास के पन्नों में लिखा है, कोई किसी प्रकार की Tax नहीं लगती थी।

श्रम करता था तो राजा को भेंट स्वरूप जो कुछ देता था उसी से काम हो जाता था। टैक्स की बात ही नहीं आयी। विदेशों ने भी टिप्पणी की थी। अब यह कौनसा शासन आ गया। शासन नहीं दुःशासन है। शोषण है। निर्दयता का प्रतीक है। ये भारतीय ने नहीं विदेशियों ने लिखा। यह दशा हो रही है भारत की।

पुण्य से आपको मिला है, जिसके पास नहीं है उसे आश्रय दिजिए। मोह को कम किजिए। हम स्पर्धा के लिए मना नहीं करते हैं। स्पर्धा करो तो, मोह को कम करने में अन्यथा नम्बर आना ही मुश्किल है। कल की तारीख से कौन का मोह कितना कम है पता लग जायेगा। अभिमान छोड़कर श्रम दान करे आश्रय दान करे। शास्त्रों में आचार्यों ने आश्रयदान को बहुत महत्त्वपूर्ण गिना है।

यह आश्रय दान जीव को ही दिया जाता है जड़ को नहीं। देने वाला (दाता) भी जीव है। एक स्थान पर लिखा जैसे कन्यादान - गोदान वैसे ही आश्रयदान भी महत्त्वपूर्ण है। कथा सुनायी होगी हमने आश्रयदान की - आराधना कथा कोष से पढ़ सकते हैं। श्रम दान भी कर सकते हैं। इन सबके द्वारा

अपने आपको कष्ट नहीं अमृत की ओर ले जा सकते हैं।

इन दानों को प्रारम्भ कर दो। अब लेना बंद करो, देने से ही संयम मार्गणा में आ सकते हो। किसी को नीचा दिखाने के लिए भी न दे। आज तीसरा दिन है। सुनना तो पड़ता ही है। यह दिन भी आपके लिए आश्रयदान में आ जाये, इन्हीं भावनाओं के साथ!

अहिंसा परमो धर्म की जय!

1-7-17 "बदलना जरूरी है" प्रातः 9.20

विचार ऐसी शक्ति है जो मन में निरन्तर आते रहते हैं, थोड़ा सा भी अन्तराल होता ही नहीं। यही मन की/आत्मा की शक्ति है। आज के व्यक्ति को मन के साथ ही जीना पड़ता है, इसी में ही सुख-दुःख की परिकल्पना होती रहती है। यही उपयोग में आता है इसके विपरित स्वाद आना हमारी साधना मानी जायेगी। फिल्म के समान जो दिखता है वह छद्म कहलाता है। दिखने में द्रव्य की द्रष्टता यह होती है कि ये हमारा मित्र/बंधु है।

एक निश्चय एक व्यवहार पक्ष होता है। आप हमेशा-हमेशा व्यवहार में ही रहना चाहते हैं। हमारे जीवन में भीतर से ऐसी ध्वनि निकलती है कहाँ से आये? कहाँ जाना है। जन्म लेते ही ऐसा होता है। वह शुरुआत ही ऐसी कि अतीत की घटनाओं का विस्मरण होता चला जाता

है। यदि स्मरण रहे तो मोक्ष की ओर ध्यान रहेगा। फिर तो वही घोड़ा और वही मैदान।

आपका भी कार्यक्रम हो गया अब वही घोड़ा और .....। साल-साल जीवन पर्यन्त चलाओ मना किसने किया। हम तो चाहते हैं इसी जीवन में क्यों दूसरे जीवन (भव) में भी चलाओ, जब तक मुक्ति न हो तब तक चलाओ। आप बंधते क्यों हैं, यह अविवेक कहलाता है। हम वस्तुओं को अथवा जीवों को झेल नहीं पाते उसके साथ मोह जुड़ जाता है जो फिर वासना का रूप ले लेता है।

हम ऐसा व्यवसाय (पुरुषार्थ) करें की मोह को छेद सकें। दृष्टि बदल जाये तो मोह छेदने में समय नहीं लगेगा। यह स्वभाविक कार्य है पर हम विभाव में जी रहे हैं। विभाव में जीते हुए मोह की जंजीर को कभी तोड़ नहीं सकते। आगे बढ़ना चाहो तो हम बढ़ा सकते हैं। शब्द वर्गणा ही तो है जो प्रभावित करती है। वे शब्द वर्गणा भी क्षयोपशम न हो तो ग्रहण नहीं कर सकते।

बुद्धि यदि नहीं तो आपकी दृष्टि में वह आयेगा ही नहीं। निर्विकल्प दशा को प्राप्त होने पूर्व ही बाहर से भीतर जाने का सौभाग्य प्राप्त हो सकता है। आप भी विकल्प से रहित होना चाहते

हैं तो गाड़ी को रिवर्स में ले आयें।

गाड़ी जब सामने की ओर चलाते हैं तो गति तेज होती है जब कि रिवर्स में गति धीरे रहती है। वह इसलिए की कहीं कोई गड़बड़ न हो जाये। कुछ लोग कहते हैं हम सब सम्भाल लेंगे ऐसे में एक्सीडेन्ट हो जाते हैं। होश-हवाश में होकर गाड़ी चलाओ। यदि होश में हो तो फिर दबाते जाओ। ये क्या है? पुरुषार्थ जीवन में मानते है या नहीं?

संयम दिवस मनाना है। पुरुषार्थ से होश-हवाश में गाड़ी चलाओ अन्यथा गाड़ी कौनसी कम्पनी की है ये भी पता नहीं चलेगा। पता चलाने वाला होगा तब तो। ऐसा ही मोह की दशा है। आज तक न जाने कितनी गाड़ी क्षतिग्रस्त कर दी और न जाने कितने जीव क्षतिग्रस्त कर दिये हैं।

कर्मबंधोदय के कारण यह हो रहा है। मानता हूँ आपकी गाड़ी है पर आपकी गाड़ी के कारण कई गाड़ियाँ क्षतिग्रस्त होती है, उसे समझने का प्रयास करेंगे तभी जीवन सार्थक होगा।

अहिंसा परमो धर्म की जय।

2-7-17 दोपहर 1.30 पर डोंगरगढ़ से विहार हुआ।
रात्रि विश्राम - पनियाजोब
(छत्तीस.)

देरेकसा 3-7-17 "कल्याण की भावना" प्रातः 9·२०

~~महाराष्ट्र~~ भारत में यह राज्य जिसका नाम ही है- महाराष्ट्र। भारतीय परम्परा का ही प्रत्येक प्रदेश में निर्वाह हो और अहिंसा का ही बोलबाला हो। जन-जन के कल्याण की भावना जन-जन में हो। इन्हीं पावन उद्देश्य से जीवन सार्थक हो सकता है नहीं तो एकत्रित करो कहीं न कहीं जायेगा। कोई भी ऐसा कानून आयेगा, आपको देना ही पड़ेगा।

संरक्षण के साथ जिनको आवश्यक है उन्हें दें। उनके लिए ऐसा करेंगे। आर्तध्यान-रौद्रध्यान से ऊपर उठ मोह को छोड़ धर्म की आराधना करना चाहिए।

अहिंसा परमो धर्मः की जय हो

रात्रि विश्राम - सालेकसा (महाराष्ट्र)

आमगाँव 4-7-17 "प्रकृति से पुरुष की ओर" प्रातः 9·२०

प्रायः लोग वहाँ पर घूमने के लिए जाते हैं जहाँ पर सरोवर हो, नदी हो, बाग-बगीचा हो। चारों ओर सुहावना दृश्य हो और पक्षीयों का कलरव हो। वहाँ पर जाकर मनोहर दृश्य का अवलोकन करना चाहते हैं। योग से यहाँ पर इस प्रकार का स्थान है। इस प्रकार के स्थानों के निर्माण का उद्देश्य क्या रहा होगा। मन हमारा कहीं लगता नहीं। मन को लगाने हेतु इस प्रकार के स्थानों का निर्माण किया जाता

है।

ऐसे स्थानों पर मन एकाग्र हो स्थान से हट भगवान में लग जाये। मैं यह मानता हूँ प्रायः कर मन भगवान में नहीं लग पाता। भगवान तक मन पहुँच ही नहीं पाता। ये महाराष्ट्र तो है ही पीछे कुछ दूरी पर छत्तीसगढ़ है। दोनों ही प्रान्तों के लोग अपनी-अपनी भावना लेकर आये हैं। अच्छी भावना है।

कौनसी भावना है? ये तो भगवान जाने। चातुर्मास तो होगा ही - सब लोग वहाँ आ जाना। मिलाई पीछे रह गया। आपका मन देव-गुरु-शास्त्र में लग जाये, ये उद्देश्य रखकर के जीवन के क्षणों को व्यतीत करें। हम उनको उपयोग में लायें। कषायों से ऊपर उठने का पुरुषार्थ करें, इन्हीं भावनाओं के साथ!

अहिंसा परमो धर्म की जय! नूँ

रात्रि विश्राम - नौनीहोला

चर्या - गौरे गाँव (Jain Resorts) 5-7-17, रात्रि वि० - मंगेझरी सुकड़ी, 6-7-17 "जड़ को मजबूत करें" मध्याह्न 1:30

आज आप लोग, हम लोग विद्यालय में परिसर में उपस्थित हैं। विद्या का आलय होता है - विद्यालय। जहाँ पर हमें दिशा मिलती है - प्रकाश मिलता है और हम सही दिशा में बढ़ जाते हैं। विद्यालय एक ऐसा साधन है कि हम अकेले होकर भी अनेकों को साथ लेकर उत्तम कार्य कर सकते हैं। विद्या कैसे हो? ये हमें

अवश्य निर्णय ले लेना चाहिए।

भारत ने यह पाठ विदेश को भी दिया। इतिहास पढ़ने से ज्ञात हो जायेगा। वर्तमान में शिक्षा प्रणाली में जो कमियाँ हैं। जब तक दूर करने का पुरुषार्थ नहीं करेंगे तब तक अतित भारत का अनुभव कभी भी होगा ही नहीं। इसलिए सही दिशा की ओर जाने के लिए शिक्षा प्रणाली कौनसी अपनायें।

बच्चों को तो आप जो पढ़ाओगे वही ग्रहण कर लेता है। अभिभावक भी जागृत नहीं हैं। वह अतित के साथ न होने के कारण विद्यालयों में ऐसी स्थिति बनी है। वर्तमान पीढ़ी उस अतित के ज्ञान से वंचित हो गयी है। जैसे आप वृक्षारोपण करके आनंद का अनुभव करते हैं। अपने कर्त्तव्य समझते हैं। गमले में पानी डालते हैं। यह सब शुरुआत में तो ठीक है। जब वह 4-5 फीट का हो जाता है उसके बाद वृद्धि नहीं। वह पेड़ न छाया देगा न ही फल हो फूल दे सकता है।

गमले से हटाकर अथवा गमले की धरती के भीतर रोप दे तो वृक्ष अपनी जड़े चारों ओर फैलाकर विशालकाय वृक्ष का रूप ले लेता है अब वह छाया, फल फूल सब देगा। यह सब धरती से जुड़ने पर हुआ। गमले के वृक्ष के आगे तो आप फोटो मात्र खिंचवा

सकते हो। (व्यंग्य) आज भारत में यही हो रहा है।

दूसरा विद्यालयों में श्रम करना नहीं सीखाया जाता। श्रम से दूर हो गये। श्रम करेगा तो स्वयं को भी एवं दूसरों को भी संभाल पायेगा। बच्चों को स्वाश्रित बनायें पराश्रित नहीं। विद्यालयों में स्वाश्रित बनाने की (श्रम सीखाने की सामग्री उपलब्ध नहीं हो पा रही है। आपका कर्त्तव्य है कि उन्हें आश्रय दें। जो ऐसी सही शिक्षा पा चुका है वह स्वयं के साथ दूसरों को भी आश्रय दे सकता है।

आश्रय देने में दीनता या अभिमान का भाव नहीं होना चाहिए अपितु कर्त्तव्य की दृष्टि हो। आज न स्वयं सक्षम है न ही अड़ोस-पड़ोस की पूर्ति में सक्षम है, वही मांगने लगा है। शासन अथवा सरकार, माता-पिता इस माँग की कहाँ तक पूर्ति करेंगे। स्वयं श्रम करेगा तो कभी मांगने की नौबत नहीं आयेगी। पहले घर के जितने भी सदस्य होते थे वे सभी हस्तशिल्पया अन्य के माध्यम से स्वाश्रित होते थे।

मांगने वाले सरकार के सामने भी एक बड़ी समस्या है। आप लोगों को समझना चाहिए, जीवन जीने का ढंग था- सभी सम्पन्न थे कोई गरीबी में नहीं था। आज कदम-कदम पर आपत्ति (समस्या) है। इसका समाधान मात्र है- हस्तशिल्प। विद्यालयों में शिक्षकों द्वारा मांग की जाये। 9वीं या 10वीं कक्षा के विद्यार्थियों

को हस्तशिल्प सीखाया जावेगा। ऐसे में 3-5 साल में भी वह अपने जीवन को स्वावलंबित बना सकता है।

अर्थात वह अपनी शेष शिक्षा के लिए माता-पिता पर आश्रित न होकर स्वयं ही इतने धन की पूर्ति कर सकता है। यदि यह प्रत्येक विद्यालय में हो जाये तो राष्ट्र ही नहीं माता-पिता को भी खुशी होगी। पहले की शिक्षा-प्रणाली ऐसी ही थी। विदेशी शिक्षापद्धति के कारण ये सब तहस-नहस हो गया।

सुनते हैं पढ़े-लिखे होने पर भी बेरोजगारी ऐसी फैल गयी उससे जुझ रहे हो जुझना जानते हैं आप लोग ? कारण यही है श्रम उन्हें नहीं सीखाया गया। लाखों बच्चे भारत में जो इंजिनियर, मानद Phd आदि (500 पद हेतु आवेदन मांगे, लाखों ने भर दिये। चपड़ासी के पद के लिए। यह दशा हो गयी है भारत की। प्रशासन ने भी सोचा ये कितने श्रम की बात है।

वह अपने स्वाभिमान को भूल गया है। भूल क्या गया है उसे अवगत ही नहीं कराया जाता। माता-पिता का कर्त्तव्य होता है कि वे अपने साथ बेटे को भी सीखायें। अपनी दुकान पर नहीं बैठता है तो दूसरे की दुकान पर बैठायें अन्यथा वह आपको एवं देश को दिवालिया कर देगा। आप परिश्रम कर रहें हैं लेकिन सही दिशा में नहीं कर रहे। इस पुरे कथन का सार यह है ऐसा हमारा कहना है। अभी हमारे विचार

चल रहा है।

एक बात खासकर विद्यार्थियों से कहना चाहता हूं कि कठनाइयों से कभी भी डरना नहीं चाहिए। कठनाइयों से घबराने वाला क्षम नहीं कर सकता।

"उस पथिक की क्या परिक्षा,
जिसके पथ में शूल न हो।
उस नाविक की क्या परिक्षा,
जिसकी धारा प्रतिकूल न हो॥"

नाविक जब प्रतिकूल धारा में अपनी नाव चलाता है तभी उसकी परिक्षा होती है। पथ पर चल रहे हैं तो कांटे-कंकड़ आदि कई प्रकार की बाधायें हो सकती हैं। संघर्षों से बचने का तीन काल में भी कभी मत सोचो। पेड़ लगाते हैं, उसके सामने कैसा-कैसा संघर्ष आता है। गर्मी-सर्दी-वर्षा सब बाधाओं को समता से सहता है और आपको छाया देता है- फल देता है।

आप थोड़ी सी प्रतिकूलता होने पर भी उसका प्रतिकार करने लगते हैं। वह पेड़ एक-आध नहीं सौ-सौ वर्ष तक आपकी सेवा करता है। किसी कवि ने कहा- 100 संतानों को पालने का जितना पुण्य उससे कहीं अधिक एक वृक्ष को उगाने/उसकी परवरिश में मिलता है। आप लोगों के लिए तो सरकार को परिवार नियोजन की बात करनी पड़ती है। वृक्षों के माध्यम से प्रकृति को बनाये रखें, ऐसा मेरा अभिप्राय है।

अहिंसा परमो धर्म की जय। नँ

रात्रि विश्राम - सरांडी
7-7-17, चतुर्दशी, चर्या - माड़गी " तुमसर
8-7-17, गुरुपूर्णिमा-I " उस्सरा " जांब
9-7-17, " II " हिवरा " भंडारबोडी
10-7-17, एकम् " नागार्जुन रिसोर्ट, रामटेक प्रवेश 3:30 अपराह्न
11-7-17 रामटेक क्षेत्र "मान्दिर नहीं ज्ञान मन्दिर" प्रातः 9:30

हसी आंगन में दो-तीन वर्ष पूर्व प्रतिभा स्थली के शिलान्यास अथवा भूमि-पूजन का कार्यक्रम सम्पन्न हुआ था। मानस्तम्भ भी जितने रूप में देखा था अभी उसी रूप में सुरक्षित देखा। विकास का कुछ दुकानों की अपेक्षा कम है। अब वह रुका हुआ है या चल रहा है ये तो स्वयं कार्यकर्ता जानते हैं। फिर भी... उनका यह कहना है कि आपके बिना हम काम नहीं कर सकते हैं। ताली बजाने का प्रशिक्षण लगता है आपका अद्भुत है, कहां से प्रशिक्षित होकर आये हो?

वर्ष की गिनती के अनुसार प्रतिवर्ष छात्राओं की संख्या बढ़ तो गई फिर भी कम है। छोटी प्रतिभा स्थली है ना। अब रहेगी तो छोटी ही है। इस भांति से चलेंगे तो जो 1300 छात्राओं का स्वप्न आपने देखा है, वो कैसे पुरा करेंगे, ये आप पर आधारित है। योग ढोंगरगढ़ - चन्द्रगिरी प्रतिभा स्थली

कैसे लोग कह रहे थे अब तो निश्चित जैसा ही लग रहा था। जैसा क्यों बोल रहे हैं इसका मतलब आप ही अनिश्चित हैं।

योग से इधर आना हुआ। ये ध्यान रखें- द्रव्य-क्षेत्र-काल-भाव के निमित्त से ही काम हुआ करते हैं। आप लोगों के पास एक ही कार्य नहीं है। घर के कार्यों के साथ ये कार्य भी सम्पन्न करने का संकल्प लिया है। मन्दिर के कार्य में तो गति बढ़ जाती है। ये शिक्षण का क्षेत्र, संस्कारों का क्षेत्र है। इसमें आपकी छात्रायें (कन्यायें) जीवन को व्यतीत करेंगी। अतः आप पर आधारित होगा। विशेष योगदान देना होगा।

इन कार्यों में समय सबसे बड़ी बात है। समय सबसे बड़ा धन है। यदि समय नहीं दिया तो मात्र पैसे से भी काम नहीं होगा। समय पहले चाहिए। आप रात-दिन दुकान चलाते हो। रात इसलिए की मस्तिष्क तो चलता ही रहता है वो तो सरकार के डर से बंद रखते हो। योग से हमारा कल आना हुआ। प्रायः कर गुरु पूर्णिमा हमारी रास्ते में ही पूर्ण हो गयी - दो पूर्णिमा थी पर दोनों रास्ते में ही हो गयी।

समय पर ही गाड़ी पहुँचती है पहले नहीं। आज का यह कार्यक्रम (प्रतिमा अनावरण) रखा था। इसमें आलस्य

न रखते हुए सहयोग करें। कहाँ से - क्या है समय पर आपको ज्ञात हो जायेगा। आप लोगों ने सहस्त्रकूट (१००८ जिनबिम्ब) का संकल्प लिया है।

इतना अवश्य है कि एक ही नाप-तौल की बनी है। नाप-तौल के साथ इनका रूप-स्वरूप देखेंगे तो पता लगेगा सभी एक सी है। आपकी प्रतिमा यदि किसी अन्य ने ले ली तो आप उसके रूप को देखकर यह नहीं पहचान पायेंगे की मेरी कौनसी है। शिल्पकार कितना भी नाप-तौल से बनाये फिर भी चहरे में एकपना नहीं आ सकता। कुछ न कुछ अन्तर जरूर आयेगा पर इनमें ऐसा नहीं है। सभी १००८ के चहरे एक से रहेंगे। कार्यकर्ताओं ने जो आपलोगों को संकेत दिये हैं इस पर गौर करने का प्रयास करेंगे।

कल सुबह आ जाते पर नागपुर तो भीषण गर्मी में प्रसिद्ध है। कल ही मौसम एकदम परिवर्तित हो गया। मन्द-मन्द सुगन्ध पवन के साथ पानी। ज्यादा वर्षा हो जाती तो वह आश्चर्य नहीं होता। पंच आश्चर्य में यह हुआ। सामायिक में बैठा उससे पूर्व कुछ नहीं ज्यों ही सामायिक पूर्ण हुयी एकदम से परिवर्तन हो गया।

आप लोग अपनी स्थापना कलशों के माध्यम से कभी भी करें स्वतन्त्र है। हमारा तो - कब-

कैसा बता दिया जायेगा। होंगर वालों ने संयम दिवस मनाया। संयम नहीं ले सकते तो संयम दिवस तो मना ही सकते हैं। एक दिन न जाने मैं भी कैसे वहाँ बैठ गया। उस दिन मैंने प्रसंग के अनुसार कहा था अभी हमारे पास 15 दिन है। योग से 5 दिन और मिल गये।

संघ ने भी सोचा अब तो पक्का है यहीं चातुर्मास। हमने देखा होता है तो अच्छी बात है। और वह हो गया किन्तु इस समय का बहुत अच्छे ढंग से सदुपयोग करना है। विशेष रूप से जो महत्वपूर्ण कार्य है उनको व्यवस्थित करना है। पाठ्यक्रम के अनुसार भर्ती तो होने आयेंगे। 12वीं के बाद निकलना होता है। 10वीं के बाद भी निकल सकते हैं पर बहुत कम में संख्या बढ़ती ही जायेगी।

कार्यकर्ताओं और प्रबंधकों का कर्त्तव्य है इसे व्यवस्थित करें। मन्दिर एवं सरस्वती मन्दिर में यही अन्तर है। मन्दिर में भगवान को विराजमान कर दिया बस चल जायेगा। इसके लिए ऐसा नहीं पुरी व्यवस्था चाहिए। ये भी ध्यान रखें - हम लोगों को एकान्त बनाये रखें। हमारे लिए यही व्यवस्था है। नागपुर का बाजार बन गया तो विद्यालय भी चलता है। भीड़ तो आती है पर चातुर्मास के लिए योग साधना का स्थान सिद्ध हो। बस इतना ही कहकर अपना वक्तव्य समाप्त करता हूँ।

अहिंसा परमो धर्म की जय हो

13-7-17 "आशीर्वाद" प्रातः 9.25

आप लोग बड़े चतुर हो। एक-एक बात करते हो। पहले कहा- यहाँ बैठ जाओ, हम बैठ गये। फिर पांवों का प्रक्षालकर लिया फिर पूजन करने के उपरान्त कहा- महाराज! आशीर्वाद दे दो। पूजन की थे ही हमारा आशीर्वाद है। नहीं महाराज मुख से बोलकर- "आशीर्वाद"।

आशिर का अर्थ होता है मंगल/शुभ। मंगलरूप वातावरण के लिए हमारा आशिर्वाद है। आप सभी लोगों का जीवन मंगलमय हो- शुभ हो। शुभ जो शुद्ध के लिए कारण होता है।

अहिंसा परमो धर्म की जय हो

14-7-17 "बच्चे सुनते नहीं" प्रातः 9.20

आप लोगों को ज्ञात होगा कि विवाह के योग्य होने पर कोई भी व्यक्ति धर्म-अर्थ पुरुषार्थ के बाद काम पुरुषार्थ को धारण करता है। काम पुरुषार्थ के उपरान्त पुत्ररत्न की प्राप्ति हो जाये यह भाव रखता है। इसी अपेक्षा-उद्देश्य को लेकर विवाह करता है। योग से उसे पुत्ररत्न की प्राप्ति भी हो गयी। अब वह छोटे से बड़ा हो गया।

योग्य संस्कार आदि सब कुछ हो गये किन्तु माता-पिता के प्रतिकूल होने लगा। योग से वहीं कोई

महाराज का आना हुआ। माता-पिता उस पुत्र को भी साथ लेकर आये। महाराज से कहा - बड़े योग से यह पुत्र प्राप्त हुआ है किन्तु... किन्तु क्या? किन्तु महाराज यह सुनता नहीं है।

सुनता नहीं है मतलब बोलता भीनहीं है। गूंगा है, बहरा है। नहीं महाराज बहरा नहीं है-गूंगा भी नहीं है। महाराज यह बात नहीं सुनता है। देखो! बच्चों ने पकड़ लिया। अब क्या करें महाराज आप ही बताओ? महाराज क्या करें। बच्चे तो आपके ही हैं। आपने इसको इधर-उधर की बात सुना दी इसलिए अब आपकी बात नहीं सुनता।

इसीलिए यहाँ पर प्रतिभा-स्थली की स्थापना कराई गयी है। उसमें प्रत्येक प्रान्त से आपकी कन्याऐं/छात्राऐं शिक्षा ग्रहण कर रही है। आप सभी अच्छे-अच्छे मकानों में रहते हैं, वो सभी यहाँ रह रही हैं। विचार करो! वो सभी सोचतें हैं कि यहाँ रहने से जीवन सुधर जायेगा और जिसका जीवन बिगड़ जायेगा उसका जीवन भी इनके द्वारा सुधर जायेगा। इसी प्रकार का विद्यालय पहले जबलपुर फिर डोंगरगढ़ तथा ये रामटेक ऐसे तीन स्थानों पर हो गया। तीनों जगह मिलाकर लगभग हजार-बारहसौ बच्चियाँ शिक्षा ले रही है।

गृहस्थ में संतान की प्राप्ति धर्म-

प्रवाह हेतु आवश्यक है परन्तु अच्छी संतान का होना भी परम आवश्यक है। आप सभी का पुण्य समझो जो इस प्रकार के विद्यालयों की स्थापना हुयी। देश में हजारों की संख्या में शिक्षा के केन्द्र खुले है और खुल रहें हैं पर आज शिक्षा का फल क्या मिल रहा है? आप जानते है। सभी विदेशी शिक्षा के प्रचार में लगे है।

हवा बहती है तो ध्वजा का स्वर भी बदल जाता है। जैन धर्म भी एक ध्वजा लेकर चलता है। संतान संस्कार से रहित होगी तो ध्वजा का स्वर बदल देगी। देश से विदेश जाने की बात करेगी। शिक्षा में संस्कारों का होना अति आवश्यक है, तभी वे अपने लिए अपने माता-पिता के लिए अपने समाज एवं देश के लिए कुछ कर पायेंगे। सुख और शान्ति की स्थापना इसी शिक्षा पद्धति से होगी।

यहाँ सभी प्रान्तों से बच्चियाँ पढ़ती है फिर भी हिन्दी भाषा में पढ़ रहे है। चाहे महाराष्ट्र से हो चाहे कर्नाटक अथवा नागालैण्ड से हो। सभी एक ही राष्ट्र भाषा में पढ़ रही है। इन्हीं संस्कारों से बाद में जीवन को भी विकसता से समता की ओर ले जाने में सफल होगी इसी आशा और विश्वास के साथ समाज अर्जित धन में से कुछ निकालकर ये कार्य कर रही है।

कल नहीं परसों यहाँ कलशा की

स्थापना, हमारी तो स्थापना हो चुकी है। अब ये मत समझना की महाराज कहीं चलें न जायें अब तो हम अपनी स्थापना कर चुके हैं, अब कहीं नहीं जा सकते हैं।

धर्मध्यान के साथ सभी को यह योग मिले इसी भावना से इस वक्तव्य को विराम देता हूँ। सही बात तो आपको यह याद रखना है - "बच्चे सुनते नहीं" डीमापुर - मणिपुर वहाँ के बच्चे भी यहाँ पढ़ते हैं। ये सभी बच्चे अपने-अपने माता-पिता को प्रसन्न रखेंगे इसी भावना के साथ!

अहिंसा परमो धर्म की जय।

गुरु विचार -

- महाराज बन गये किन्तु बच्चों की तरह खिलौनों पर ही ध्यान रहता है यथा - कमण्डल कैसा, पिच्छी, पैन-कॉपी, डायरी आदि इन सभी के विकल्प से ऊपर उठना चाहिये फिर गाथा सुनायी - भिक्खं चरवस रण्णे. . . . .
- प्रकाश वैशाखिया ने कहा - हमारे सामने अथवा फोन पर किसी भी व्यक्ति से दान लिखवाने में बहुत जोर लगाना पड़ता है आप लोगों के सामने सहज में अधिक दान दे देता है। आ० श्री० - यही विदेशी संस्कृति का प्रभाव है।
- आज बच्चों पर पढ़ाई का इतना दबाव डाला जाता है तथा 12 महिने साग-सब्जी (Storage वाली) खाने से मानसिक रुग्णता की मात्रा बढ़ गयी है।

"चातुर्मास स्थापना समारोह"

16-7-17 "गुरुवर होले-होले आयेंगे" प्रातः 9:20

आज रविवार का ये पूर्वार्द्ध है। पूर्वार्द्ध समझते हो? अभी जनता आधी है। इसका ये अर्थ है। जब ये पूर्वार्द्ध पूर्ण हो जायेगा तो फिर उत्तरार्द्ध आयेगा। पूर्वार्द्ध वाले कहेंगे हमने तो जगह पकड़ ली, किन्तु आप तो अभी चले जायेंगे और वो लोग करके आ जायेंगे तथा यहाँ बैठ जायेंगे। फिर तो आपको... घबराओ नहीं जगह तो मिलेगी, बस थोड़ी खिसका-खिसकी करनी पड़ेगी।

गत साल को याद करो। भोपाल में संघ का चातुर्मास स्थापित हुआ था। वहाँ के लोग भी आये हैं तुलना करने को। ध्यान रखो वह मध्य प्रदेश था तो यह भी महाराष्ट्र है। धार्मिक अनुष्ठान किसी न किसी निमित्त को लेकर होते हैं। यहाँ के प्रबन्धकों एवं भारतवर्ष की जनता ने विद्या/शिक्षा का जो रूप देने का संकल्प किया है। कल कहा था अब संस्कार सहित शिक्षा की आवश्यकता है।

आज ऐसी शिक्षा की पूर्ति नहीं कर पा रहे हैं। कारण क्या है? सब लोग जानते हैं। कारण को जान, प्रमाद को दूर कर नींद को खोलकर इस ओर ध्यान देने की आवश्यकता है। केवल पैसों से ही काम नहीं होगा, भविष्य की ओर ध्यान देने पर ही सुधर सकते हो। ये भी

व्यवस्था की बात है। [माइक खराब होने पर] एक व्यक्ति बोलने वाला हो और सारे सुनने वाले हो तो बोलने वाले पर नहीं सुनने वालों पर जोर तो पड़ता ही है।

आप व्यवस्थित हो आयेंगे तो हम बोलेंगे अन्यथा अपने भावों को आप तक नहीं पहुँचा पायेंगे। भावों को आप तक पहुँचाने का भाव तो रहता है। अभी इनमें कह रहे थे। अब उस समय तो सुनना से होता है, जब हमारा नम्बर आयेगा तभी बोल पायेंगे। बोल रहें थे - थोड़ा ध्यान लगा - शुरुवर दौड़े - दौड़े आयेंगे। ताली भी बजा दी समर्थन में।

शुरुवर कभी भागते हुये आयेंगे क्या? यह कड़ी कैसे जुड़ गयी? एक - आध बार व्याख्या तो करना पड़ेगी हमने सोचा। दौड़े - दौड़े तो आप आते हैं। हम तो होले - होले ही आते हैं। बोली, सही है ना। सही है तो सही बोलना चाहिए। ये तो उड़ते - उड़ते भी आ जाते हैं। हमें भी जब कभी ऋद्धि मिलेगी तो उड़कर आ जायेंगे। उस समय ऋद्धि से काम होगा। सुनने वाला हो तो सुनाना सार्थक होता है।

पता लगा है आप लोग क्या-क्या तैयारी से आये हैं, हम तो तैयार ही बैठे हैं। आप सभी लोग उत्साह के साथ जिस उद्देश्य के साथ यह कार्यक्रम रखा गया है उसे सम्पन्न करें। इससे मस्ती

प्रभावना कर तन-मन-धन लगाकर एक पुरुषार्थ सभी को करना चाहिए।

अभी इतना ही, पूजन के लिए आप लोगों ने बुलाया था। जिस स्थान पर यह कार्य (प्रतिभास्थली) होना है अभी हमें भी वहाँ पर ले गये। उत्साह के साथ सब लोग एकत्र हुये थे। मध्याह्न में कार्यक्रम तो है ही लेकिन ये भावना नहीं होना चाहिए की वर्षा न हो।

वर्षा नहीं होगी तो किसान क्या करेगा? ये भावना रखो की हमारा भी और किसान का भी काम हो जाये। आप लोग तो एयरकंडीशनर में बैठे रहते हैं। सब काम मिलकर सम्पन्न करो। राग-द्वेष किये बिना देखने का अवसर प्राप्त करें।

अहिंसा परमो धर्म की जय हो

कुछ हटकर →

- मंत्रों का प्रयोग मुनिराज पर भी होता है। उल्टी में कौंच निकलते हैं। पेट में बाल जा नहीं सकता कौंच कैसे जायेगा। इन सब चक्करों से बचकर रहना चाहिए।

संस्मरण - बात टड़ा की है, सर्दी का समय, आ० श्री की वैयावृत्ति कर रहे थे। एक मुनिराज ने तेल कुछ ज्यादा ले लिया। बस कुछ दिन आ० श्री० ने वैयावृत्ति ही नहीं करवायी। अपव्यय से बहुत नाराज रहते हैं गुरुजी।

16-7-17 "लक्ष्मी चली सरस्वती के पास" मध्याह्न 4.41

हमने सुबह ही सोच लिया था कि ये याद रखना है। क्या याद रखना है? माइक देरी से मिल पायेगा अतः सबसे पहले जो पीछे खड़े होकर कार्यक्रम देख रहे हैं, सर्वप्रथम उन सभी के लिए हमारा आशीर्वाद पहुँचे। उन सभी को पृथक-पृथक आशीर्वाद और ये आगे बैठे हैं सभी को मिलाकर एक बार हमारा आशीर्वाद है। अब सुनिये - आपके यहाँ बोलियाँ हो गई, हमारी बोलियाँ गुप-चुप चलती है। हम सामने नहीं करते हिसाब में लाना चाहते हैं।

हमने पहले ही ये सब प्रतिभा स्थली के लिए तैयार कर रखा था। पचास शिक्षिकायें पहले संकल्प लें तब तक नहीं खोला जा सकता। आज आप लोगों के सामने खोल रहा हूँ क्यों कि आप बहुत बोल रहे हैं। यहाँ की प्रबन्ध समीति, युवकों की टीम तैयार हो गयी पर ये सोचना चाहिए करेगा कौन? कहाँ से आयेगी इतनी शिक्षिकायें? इतनी संख्या में अविवाहित रहकर व्रती जीवन धारण कर छात्राओं हेतु समर्पित होकर अपने आपको समर्पित कर दिया।

तालियाँ क्या? गड़गड़ाहट के साथ होना चाहिए। अभी लगभग 200-250 बहनें व्रती जीवन का संकल्प ले इस क्षेत्र में कार्य कर रही हैं। वर्तमान की दशा को देखकर यह संकल्प लिया। व्रती जीवन भी ऐसा कि हम किसी से कुछ भी

मांगेंगे नहीं बल्कि छोटी-छोटी बच्चियों को संस्कारित कर विशेष रूप से तैयार करेंगे। उन्हें पुण्य क्या? पाप क्या? जन्म-मरण क्या? क्या हेय है- क्या उपादेय है? तत्त्व क्या? जीवन कैसे जियें? आदि-आदि शिक्षा के साथ सीखाया जाता है।

जो बातें आपके भी दिमाग में भी नहीं आती उन्हें बतायी जाती है। हाँ सुन-सुनकर थोड़ी बहुत आ जाती है। यह मन्दिर ऐसा मन्दिर है जिसमें मूर्ति नहीं है, किन्तु ज्ञान का मन्दिर- सरस्वती मन्दिर है। बड़े-बड़े लोग जज- वकील आदि जिन्हें पढ़े-लिखे मानते हो वे भी आज की शिक्षा-पद्धति को लेकर चिन्तित हैं।

आज ही पढ़ा था- बच्चों को कौनसी शिक्षा कैसे मिलनी चाहिए? भोपाल में भी कहा-बहुत बार कहता ही रहता हूँ क्यों की बिना कहे जागृति नहीं आती। उन संपादिका महोदया का कहना था कि हम जो शिक्षण दे रहे हैं वह पर्याप्त नहीं है। सम्पादकीय लेख था- लर्निंग कर्व (Learning Curve) उसमें लिखा पढ़े लिखे होने के बाद भी मात्र परीक्षा, शिक्षण, अंकज्ञान ही पर्याप्त नहीं है।

अब पुनः लौटकर श्रम से अपने जीवन को उन्नत बनाना है। आज पढ़े-लिखे होकर श्रम से दूर जा रहे हैं। वो क्या करें?

उसे ऐसी ही शिक्षा दी गयी है। बस बाबू बना दो - क्लर्क बना दो।

आपके पास ऐसी क्षमता है, पचासों व्यक्ति को खड़ा कर सकते हो। आप बुरा नहीं मानना। मैं बुरा को भी बूरा समान मानता हूँ, क्यों की जब बुरा लगता है तो आँखो में पानी आता है और बूरा आता है तो मुंह में पानी आता है। इसलिए बुरा न मानियो। हम अपने इतिहास को भूल चुके हैं। माता - पिता भी उस इतिहास की जानकारी से वंचित है। अपने पन्नो को पलटा दिजिए।

हमारा अतित क्या था? उसमें लिखा श्रम - क्षम तो सीखाते ही नही नहीं। परम्परागत व्यापार अथवा उद्योग नहीं करते। पहले भी बताया, सुनकर आश्चर्य होता है मात्र 5-6 हजार रु. की चपडासी की नौकरी हेतु M.A, M.Com, Phd. इंजीनियर आदि आवेदन कर रहे हैं। लाखों की संख्या में मद है मात्र 600। यह दशा म० प्र० की ही नहीं सभी प्रान्तो की है।

महाराष्ट्र में रोजगार की कमी है फिर भी यहां श्रम करना सिखाया जाता है। बम्बई ऐसा शहर जहां कितने भी आदमी आ जाये तो भी - । सागर भी समा जाता है। एक कमरा होता है। उसमें भी एक के ऊपर एक तीन लोग सो जाते हैं। उसमें भी जो दिन में काम करता है रात में सोता है, रात में काम करता है उसी स्थान में दिन में सोता है।

ऐसे लोग काम करते हैं। श्रमिक लोग काम की तलाश करते-करते पहुँच जाते हैं।

उस लेख के लेखक/संवाददाता लिखते हैं- अब समय पलट गया है शिक्षा के साथ दायित्व भी सीखना चाहिए। पहले लोग दायित्व कुम्हार के बारे में पहले बताते थे। गुरु जी ने भी कहा था। राजस्थान में अभी भी है या नहीं? पता नहीं। पूछता हूँ तो ये लोग हव कहते हैं। राजस्थान में कितना भी बड़ा क्यों न हो उसे अपरिचित के यहाँ दुकान आदि में लगा देते हैं। हाँ "नौकर - जो कहे सो कर।"

जो कहते हैं वह करना पड़ता है। उधर से पिताजी पूछते रहते हैं - लड़का कैसा है? वह कहता है कुशल होता जा रहा है। आपकी दरकार नहीं - हम अपना घर बसायेंगे। दो मंजील नहीं २००मंजील बनायेंगे। आज माता-पिता की कमाई खा रहे हैं। गुरुजी ने कहा था - आप कमाई - बाप कमाई है। जो स्वयं कमाता है उसे धीरे-धीरे खर्च करता है, जैसे तेल एक साथ डालदिया किन्तु तील-तील करके जलता रहता है वह अपव्यय नहीं करता है।

भारत में सबसे बड़ी बिमारी अपव्यय करने की है। आप ही देखलो- बच्चों को देते चले जाते हैं। वह अच्छे संस्कारों को कैसे दिमाग में रख पायेगा? पहले के लोग यदि १००रु कमाते

थे तो 10 रु. धर्मार्थ कार्य में लगाते ही थे। आपको बोलने के उपरान्त भी आगे-पीछे देखते रहते हो। कर्ज थोड़े ही लिया है ऐसा सोच लेते हैं।

कर्ज नहीं यह कर्त्तव्य है। आय का क्षोत नहीं है उनके पास भी यह धन पहुँच जाता है। गरीबी है ही नहीं यदि कर्त्तव्य की ओर दृष्टि हो तो। इस इतिहास को पढ़ो - मांगने की जरूरत नहीं। यहीं पर भामाशाह की कमी नहीं रहेगी। बुलाने की भी जरूरत नहीं। हम करके दिखायेंगे। ऐसा युवाओं ने संकल्प लिया।

वे लोग कह रहे थे आपको हाथ पैर उठाना है महाराज! JBC (JCB) को तो उठा सकते हो पर हमारा हाथ नहीं उठा सकते हो। भगवान पर विश्वास है। आपके संस्कार बाप-दादा ने इस प्रकार के नहीं दिये। इन्होंने कहा हम 11 महिने में बनाकर बतायेंगे। पुष्टि के लिए बम्बई के आर्किटेक्ट को भी लेकर आये थे। मन हमारा - माया इनकी रहेगी। फिर जगह का भी प्रबन्ध हो गया।

लग तो रहा है, अभी भरोसा नहीं है। जब तक कार्य पुरा न हो तब तक पूर्ण मानना गलत हो सकता है। जैसे - जहाज भरा हुआ है। बेस किनारे/तट तक पहुँचने पर भी डूब जाता है। आप लोग एक कदम भी चले नहीं कि पुरा मान लेते हो।

बस दो-तीन घण्टे में जय-जयकार लगा लिये और चल दिये।

जिन्होंने सिरव लिया उन्हें अब रात-दिन एक करने की जरूरत होगी। पुरे के पुरे कार्य को समय में पुरा करना है। कम्पनी से काम लेना है। ऐसा काम कार्यकर्ताओं से कहना चाहता हूँ। क्यों की इनको (जनताको) तो सुनना है ही नहीं। यहाँ आप द्वारा दिये दान से ऐसे भवन तैयार हो जायेंगे जिसमें 200 से भी अधिक छात्रायें रह सकती हैं।

हम आपके इस धन को नहीं जीवित धन को देखना चाहते हैं। छात्रायें भी कहें - हम तो वहीं जाकर रहेंगे। हमसे आकर कहती हैं- आप ऐसा आशिर्वाद दे दो हम तो प्रतिभा स्थली में ही रहेंगे, आगे भी प्रतिभा स्थली में ही रहेंगे। अभी पढ़ रहे हैं फिर पढ़ायेंगे। माता-पिता कहते हैं- आप ही संभालो इनको- ये आपकी हैं।

अभी बच्चियों ने कहा- "ये रामटेक की प्रतिभास्थली है" एक बार नहीं तीन बार मैंने सुना। "प्रतिभास्थली तो हमारी एक ही है" तालियाँ कम बज रही हैं। रुक जाओ। अब छात्रायें क्या Science करायेंगी। वे छात्रायें चाहे रामटेक की हो या होशंगाबाद की हो या जबलपुर की हो अथवा अन्य किसी पुर की हो। और भी नाम आ रहे हैं। हव। हम तो आप हमारे पास

जीवित धन कितने भेजते हैं, यह देखते हैं। बुढ़ों को लेकर हम क्या करें?

हाँ वे अनुमोदना कर सकते हैं इस कार्य में। वे कह सकते हैं- आश्वासन दे सकते हैं कि हमारे बच्चों को रख लो। अब कहते हैं महाराज बच्चे पढ़े या न पढ़े बस संस्कारित हो जायें। बूढ़े हो रहे हैं बच्चे अब चिंता हो रही है। हमारे बाद क्या होगा इस पीढ़ी का? कुछ नहीं आप वहाँ से भी आकर देख सकते हो। (स्क्रीन) वर्षा कर सकते हो।

पालन-पोषण तो यहीं से होगा। ऐसी यह नींव तैयार हो रही है जिसकी परम्परा आगे तक चलेगी। आप लोगों ने केले का वृक्ष देखा होगा। केले का वृक्ष एक बार फल दे चुकने के बाद उसे निकाल दिया जाता है क्यों की वह दुबारा फल नहीं देता। किन्तु यह एक ऐसा वृक्ष है जो नारंगी (संतरा) का है। एक वर्ष में भी दो बार फल देगा साथ ही वर्षों तक यह वृक्ष फल देता रहता है।

प्रतिभा स्थली में भी ऐसे ही संस्कार दिये जा रहे हैं जो कहीं गायब होने वाले नहीं हैं। नींव पक्की होनी चाहिए। अब आगे से नहीं कहना कि हम रामटेक के हैं। हम तो :- प्रतिभास्थली के हैं। ताली बजाकर बता दो। आदर्शमती को भी बता देना। शिक्षिकाओं को भी बता देना। बच्चों को भी ऐसी शिक्षा न दें। अपने

प्रतिभास्थली में प्रवेश पाया है। हजारो बच्चे भी क्यों न हो जायें सिद्धान्त सभी के लिए एक ही रहता है। क्यों की प्रतिभा स्थली एक है।

लाइन लगी है, माता - पिताओं को भी विकल्प नहीं रहता। हमारी बच्ची सुरक्षित रहेगी। ले लो महाराज। छात्राओं को भी एवं उनके अभिभावकों को भी विश्वास हो जाता है। पूर्व भूमिका तैयार करने हेतु कुछ अविवाहित ब्रह्मचर्य व्रत लेकर अध्ययन कर रही हैं। पूर्व पीठिका नाम रखा इसका। लगभग २५-२८ की संख्या में med - Bed कर रही हैं। आर्यमती के सान्निध्य में इन्दौर में अभी भी काम कर रही हैं।

एक मिनिट भी नहीं मिलता उन्हें। चौबीसों घण्टे ऐसा कार्यक्रम से हैं। वहाँ जैन कॉलोनी की समाज की समाज सब प्रबन्ध कर रही हैं। वे लोग बहुत अच्छे से व्यवस्था कर रहे हैं ताकि कोई दूसरा न बुला ले जाय। पढ़कर आती हैं, समय पर भोजन - पानी की व्यवस्था हो जाती है। लोग कह रहे हैं हमारे लिए भी मिलें - हमारे लिए भी मिलें। "माला फेरो" बहुत कठिन है। मेरे हाथ में कुछ भी नहीं।

मैं तो मात्र निमित्त बना हूँ। गुरु महाराज ने कहा था - "संघ को गुरुकुल बनाना" बस उनकी आज्ञा का पालन कर रहा हूँ। कितना बन पाया है ये तो गुरुजी जानें। मैं तो अपना

कर्तव्य कर रहा हूँ।

पाँच बजकर सात मिनट हो गये हैं। कार्यक्रम तो हो गया। माला हील रहा है। लोगों मजबूती के साथ पहनना। कार्यकर्ताओं से कह रहा हूँ। रागिनाथ भगवान हैं। आप लोगों ने अपनी लक्ष्मी दी है उस लक्ष्मी को भी शान्ति मिलेगी। यहाँ अशान्ति की कोई बात ही नहीं। किसी प्रकार की GST की आवश्यकता नहीं है। हाँ! यदि GST चाहते हैं तो वह अलग प्रकार की है।

डोंगरगढ़ में भी कहा था G का मतलब गोम्मटसार, S का मतलब समयसार और T का मतलब तत्त्वार्थ सूत्र। इन तीनों सूत्रों के माध्यम से अपने आपको कसेगा - बांधेगा - व्यवस्थित करेगा तो अवश्य शान्ति मिलेगी। लक्ष्मी को देख लेना, उसे शान्ति के साथ सरस्वती की सेवा करना है। ये देख लो। आजकल हमने उपदेश की मात्रा कम कर दी है। सुनने वाले सुनते हैं और पल्ला झाड़-झड़ कर चले जाते हैं। फिर भी सुना दिया। अन्त में गुरुजी को याद करते हुये -

तेरही ज्ञान सागर गुरु - तारो मुझे तदबीत।
करुणाकर करुणा करो - कर से दो आशीष॥

अहिंसा परमो धर्म की जय! नूँ

17-7-17 "आनन्द भीतर में है" प्रातः 9.20

अभी भूजन चल रही थी। किसी ने कहा आनंद खड़े में नहीं बैठने पर मिलता है। मेरा ध्यान मेरे बाजु में रखी दोनो मूर्ति पर गया [एक खड्गासन है और एक पद्मासन है] एक प्रभु बैठे हैं और एक खड़े हैं। दोनों के मुख की ओर देखें - आनंद की लहर बह रही है।

भीतर की ओर देखोगे आनन्द की लहर देखोगे एवं बाहर की ओर देखने में वह आनंद नहीं आयेगा। दोनों भगवान नासा दृष्टि हैं, ऐसी आपकी दृष्टि बन जाये, ऐसी भगवान से प्रार्थना है।

अहिंसा परमो धर्म की जय।

प्रज्ञापराध →

"षट्खण्डागम के साथ-साथ यह शब्द "चरक संहिता" आयुर्वेद ग्रन्थ में भी पृष्ठ ४३१ पर देखने को मिला। उसमें तीन कारणों में सभी को समाहित करते हुए कहा - धी (बुद्धि), धृति (धैर्य) और स्मृति (स्मरण) इन तीनों के दुरुपयोग से प्रज्ञापराध होता है। प्रमाद में आना सबसे बड़ा प्रज्ञापराध है। बुद्धि का गलत प्रयोग जो आज सबसे अधिक हो रहा है। धैर्य नहीं रखने से - चंचल बाबा मत बनों तथा स्मरण ही नहीं की मेरा क्या कर्त्तव्य है / दायित्व है तो क्या करेंगे / स्वयं का भी और दूसरों का भी अहित करेंगे इस प्रज्ञापराध के द्वारा।"

18-7-17 "विषयों की ईमली से बचें" प्रात:9:20

प्रसंग है भोजन के समय का। माँ ने भोजन तैयार कर लिया है। लड़का अभी आ नहीं रहा है। वह आवाज दे रही है - वह कहता है आ रहा हूँ। आने से डर भी रहा है। माँ ने कहा- विलम्ब क्यों हो रहा है। माँ को तो ज्ञात है ही गड़बड़ी क्या है? फिर भी आवाज दे रही है। भोजन परोस देती है - वह प्रारम्भ कर देता है किन्तु धीरे-धीरे खाने लगता है। खाने में कुछ असुविधा करने लगा/अब कहता माँ खाया नहीं जा रहा है।

माँ भी विलम्ब क्यों कर रहे हो- चबा नहीं रहे हो? बच्चे समझ गये होंगे। चबाना नहीं हो पा रहा है। दांत तो हैं किन्तु --- समझ में आ गया। चबा तो तब सकते हैं जब दाँत गुढिलाये गये न हो। ईमली खाने से, वह भी छिली है साथ नहीं साबुत ऐसे ही खाने से दांतों की यह दशा हो गयी। अब दलिया में दूध मिलाकर घुटक लो।

बच्चों को कह रहा हूँ तुम खा नहीं पाओगे, खायेगा तो फिर घर का नहीं खा पायेगा। मां ने कहा - तुम्हें लड्डू मिलेगा परन्तु शर्त हमारी ये है कि अब ईमली नहीं खाना। इस ढंग से सीधे ईमली नहीं खाना। हाँ! मिलाकर दे दे तो अलग बात है। ये नियमों तो हम लड्डू दे देंगे। दोहे बच्चे ने कहा- अब नहीं खायेंगे। उसकी दोनों जेब की तरफ देखा बिल्कुल उमाउस भरी हुई अब वह संकोच में पड़ गया। धीरे-धीरे बाहर

बाहर निकालकर रखा, ढेर लग गया।

माँ कहती है बिमार पड़ जाओगे इसे नहीं खाना- फिर भी लोभ छोड़ नहीं पा रहा है। होना तो पड़ेगा। माँ छुड़वाकर रहती है। इसी प्रकार जिनवाणी माँ भी हमें बताती है बस वह छुड़वा नहीं सकती है। माँ सुना भी सकती है और छुड़वा भी सकती है। परन्तु माँ के हाथ में बच्चें हो तो। आज के बच्चे माता-पिता की परिधी से दूर हो चुके हैं।

आपको संस्कारित करेंगे होंगे तब जाकर बुरी आदत से अपने भविष्य को उज्जवल कर सकते हैं। इस प्रकार माँ ने नहीं खायेंगे ऐसा नियम दिलाया। नहीं खाओगे तो समय पर खाने के लिए भी देना होगा। माता-पिता को चाहिए वह बच्चों को समय दे। समय पर सेवन भी कराना होगा। आज यह नहीं हो रहा है।

हमें पुण्य से हमारे गुरु, जिनवाणी माँ ने ऐसा शिक्षण- ऐसा सम्बोधन मिला। उनकी वाणी में दम है, ओज है, प्रभावक है। उनकी बात मंत्र से कम नहीं- सुनने वाले को मंत्र मुग्ध कर देती है। भव्य जीव इस वाणी को सुनकर अपने जीवन को उज्जवल बना सकते हैं। बच्चों को भी इसी माध्यम से पुण्य मिलेगा। आप तो आते हो और चले जाते

हो परन्तु बच्चों को तो यहीं रहना है। सुनकर वे भी बदल सकते हैं।

अभी 8-10 वर्ष (साल) तक संस्कार पायेंगे फिर अन्य लोगों को भी दिशा बोध देने में सक्षम होंगे। आप लोगों की बुरी आदतें - बुरे संस्कार छुड़वा पायेंगे। माता-पिता ने भी ये सभी बच्चे सार्थक हो इसीलिए इस ओर भेजा है। उनके सपनों को साकार करेंगे। ये उन पर एवं स्वयं पर उपकार होगा।

"परस्परोग्रहजीवानाम्" सूत्र तो रखा है। किन्तु वास्तव में इसके माध्यम से जीवन में उपकार कर सकते हैं। यह सब निमित्त है- व्यवहार है फिर भी इसी के द्वारा अपने आपके ऊपर भी उपकार कर रहे हैं। स्वयं को समझना है। दूसरे के निमित्त से होता है - वे जो कुछ कर रहे हैं अतः धन्यवाद के पात्र हैं।

अहिंसा परमो धर्म की जय।

असमीक्ष्याधिकरण →

बात डोंगरगढ़ की है। गर्मी का समय था। कक्षा लगने वाली थी। आ० श्री ने कुछ समय पूर्व कहा इधर धूप आ जायेगी। एक-दो महाराज बोले नहीं ये तो अभी चली जायेगी। कक्षा प्रारम्भ हो गयी- धूप नहीं आयी। कक्षा के मध्य में कहा देखो! ये होता है असमीक्ष्याधिकरण। दोष लगेगा आपको पहले से जाँच-पड़ताल करलो फिर करो। जल्दबाजी नहीं करना चाहिए।

19-7-17 "प्रभु का राग- बुझायेगा आग" प्रातः 9.20

एक व्यक्ति अपने ही हाथो से एक पात्र में पानी भरकर के सिघड़ी के ऊपर रख था। गरम पानी उसे इष्ट था। जब वह पानी गरम हो गया, उसे ज्ञात हो गया कि इससे मेरा काम हो जायेगा। जिस प्रकार जिन हाथो से ऊपर रखा था उन्हीं हाथो से नीचे उतारना है, उसे ये याद नहीं रहा की पात्र गरम होगा। आप सुन रहे हैं। जी।

जिन हाथो से सिघड़ी पर रखा उस समय हाथ भी ठण्डे थे और पात्र भी ठण्डा। अब जिस समय उतारना है हाथ तो ठण्डे हैं पर पात्र/पानी गरम है (भूल गया और उतारने लग गया। पात्र जो था उसकी गरमी एवं वाष्प की गरमी के कारण उसने छोड़ दिया। नीचे गिर गया? नहीं नीचे नहीं गिरा सिघड़ी पर ही गिरा दिया। अब जो दहकते हुये लाल सुरख कोयले थे जिन्होंने हाथ को भी जला दिया पानी के माध्यम से, तो कोयले गरम होने चाहिए। ऐसा नहीं हुआ। जो कोयले लाल थे वे काले हो गये।

अपने हाथ जल गये थे पर उन कोयलों को देख विस्मृत हो गया। ये क्या मामला है? गरम कोयले पानी उबल रहा है, उस पानी से अग्नि कैसे बुझ गयी? बल्कि और जलना चाहिए। नहीं। जल के पास जलाने की क्षमता है, गरम हो तो किन्तु अग्नि को जलायेगा नहीं. अग्नि को तो बुझायेगा ही। पक्का हो

गया ना?

इसी प्रकार कोई भी व्यक्ति हो अथवा पौ व्यक्ति समझ में आ गया। शास्त्र की बात एवं गुरुओं की बात समझना चाहिए। रागपूर्वक यदि पंचेन्द्रियों का सेवन करेंगे वो तो जलाने का ही काम करेंगे जब भी रागपूर्वक भगवान की भक्ति करेंगे वह बुझाने का काम करेगी। ताली क्यों? तो वह राग को जलायेगा अथवा राग को बुझायेगा।

भगवान की भक्ति से बुझायेगा तथा पंचेन्द्रिय के सेवन से द्विगुणित करेगा (बढ़ायेगा)। आप क्या करना चाहते हैं? राग को छोड़ना चाहते हैं भगवान से राग कर लो। वह राग बुझाने के ही काम आयेगा। समय की कटौती है। आपलोगों के पास भी अधिक समय नहीं है और हमारे पास तो समय रहता ही नहीं है। हमने आपलोगों को दे दिया जिससे आपलोगों के हाथ न जलें और उस राग से पंचेन्द्रिय के विषयों को बुझाने का कर्म करें। इस हेतु वितराग देव-शास्त्र-गुरु का ही सहारा लेना होगा जिसके द्वारा आप अपना कल्याण कर सकते हैं।

अहिंसा परमो धर्म की जय।

विशेष-

- ऐसी क्रान्ति किस काम की जिसमें हमारी शान्ति भंग हो।
- मिथ्यात्व एवं अज्ञान में अन्तर है।
- उपादान के अनुसार ही कार्य हो - एकान्त से ऐसा नियम नहीं है।

20-7-17 "कैसे उतरे पपड़ी परिग्रह की" प्रात:9.20

कोई व्यक्ति जल्दी में था। भाग रहा था और ज्यादा वेग से भाग गया और नीचे देख नहीं पाया और ठोकर लग गयी फिर क्या हुआ? गिर गया। तो ऐसा गिरा कि अब अपने आप उठने की हिम्मत नहीं कर पा रहा है। दूसरे ने सहारा देकर उठाया। उसके कंधों पर हाथ रखकर किसी प्रकार से उठा। अब घुटनों पर घाव हो गया, इलाज चला। पूरा ठिक नहीं हुआ। धीरे-धीरे घाव पूर गया।

अभी चमड़ी नयी-नयी है। उसे पपड़ी बोलते हैं। वह पपड़ी जम गयी धीरे-धीरे वह भी निकलने को है। अपने आप निकल रही है। ऐसा करें, उसे अपने से निकाल दिया जाय। नहीं-रक्त आ जायेगा। हाँ उस खाल का एक प्रकार से हड्डी-मॉस से एकाकार है। वह तो अपने आप ही निकलेगी आप नहीं निकाल सकते हो। यदि गलती से थोड़ा सा धक्का भी लग जाता है तो आँखो में पानी आ जाता है। जैसे-जान निकल रही हो।

सुन रहे हो कि नहीं। जी आपजी सुन रहे हैं। (बच्चे) आप लोग कम समय में चाहते हैं, इसलिए हम और कम कर रहे हैं। धक्का लग गया, तो चिकित्सा जो कि थी वह खराब अब पुनः घोवदार बन गया। ये उदाहरण इसलिए दिया जा रहा है, आप

लोग परिग्रह को पीछे लगा रखे हो यदि थोड़ा सा खिसक जाता है तो 12 बजे भी तारे दिखने लग जाते हैं, क्या होगा?

इतने दिन मेहनत करके कमाया है। अतः कैसे छोड़ दें। इसीलिए आचार्यों ने कहा है कि परिग्रह छोड़ो। हाँ, महाराज इतना आसान नहीं है। आपने तो कभी परिग्रह रखा नहीं, जो छोड़ते। कुछ लोग पूछते हैं महाराज! आपने तो परिग्रह कभी रखा नहीं फिर ये कैसे ज्ञात हो गया? मैं कहता हूँ- आप लोगों की शक्ल देखकर ज्ञात हो गया कि हम ही अच्छे हैं।

चिपका कर पुनः चिपकाना तो और कठिन। भागने वाले भागो हम तो चलकर ही आयेंगे। आप यहाँ आकर भी नहीं पहुँच पायेंगे। इस बात के लिए आप भी स्वतन्त्र हैं, हम भी स्वतन्त्र हैं। मानना है तो मानो ये आपकी मर्जी। जल्दी न करीये। घबराना भी नहीं। धक्का नहीं लगना चाहिए। दूसरे के पदार्थ हैं दूर से देखियो। हम तो पहले चले जाते हैं कुछ ऐसा सोचते हैं।

उत्तम कार्य है पहले बाद से मतलब नहीं। जब जागे - तभी सवेरा। धीरे-धीरे परिग्रह/मोह की चिपकन को ढीला/कम करते जाइये। ताकि वह चमड़ी पुनः चिप जायेगी, पता भी नहीं कि

यहाँ पर कोई था।

घाव बहुत दिन के हैं, भरने में समय तो लगेगा फिर भी मरहम-पट्टी लगाकर ठिक कर लो। आज तक पूजन वाले ही शामिल अब तो अभिषेक वाले भी शामिल होने लगे हैं। धारा करने वाले हैं। उन्हीं के माध्यम से शान्तिधारा होगी। हमें भी उस धारा में से कुछ मिलेगा।

कृत-कारित-अनुमोदना का प्रभाव तो देखने में मिलेगा। सब अपनी-अपनी दुकान को आगे बढ़ाने में तत्पर रहते हैं। हमारे नाम से कर रहे हो, ध्यान रखना। नाम तो हमारा दिया हुआ है। धार्मिक भाव इस निमित्त से बनते है तो हमें कोई बाधा नहीं है। सुरक्षित कदम निकाल लेना चाहिए। घाव को याद रखीयो। ये मुख्य बिंदु है-उदाहरण है इसको ध्यान रखने वाला ही अपने घाव को साफ कर सकेगा।

अहिंसा परमो धर्म की जय।

Notes -

- मुनिराज (साधु) को अष्टपाहुड में किसी अपेक्षा से दर्शन, तीर्थ, सिद्ध, अरिहन्त, आचार्य, उपाध्याय कहा। अतः हमें अपनी योग्यता पहचानने की आवश्यकता है। दृष्टि सदैव आत्म केन्द्रित रहना परम आवश्यक है।

३१-७-१७ "बचें कषाय की कणिका से" प्रातः ९.३०

कल एक उदाहरण प्रस्तुत किया था उसी प्रकार उसी विषय को प्रकाशान्तर से लेकर एक दूसरा उदाहरण दिया है। रुई के ढेर है, आपने उसे साफ सुथरा बनाया। पहाड़ की भांति लगी है किन्तु कब- कैसे असावधानी हो गयी पता नहीं किसने आग लगा दी और देखते ही देखते एक सैकण्ड में वह रुई का ढेर साफ हो गया। उसी समय हवा भी चलने लगी सो वह राख भी उड़ गयी।

करोड़ों की कीमत वाली वह रुई कहाँ चली गयी पता ही नहीं चला। यह असावधानी है वह किसी विज्ञ (विद्वान) की नहीं अज्ञानी की ही असावधानी कहलायेगी। विद्वान ऐसा नहीं करेगा। एक छोटी सी कणिका भी क्षण मात्र में उस ढेर को साफ कर सकती है। इसी तरह कषाय की छोटी सी कणिका भी क्या नहीं कर सकती। आप सोचें मैं तो सुबह से शाम तक भगवान का ही नाम लेता हूँ, छोटी सी कषाय से कुछ नहीं होगा, ऐसा मानना गलत होगा।

इसी प्रकार का उदाहरण कल दिया था। कल व्रण (घाव) के बारे में बताया। घाव हो गया चिकित्सा कर रहे हैं, थोड़ी सी हाथ लग गयी सुखी पपड़ी उखड़ गयी। पुनः घाव पूर्ववत् तैयार हो गया, उसी

प्रकार कषाय का स्वरूप है।

बहुत कषाय की आवश्यकता नहीं। वह आपको कहां ले जायेगी कोई पता नहीं। ये उदाहरण देकर गुरुदेव ने हम लोगों को समझाने का प्रयास किया है और सावधानी की ओर ले जाने का पुरुषार्थ है। हम चाहे वे आकर बचा दें ऐसा नहीं। भगवान - गुरुदेव सब जान रहे हैं। आगम अनुसार हमें सब बता देते हैं अब हमारी सावधानी हमें रखना होगा।

जैसे अग्नि से सावधानी, व्रण ठिक नहीं होता तब तक सावधानी की आवश्यकता है, उसी तरह कषाय से सावधान रहना जरूरी है। कषाय नहीं करते - ऐसा नहीं कह रहा - सावधान कितना, ~~रहते~~ है यह जरूरी है। कौन कितनी कषाय करता है। बाद में पश्चाताप करते हैं।

दुनिया की यह रीत है काम के बाद पश्चाताप करना जब की ज्ञानी (मुमुक्षु) की रीत है काम के पूर्व सावधानी रखना, पश्चाताप की आवश्यकता नहीं। करने के उपरान्त भी करता चला जाता है। उसके बारे में कुछ कहना ही नहीं है। आप लोग उस श्रेणी में तो नहीं हैं फिर भी जिस श्रेणी में हैं उसे कम करेंगे तो अवश्य ही भविष्य में नजदीक (पास) पहुँच सकते हैं, जहां महावीर भगवान

पहुँच गये हैं।

इसका अर्थ ये हो गया हमारी ये ध्वनि बिना माइक के भी दूर तक पहुँच जाती है। (लाइट जाने पर) इस प्रकार सावधान हो जाओगे तो अनंत कालीन कषाय को तोड़ सकते हो। साधन सामग्री व्यवस्था करने वाले उपलब्ध कराते हैं किन्तु, पराश्रित होने के कारण ये होता है। आप अपने मन को, कानों को उपयोग में लाकर खड़ा कर सकते हो। अन्य इन्द्रियों के व्यापार को रोक सकते हैं।

इस प्रकार छोटी ध्वनि से भी बड़े सार की बात समझ में आ सकती है, यह दूसरे के सामने रख सकते हैं। पहले के लोग इस प्रकार स्पीकर के माध्यम से नहीं अपितु आवाज पहुंचने का प्रयास करते थे आज ध्वनि यंत्र को कानों में लगाने के बाद भी कर्ण नहीं पड़ता। इस निद्रा से बचाने वाला कोई नहीं। निरन्तर पुरुषार्थ अपेक्षित है।

ध्वनि में क्या अर्थ है, क्या प्रयोजन है, क्या भाव है ये गुरुदेव नहीं आपको पढ़ना है। जो व्यक्ति इसके आशय को पढ़ लेता है, अपने जीवन में लाता है उसकी सफलता हो जाती है। इतना ही पर्याप्त समझता हूं कि यह कर्मों के कारण जो

कुछ भी उपलब्ध है वह भी कम नहीं है। आगे बहुत सामग्री होने के उपरान्त भी कानों की क्षमता कम होगी फिर ये लाउडस्पीकर भी काम के नहीं। कानों में आकर भी आवाज पकड़ने की क्षमता नहीं तो क्या समझा सकेंगे।

सूरज ढल चुका है- अंधेरे के पहले अपने घर में आ जाओ। अन्यथा कितनी भी लाइट क्यों न जला लो उसमें आँखों की रोशनी भी कोई काम की नहीं रह पायेगी। अतः कषाय की कणिका में असावधान न रहो। सावधानी से उस कणिका को भी साफ करने का अवश्य ही पुरुषार्थ करेंगे।

अहिंसा परमो धर्म की जय। नँ

आचार्य श्री के हाइकू

1. जुड़ो ना जोड़ो, जोड़ा छोड़ो जोड़ो तो, बेजोड़ जोड़ो।
2. संदेह होगा, देह है तो देहाली, विदेह हो जा।
3. ज्ञान प्राण है, संयत हो तो त्राण, अन्यथा श्वान।
4. छोटी दुनिया, काया में सुख-दुःख, मोक्ष नरक।
5. द्वेष से बचो, लवण दूर रहे, दूध ना फटे।
6. किसी वेग में, अपढ़ हो या पढ़े, सब लुढ़के।
7. तेरी दो आँखे, तेरी ओर हजार, सतर्क हो जा।
8. चाँद को देखूँ, परिवार से घिरा, सूर्य सन्त हैं।
9. मैं निर्दोषी हूँ, प्रभु ने देखा वैसा, किया करता।
10. आज्ञा का देना, आज्ञा पालन से भी, कठिनतम।
11. तीर्थंकर क्यों, आदेश नहीं देते, सोचा तुम्हें।
12. साधु वृक्ष हैं, छाया फल प्रदाता, और धूप खाता।
13. गुणालय में, एकाध दोष कभी, तिल सा लगे।
14. पक्ष व्यामोह, लोह पुरुष को भी, लट्टू घूमता।
15. स्वर्ग पथ लो, पाप को पीठ दे दो, वृत्ति सुधी हो।
16. भूख मिटी है, बहुत भूख लगी, पर्याप्त रहें।
17. टिमटिमाते, दीपक को भी देख, रात भी जाती।
18. परिचित भी, अपरिचित लगे, स्वस्थ ध्यान में। बस हो गया।
19. प्रभु ने मुझे, जाना माना परन्तु, अपनाया ना।
20. कलि न खिली, अंगुली से समझो, योग्यता क्या है?
21. आँखे लाल हैं, मन अन्दर दोषी, दोनों में कौन?
22. झट सिद्धि में, अनिष्ट से बचना, दुष्टता नहीं।
23. सामायिक में, लुढ़क न करने की, स्थिति होती है।

24. मद का तेल, जल चुका बुझा सो, विस्मय द्वीप।
25. ध्वजा वायु से, लहराता पैं वायु, आगे न आती।
26. ज्ञेय चिपके, ज्ञान चिपकता तो, स्मृति हो आती।
27. तैराक बनूँ, बनूँ गोताखोर सो, अपूर्व दिखे।
28. वर्षा के बाद, कड़ी मिट्टी सी माँ, दोषी पुत्र पै।
29. कछुए सम, इन्द्रिय संयम से, आत्म रक्षा हो।
30. डूबना ध्यान, तैरना स्वाध्याय है, अब तो डूबो।
31. गुरु मार्ग में, पीठ की हवा सम, हमें चलाते।
32. संघर्ष में भी, चंदन सम सदा, सुगन्ध बाँटें।
33. प्रदर्शन तो, उथला है दर्शन, गहराता है।
34. योग साधन है, उपयोग शुद्धि, साध्य सिद्ध हो।
35. योग प्रयोग, साधन है साध्य तो, सदुपयोग।
36. धर्म का फल, बाद में न अभी है, पाप का क्षय।
37. पर पीड़ा से, अपनी करुणा सो, सक्रिय होती।
38. सीना तो तानो, पसीना तो बहाओ, सही दिशा में।
39. प्रश्नों से परे, अनुत्तर है उन्हें, मेरा नमन।
40. फूल खिला पैं, गंध नहीं आ रही, सो कागज का।
41. सरोवर का, अन्तरंग छुपा क्यों? तरंग वश।
42. मान शत्रु है, कछुआ बन बचूँ, स्वरक्षा से।
43. हाइकु कृति, लिपाई सी अर्थ को, ऊँचा उठाती।
44. अधूरा पूरा, सत्य हो सकता है, बहुत नहीं।
45. भूख लगी है, स्वाद लेना छोड़ दें, भर लें पेट।
46. सोनी कहा था, जब बोलूँ अपना, स्वाद छूटता।

47. गुरु ने मुझे, प्रगट कर दिया, दिया है दिया।
48. नीर नहीं तो, समीर सही प्यास, कुछ तो बुझे।
49. निजी प्रकाश, किसी प्रकाशन में, क्या कभी दिखा?
50. जितना चाहो, जो चाहो जब चाहो, क्या कभी मिला?
51. वैज्ञानिक तो, पहले बनो फिर, ज्ञानिक बनो।
52. टिमटिमाते, दीपक को भी पीठ, दिखाती रात।
53. रोगी की नहीं, रोग की चिकित्सा हो, अन्यथा भोगो।
54. देखा ध्यान में, कौलाहल मन का, नींद ले रहा।
55. मिट्टी तो खोदो, पानी को खोजो नहीं, पानी फूटेगा।
56. सुनना हो तो, नगाड़े के साथ में, बाँसुरी सुनो।
57. मलाई कहाँ, अशान्त दूध में सो, प्रशान्त बनो।
58. कब पता न, मरना निश्चित है, फिर डर क्यों?
59. भरा घड़ा भी, खाली लगे जल में, हवा से बचो।
60. नौ मास उल्टा, लटका आज तप (रहा पेट में), कष्टकर क्यों?
61. मोक्षमार्ग तो, भीतर अधिक है, बाहर कम।
62. गूंगा गुड़ का, स्वाद क्या नहीं लेता? वक्ता क्यों बनूं?
63. कमल खिले, दिन के गृहण में, करबद्ध हो।
64. पैर छूते, सीधे मोती के भी पैं, उल्टे पड़ते।
65. भूत सपना, वर्तमान अपना, भावी कल्पना।
66. काले मेघ भी, नीचे तपी धरा को, देख रो पड़े।
67. घी दूध पुनः, बनें तो मुक्त पुनः, हम से त्यागी।
68. उससे डरो, जो तुम्हारे क्रोध को, पीते ही जाते।
69. शून्य को देखो, वैराग्य बढ़े-बढ़े, नैत्र की ज्योति।

70. पौधे न रोपें, छाया और चाहते, निकम्मे से हो।
71. उनसे मत, डरो जिन्हें देख के, पारा न चढ़े।
72. क्या सोच रहे, क्या सोच जो कुछ है, कर्म के धर्म।
73. तुम्बी तैरती, औरों को भी तारती, हेंद वाली क्या?
74. आलोचन से, लोचन खुलते हैं, सो स्वागत है।
75. दुग्ध पान में, शिरा नीला सा जीव, तनु प्रमाण।
76. स्वानुभव की, समीक्षा पर करें, तो आंखें मुने।
77. स्वानुभव की, प्रतिक्षा स्व करें तो, कान देखता।
78. मूल बोध में, बड़ की जटाएँ सी, व्याख्याएँ न हो।
79. मन अपना, अपने विषय में, क्यों न सोचता।
80. स्थान समय, दिशा आसन इन्हें, भूलते ध्यानी।
81. चिन्तन न हो, तो कुछ चिन्ता नहीं, चित्त स्वरूपी।
82. एक आँख भी, काम में आती पर, एक परेख क्या?
83. नय - नय हैं, विनय पुरोधा (प्रमुख) है, मोक्षमार्ग में।
84. सम्मुख जा के, दर्पण देखता तो (दर्पण में देखा पैं), मैं नहीं दिखा।
85. पाषाण भीगे, वर्षा में हमारी भी, यही दशा है।
86. आपे में न हो (नहीं), तभी तो अस्वस्थ हो, अबतो आओ।
87. दीप अनेक, प्रकाश में प्रकाश, एक मेक सा।
88. होगा चाँद में, दाग चाँदनी में ना, ताप मिटा लो।
89. प्रतिशोध में, ज्ञानी भी अंधा होता, शोध तो दूर।
90. निद्रा वासना, दो बहनें हैं जिन्हें, लज्जा न छूती।
91. जिस बोध में, लोकालोक तैरते, उसे नमन।
92. उजाले में हैं, उजाला करते हैं, गुरु को वंदू।

93. उन्हें जिनके, तन-मन नग्न हैं, मेरा नमन।
94. शिव पथ के, कथन वचन भी, शिरोधार्य हो।
95. व्यंग का संग, सकलांग से नहीं, विकलांग से।
96. कुछ न चाहूँ, आप से आप करें, बस! सद्ध्यान।
97. बढ़ तृषा में, शीर्षासन लगाता, बेंत चुकता।
98. आशा जीतना, शेष्ठ निराशा से तो, सादगी (सदाशा) भरी।
99 समानान्तर! दो रेखाओं में मैत्री, पल सकती।
100. प्रायः अपढ़, दीन हो पढ़े ज्ञानी, ज्ञानी विरले।
101. कच्चा घड़ा है, काम में न लो बिना, अग्नि परीक्षा।
2. पक्षी कभी भी, दूसरों के नीड़ों में, घुसते नहीं।
3. तरंग देखूँ, भंगुरता दिखती, ज्यों का त्यों तोय।
4. बिना प्रमाद, श्वसन क्रिया सम, पथ में चलूँ।
5. दृढ़ ध्यान में, ज्ञेय का स्पन्दन भी, बाधक नहीं।
6. शब्द पंगु है, जवाब न देना भी, लाजवाब है।
7. पराश्रय से, मान बौना हो कभी, हेन्द्रिय लाभ भी।
8. वक्ता व श्रोता, बने बिना गूँगा सा, निजी स्वाद लें।
9. नियन्त्रण हो, निज पे दीप बुझे, निजी श्वांस से।
10. अपना ज्ञान, शुद्ध ज्ञान न जैसे, वाष्प पानी न।
11. औरों को नहीं, प्रभु को देखूँ तभी, मुस्कान बाटूँ।
12. अपमान को, सहता आ रहा है, मान के लिए।
13. मान चाहूँ ना, ये अपमान अभी, सहा न जाता।
14. यशोगन्ध की, प्यासी नासा स्वयं ही, निर्गन्धा हैं री।
15. दमन चर्म, चक्षु का हो, नमन, ज्ञान चक्षु को।

116. गाय बताती, तप्त लौह पिण्ड को, मुख में ले सत्।
17. कुछ स्मृतियाँ, आग उगलती तो, कुछ सुधा सी।
18. मरघट में, घूँघट का क्या काम? घट कहाँ है?
19. पुण्य फूला है, पापों का पतझड़, फल अनन्त।
20. गन्ध सुहाती, निम्ब पुष्पों की, स्वाद उल्टी कराता।
21. युवा कपोल, कपोल कल्पित हैं, वृद्ध बोध में।
22. लौहा सोना हो, पारस से परन्तु, जंग लगा क्या?
23. गुणी का पक्ष, लौना ही विपक्ष पे, वज्रपात है।
24. बिना डॉट के, शिष्य और शीशी का, भविष्य ही क्या?
25. प्रकाश में ना..., प्रकाश को पढ़ो तो, भूल ज्ञात हो।
26. देख सामने, प्रभु के दर्शन हैं, भूत को भूल...।
27. दीन बना है, व्यर्थ में बाहर आ, अर्थ है स्वयं।
28. काल की दूरी, क्षेत्र की दूरी से और अनिवार्य है।
29. दर्प को छोड़, दर्पण देखता तो, अच्छा लगता।
30. घनी निशा में, माया भयभीत हो, आस्था आस्था है।
31. बिन्दु जा मिला, सभी मित्रों से जहाँ, सिन्धु वही है।
32. आगे बनूँगा, अभी प्रभु-पदों में, बैठ तो जाऊँ।
33. रस-रक्षक, छिलका सन्तरे का, अस्तित्व ही क्या?
34. होठ भले हो, दर्पण मिले साफ, खुद को देखूँ।
35. पराग-पीता, भ्रमर फूला फूल, आतिथ्य प्रेमी।
36. बोधाकाश में, आकाश तारा सम, प्रकाशित हो।
37. पराकर्षण, स्वभाव सा लगता, अज्ञानवश।
38. भ्रमर से हो, फूल सुखी हो जाता, पात्र योग्य से।

139. तारा दिखती, उस आभा में कभी, कुछ दिखी क्या?
40. सुधाकर की, लवणाकर से क्यों? मैत्री क्या राज?
41. बाहर नहीं, वसन्त बहार तो, सन्त! अन्दर...
42. तारन दूती, लगातार चिर से, चैतन्य-धारा।
43. सुई निश्चय, ऐंची व्यवहार है, दर्जी-प्रमाण।
44. चलो बढ़ो औ, कूदो उछलो यहीं, धुआँधार है।
45. बिना चर्वण, रस का रसना का, मूल्य ही क्या है?
46. खाली बनजा, घट डूबता भला... खाली तैरता।
47. साष्टांग सम्यक्, ज्ञान चढ़ा शीश सा! कहाँ दिखता?
48. निजी पराये, वत्सों को दुग्धपान, कराती गौ-माँ।
49. छोटा सा हूँ मैं, छोर छूती सी तृष्णा, छेड़ती कुछ।
50. रसों का भान, जहाँ न रहे वहाँ, शान्त-रस है।
51. जिससे तुम्हें, तृष्णा न हो उससे, अनुराग क्यों?
52. मोक्षमार्ग में, समिति समतल, गुप्ति सीढ़ियाँ।
53. चूप-छाँव सी, वस्तुतः वस्तुओं की, क्या पकड़ है?
54. चूम्न से बोध, आग्नि का हो शुरू से, सो आत्म बोध।
55. कब तौं सोचो, कब करो, ना सोचो, करो क्या पाओ?
56. कस न ढील, अनति हो, सो वीणा, स्वर लहरी।
57. पुण्य-पथ लो, पाप मिटे पुण्य से, पुण्य पथ है।
58. पथ को कभी, मिटना नहीं होता, पथ पै चलो।
59. नाविक तीर, ले जाता हमें, तभी, नाव की पूजा।
60. हद कर दी, बेहद छूने उठें, कद तो देखो।
161. भारी वर्षा हो, दल-दल घुलता, अन्यथा मचे।

62. माँगते हो तो, कुछ दो उसी में से, कुछ देऊँगा।
63. अनेक यानि, बहुत नहीं किन्तु, एक नहीं हैं।
64. मन की कृति, लिखूँ, पढ़ूँ, सुनूँ मैं, कैसे सुनाऊँ?
65. कैसे देखते, संत्रस्त संसार को? दया मूर्ति हो।
66. मोह टपरी, ज्ञान की आँधी में यूँ, उड़ी जा रही।
67. पाँच भूतों के, पार अपार पूत, अध्यात्म बसा।
68. कैदी हूँ देह-, जेल में खेलकर ना.. तो भी भागा ना।
69. तेरा सो एक, सो सुख अनेक में, दुःख ही दुःख!
70. सहजता में, प्रतिकार का भाव, दिखता नहीं।
71. साधना छोड़, काय-रत होना ही, कायरता है।
72. भेद-वती है, केवल स्वानुभूति तो, अद्वैत की माँ..।
73. विज्ञान नहीं, सत्य की कसौटी है, 'दर्शन' यहाँ।
74. आम बना लो, ना कहो काट खाओ, क्रूरता तजो।
75. नौका पार में, सेतु-हेतु मार्ग में, गुरु साथ दें।
76. **मुनि स्व में तो, सीधे प्रवेश करें, सर्प बिल में।**
77. वक्ता वक्ष्योता, बने बिना गूँगा सा, निजी-स्वाद लें। II=108
78. चिन्तन कभी, समयानुबन्ध को, क्या स्वीकारता?
79. बिना रस भी, पेट भरता होऽहै, मन के लड्डू।
80. भोक्ता के पीछे, वासना भोक्ता हूँढ़े, उपासना को।
81. दो जीभ न हो, जीवन में सत्य ही, सब कुछ है।
82. सिर में चाँद, अच्छा निकल आया, सूर्य न उगा।
83. जैसे दूध में, बूरा पूरा पूरता, वैसा घी क्यों ना..?
84. ऐवोन्नति से भी, पर का पराभव, उसे सुहाता..।

185. शिरोधार्य हो, गुरु-पद-रज सो, नीरज बनूँ ।
86. परवश ना, भीड़ में होकर भी, मौनी बने हो ।
87. दुर्भाव टले, न प्रश्न-भाव से सो, स्वभाव मिले ।
88. खाओ पीयो भी, थाली में छेद करो, कहाँ जाओगे?
89. समझ न थी, अनर्थ किया आज, समझ रोता ।
90. गुब्बारा फूटा, क्यों मत पूछो, पूछो, फुलाया क्यों था?
91. बदलाव है, पै स्वरूप में न सो, 'था' है रहेगा ।
92. अर्ध शोधित, पारा औषध नहीं, पूरा विष है ।
93. तटस्थ व्यक्ति, नहीं डूबता हो तो, पार भी न हो ।
94. दृष्टि पलटा दो, तामस समता हो, और कुछ ना...।
95. देवों की छाया, ना सही पै हवा तो, लग सकती ।
96. तेरा सत्य है, भविष्य के गर्भ में, असत्य धो ले ।
97. परिचित को, पीठ दिखा दे फिर! सब ठीक है ।
98. मधुर बनो, दाँत तोड़ गन्ना भी, लोकप्रिय है ।
99. किस ओर तू.., दिशा मोड़ दे युग, लौट रहा है ।
200. दृश्य से द्रष्टा, ज्ञेय से ज्ञाता महा, सो अध्यात्म है ।
201. बिना ज्ञान के, आस्था को भीति कभी, छू न सकती ।
2. उर सिर से, महा, जैसा ज्ञान से, दर्शन होता ।
3. व्याकुल व्यक्ति, सम्मुख हो कैसे दूँ, उसे मुस्कान...।
4. अधम पत्ते, तोड़ें कोंपलें बढ़े, पौधा प्रसन्न ।
5. पूर्णा-पूर्ण तो, सत्य हो सकता पै, बहुत नहीं ।
6. गर्व गला लो, गले लगा लो जो है, अहिंसा प्रेमी ।
7. काश न देता, आकाश, अवकाश, तू कहाँ होता?

२०8. सहयोगिनी, परस्पर में ऑखे, मंगल झरी।
9. हमारे दोष, जिनसे गले धुले, वे शत्रु कैसे?
10. हमारे दोष, जिनसे फले फूले, वे बन्धु कैसे?
11. भरोसा ही क्या? काले बाल वालोंका, बिना संयम।
12. वैराग्य न हो, बाढ़ तूफान सम, हो ऊर्ध्व-गामी।
13. छाया का भार, नहीं सही परन्तु, प्रभाव तो है।
14. फूलों की रक्षा, काँटों से हो शील की, सादगी से हो।
15. बहुत मीठे, बोल रहे हो अब! मात्रा सुधारो।
16. तुमसे मेरे, कर्म कटे मुझसे, तुम्हें क्या मिला?
17. राजा प्रजा का, वैसा पोषण करे, मूल वृक्ष का।
18. कोई देखे तो, लज्जा आती, मर्यादा, टूटने से ना--।
19. आती छाती पे, जाती कमर पे, सो, दौलत होती।
20. सिद्ध घृत से, महके बिना गन्ध, दुग्ध से हम।
21. कपूर सम, बिना शोर बिखरा, सिद्धों का तन।
22. खुली शीप में, स्वाति की बूँद मुक्ता, बने और न--।
23. दिन में शशि, विदुर सा लगता, सुधा-विहीन।
24. कब पता न, मृत्यु एक सत्य है, फिर डर क्यों?
25. काल घूमता, काल पें आरोप सो, क्रिया शून्य है।
26. बिना नयन, उपनयन किस, काम में आता?
27. अनजान था, तभी मजबूरी में, मजदूर था।
28. बिन देवियाँ, देव रहे देवियाँ, बिन देव ना--।
29. काला या धौला, दाग-दाग है फिर, काला तिल भी--।
230. हीरा, हीरा है, काँच काँच है किन्तु, ज्ञानी के लिए--।

231. पापों से बचें, आपस में भिड़े क्या, धर्म यही है?
32. डाल पे पका, गिरा आम मीठा हो, गिराया खट्टा...।
33. भार हीन हो, चारु-भाल की माँग, क्या मान करो?
34. पक्षाघात तो, आधे में हो पूरे में, तो पक्षपात...।
35. प्रति-निधि हूँ, सन्निधि पा के तेरी, निधि माँगू क्या?
36. आत्मा व बोध, संयम की कृपा से, मंजिल पाते।
37. स्मृति मिटती, अब को, अब की हो, स्वाद शून्य है।
38. शब्द की यात्रा, प्रत्यक्ष से अन्यत्र, हमें ले जाती।
39. चिन्तन में तो, परालम्बन होता, योग में नहीं।
40. सत्य सत्य है, असत्य असत्य तो, किसे क्यों दाँव?
41. किसको तजूँ, किसे भजूँ सबका, साक्षी हो जाऊँ।
42. न पुंसक हो, मन ने पुरुष को, पछाड़ दिया...।
43. साधना क्या है? पीड़ा तो पी के देखो, हल्ला न करो।
44. खाल मिली थी, यहीं मिट्टी में मिली, खाली जाता हूँ।
45. जिस भाषा में, पूछा उसी में तुम, उत्तर दे दो।
46. कभी न हँसो, किसी पे स्वार्थवश, कभी न रोओ।
47. दर्पण कभी, न शैया न हँसा, हो ऐसा सन्यास।
48. ब्रह्म रन्ध्र से, बाद पहले श्वास, नाक से तोलो।
49. सामायिक में, तन कब हिलता, और क्यों देखो?
50. कम से कम, स्वाध्याय (श्रवण) का वर्ग हो, प्रयोग-काल।
51. एक हूँ ठीक, गोता-खोर तुम्बी क्या, कभी चाहेगा?
52. बिना विवाह, प्रवाहित हुआ क्या? धर्म प्रवाह?
253. दूध में घी है, घी में दूध न दबा, घी लघु बना।

254. ऊपर जाता, किसी को न दबाता, ही गुरु बना।
55. नाड़ हिलती, तार गिरती किन्तु, तृष्णा बुझती।
56. तीर न छोड़ो, मत चूको अर्जुन! तीर पाओगे।
57. बाँध भले ही, बाँधो, नदी बहेगी, अधो या ऊर्ध्व।
58. अनागत का, अर्थ भविष्य न पैं, आगत नहीं।
59. तुलनीय भी, सन्तुलित तुला में, तुलता मिला।
60. अर्पित यानि, मुख्य समर्पित सो, अहं का त्याग।
61. गन्ध जिह्वा का, खाद्य न, फिर क्यों तू, सौगंध खाता?
62. स्व-स्व कार्यों में, सब लग गये पैं, मन न लगा।
63. तपस्वी बना, पर्वत सुखे पेड़, हड्डी से लगे।
64. अन्धकार में, अन्धा न, आँखवाला, डर सकता।
65. जल कण भी, अर्क तूल को देखा! धूल खिलाता।
66. जल में तैरे, स्थूल-काष्ठ भी, लघु-कंकर डूबे।
67. छाया सीलक्ष्मी, अनुचरा हो यदि, उसे न देखो।
68. गुरु औ शिष्य, आगे-पीछे दोनों में, अन्तर कहाँ?
69. सत्य न पिटे, कोई न मिटे ऐसा, न्याय कहाँ है?
70. ऊहापोह के, चक्रव्यूह में-धर्म, दुरूह हुआ।
71. नेता की दृष्टि, निजी दोषों पे हो, या, पर गुणों पे।
72. गिनती नहीं, आम में मोर आयी, फल कितने?
73. दुःखी जग को, तज कैसे तो जाऊँ, मौन, सोचता।
74. दीप काजल, जल काई ठगले, प्रसंगवश।
75. बोलो, माटी के, दीप-तले छांवेंगे, या रत्नों के?
276. बिना राग भी, जी सकते हो ऐसे, निर्धूम आग्नि।

277. दायित्व भार, कन्धों पे आते शक्ति, सो न सकती।
78. सुलझे भी हो, और औरों को क्यों तो उलझा देते।
79. कब बोलते? क्यों बोलते? क्या बिना, बोले न रहो?
80. तपो वर्धिनी, मही में ही मही है, स्वर्ग में नहीं।
81. और तो और, गीले दुपट्टे को भी, न फटकारो।
82. खूब बिगड़ा, तेरा उपयोग है, योगा कर लें।
83. ज्ञान ज्ञेय से, बड़ा आकाश आया, छोटी आँखों में।
84. पचपन में, बचपन क्यों? पढ़ो, अपनापन।
85. भोगों की याद, सड़ी-गली धूप सी, जान खा जाती।
86. सहगामी हो, सहभागी बने सो, नियम नहीं।
87. पद चिह्नों पे, प्रश्न चिन्ह लगा सो, उत्तर क्या दूँ (बिखर जाना)।
88. निश्चिन्तता में, योगी सो जाता, वहीं, योगी खो जाता।
89. शत्रु मित्र में, समता रखें, न कि, भक्ष्या-भक्ष्य में।
90. आत्मा भटकती, जब आपत्ति आती, ज्ञान चिल्लाता।
91. आत्मा गलती, रागाग्नि से, लोहे सी, कटती नहीं।
92. नदी कभी भी, लौटती नहीं फिर! तू क्यों लौटता?
93. समर्पण में, कर्तव्य की कमी से, सन्देह न हो।
94. कुण्डली मार, कंकर पत्थर पे, क्या मान बैठे?
95. खुद बँधता, जो औरों को बाँधता, निस्संग हो जा।
96. सदुपयोग, ज्ञान का दुर्लभ है, मद-सुलभ।
97. ज्ञानी हो क्यों कि, अज्ञान की पीड़ा में, प्रसन्न जीते।
98. ज्ञान की प्यास, सो कहीं अज्ञान से, बुझा तो नहीं।
299. प्रभु-पद में, वाणी, काया के साथ, मन ही झुकते।

300. मूर्छा को कहो, परिग्रह दाता भी, मूर्छित न हो।
301. जीवनोद्देश, जिना देश-पालन, अनुपदेश।
2. द्वेष से राग, विवेला होता जैसा, शूल से फूल।
3. विषय घटे, ग्लानि मिटे सेवा से, वात्सल्य बढ़े।
4. अग्नि पिटती, लोहे की संगति से, अब तो चेतो।
5. सर्प ने छोड़ी, काँचली वस्त्र छोड़े, विष तो छोड़ो..।
6. असमर्थन, विरोध सा लगता, विरोध नहीं।
7. हम वस्तुतः, दो हैं तो एक कैसे, हो सकते हैं?
8. मैं के स्थान में, हम का प्रयोग क्यों, किया जाता है?
9. मैं हट जाऊँ, किन्तु हवा मत दो, और न जलें..।
10. बड़ी बूंदों की, वर्षा सी बड़ी राशि, कम पचती।
11. जिज्ञासा यानि, प्राप्त में असन्तुष्टि, धैर्य की हार..।
12. बिना अति के, प्रशस्त नीति करो, सो विनीत है।
13. सुनो तो सही, पहले सोचो नहीं, पछताओगे।
14. केन्द्र को छूती, नयी सीधी रेखाएँ, वृत्त बनाती।
15. शक्ति की व्यक्ति, और व्यक्ति की मुक्ति, होती रहती।
16. जो है सो थामें, बदलता होगा सो, है में ढलता।
17. चिन्तन-मुद्रा, प्रभु की नहीं क्यों कि, वह दोष है।
18. पथ में क्यों तो, रुको, नदी को देखो, चलते चलो।
19. खानी शान की, केब जानता जब, आपे में होता।
20. बँटा समाज, पंथ-जाति वाद में, धर्म बाद में।
21. घर की बात, घर तक ही रहे, बे घर न हो।
322. अकेला न हूँ, गुरुदेव साथ हैं, हैं आत्मसात् वे।

323. निर्भय बनो, पर निर्भिक होने, गर्व न पालो।
24. अति मात्रा में, पथ्य भी कुपथ्य हो, मात्रा मॉ सी हो।
25. संकट से भी, धर्म-संकट और, विकट होता।
26. अँधेरे में हो, किंकर्त्तव्य मूढ़ से, कर्त्तव्य जीवी।
27. धन आता हो, कूप साफ कर हो, नया पानी लो।
28. हम से कोई, दुःखी नहीं हो बस, यही सेवा है।
29. चालक नहीं, गाड़ी दिखती मैं न, साड़ी दिखती।
30. एक दिशा में, सूर्य उगे कि दशों, दिशाएँ खुश।
31. जीत सको तो, किसी का दिल जीतो, सौ बेर न हो।
32. प्रेरक बनो, सिंह से वन, सिंह, वन से बचा।
33. तैरना हो तो, तैरो हवा में, छोड़ो, पहले मोह।
34. गुरु कृपा से, बाँसुरी बना मैं तो, ठेठ बाँस था।
35. पर्याय क्या है? तरंग जल की सो! नयी-नयी है।
36. पुण्य का त्याग, अभी न, बुझे आग, पानी का त्याग।
37. पैरना तो दूँ, निर्दोष होने रूचि, आप की होगी।
38. वे चल बसे, थानी यहाँ से वहाँ, जा कर बसे।
39. कहो न सहो, सही परीक्षा यही, आपे में रहो।
40. पाँचों की रक्षा, मुट्ठी में, मुट्ठी बँधी, लाखों की मानी।
41. केन्द्र की ओर, तरंगें लौटती सी, ज्ञान की यात्रा।
42. बाँधो न बाँधो, काल से व काल को, कालजयी हो।
43. गुरु नम्र हो, झंझा में बड़ गिरे, बेंत ज्यों की त्यों।
44. तैरो नहीं तो, डूबो कैसे तैरने में, निधि पाओगे?
345. मध्य रात्रि में, विभीषण आ मिला, राम-राम थे।

346. व्यापक कौन? गुरु या गुरुवाणी, किस से पूछें?
47. योग का क्षेत्र, अन्तर्राष्ट्रीय नहीं, अन्तर्जगत है।
48. मत दिखाओ, विश्वास जीत आता, व्यवहार से।
49. सार्थक बोलो, व्यर्थ नहीं साधना, सो छोटी नहीं।
50. मैं खड़ा नहीं, देह को खड़ा कर, देख रहा हूँ।
51. आँखें ना मूँदो, ना ही आँख दिखाओ, सही क्या देखो?
52. हाथ ना मलो, ना ही हाथ दिखाओ, हाथ मिलाओ।
53. जाने केवली, इतना जानता हूँ, जाननहारा।
54. ठण्डे बस्ते में, मन को रखना ही, मोक्षमार्ग है।
55. आँखें देखती हैं, मन सोचता है, इसमें मैं हूँ।
56. उड़ना भूली, चिड़िया सोने की तू, उठ उड़ जा।
57. झूठ भी यदि, सफेद हो तो सत्य, कटु क्यों न हो?
58. परिधि में ना, परिधि में हूँ हाँ हूँ, परिधि सृष्टा।
59. बचो-बचाओ, पाप से पापी सेना, पुण्य कमाओ।
60. हँसो-हँसाओ, हँसी किसी की नहीं, इतिहास हो।
61. अतिसंधान, अनुसंधान नहीं, संधान साधो।
62. है का होना ही, द्रव्य का स्वभाव है, सो सनातन।
63. सुना था सुनो, अर्थ की ओर न जा, डूबो आपे में।
64. अपनी नहीं, आहुति अहं की दो, झाँको आपे में।
65. पीछे भी देखो, पिछलग्गू न बनो, पीछे रहोगे।
66. द्वैष पचाओ, इतिहास रचाओ, नेता बने हो।
67. काम चलाऊ, नहीं काम का बनूँ, काम हल्का भी।
368. आँखों से आँखें, न मिले तो भीतरी, आँखें खुलेंगी।

369. ऊधमी तो हैं, उद्यमी आदमी सो, मिलते कहाँ?
70. तूम तो करो, हड़ताल मैं सुनूँ, हर ताल को।
71. संग्रह कहाँ, वस्तु विनिमय में, मूर्छा मिटती।
72. सगा हो दगा, अर्थ विनिमय में, मूर्छा बढ़ती।
73. धुन के पक्के, सिद्धान्त के पक्के हो, न हो उचक्के।
74. नये सिरे से, सिर से उर से हो, वर्षा दया की।
75. जरा ना चाहूँ, अजरामर बनूँ, नजर चाहूँ।
76. बिना खिलौना, कैसे किससे खेलूँ? बनूँ खिलौना।
77. चिराग नहीं, आग जलाऊँ तबि, कर्म दग्ध हो।
78. खेती बाड़ी है, भारत की मर्यादा, शिक्षा साड़ी है।
79. शरण लेना, शरण देना दोनों, पक्ष में होते।
80. दादा हो रहो, दादागिरी न करो, दायित्व पालो।
81. हाथ तो डालो, वामी में विष को भी, सुधा दो हो तो।
82. श्वेत पत्र पे, श्वेत स्याही से कुछ, लिखा सो पढ़ो।
83. राजी ना होना, नाराज सा लगता, नाराज नहीं।
84. भार तो उठा, चल न सकता तो, पैर उठेंगे।
85. मन का काम, मत करो मन से, काम लो-मोक्ष।
86. छात्र तो न हो, शोधार्थी शिक्षक व, प्रयोगधर्मी।
87. दिन में शशि, शर्मिन्दा है तारायें, घूँघट में है।
88. दीक्षा ली जाती, पद दिया जाता है, सो यथायोग्य।
89. उन्हें न भूलो, जिनसे बचना है, वक्त-वक्त पे।
90. सूत्र कभी भी, बासा नहीं होता, सो; भाव बदलो।
391. ध्यान काल में, ज्ञान का श्रम कहाँ, पूरा विश्राम।

392. खान-पान हो, संस्कारित शिक्षा से, खान-दान हो।
93. ऐसा संकेत, शब्दों से भी अधिक, हो तलस्पर्शी।
94. हम अधिक, पढ़े-लिखे हैं कम, समझदार।
95. मेरी दो आँखें, मेरी ओर हजार, सतर्क होऊँ।
96. मुकद्दर है, उतनी ही चद्दर, पैर फैलाओ।
97. घुटने टेक, और घुटने दो ना, घोंटते जाओ।
98. अशुद्धि मिटे, बुद्धि की वृद्धि न हो, विशुद्धि बढ़े।
99. गोबर डालो, मिट्टी में सोना पा लो, युरिया राख।
400. हमसे उन्हें, पाप बंध नहीं हो, यही सेवा है।
401. प्राणायाम से, श्वास का मात्र न हो, प्राण दस है।
2. देख रहा हूँ, देख न पा रही हैं, वे आँखें मुझे।
3. दुस्संगति से, बचो, सत्संगति में, रहो न रहो।
4. दुर्ध्यान से तो, दूर रहो सध्यान, करो न करो।
5. कर्रा न भले, टर्रा न हो तो पक्का, पक सकोगे।
6. अंधाधुंध यूँ, महाबंध न करो, अंधों में अंधों।
7. कमी निकालो, हम भी हम होंगे, कहाँ न कमी।
8. लज्जा आती है, पलकों को बना लें, घूँघट में जा।
9. कड़वी दवा, उसे रूचति जिसे, आरोग्य पाना।
10. स्व आश्रित हूँ, शासन प्रशासन, स्वशासित है।
11. सागर शांत, मछली अशांत क्यों? स्वाश्रित हो जा।
12. कोठिया नहीं, छप्पर फाड़ देती, पक्की आस्था हो।
13. धनी से नहीं, निर्धनी निर्धनी से, मिले सुखी हो।
414. दण्डशास्त्र क्यों? जैसा प्रभु ने देखा, जो होना हुआ।

15. ईर्ष्या क्यों करो, ईर्ष्या तो बड़ों से हो, छोटे क्यों बनो?
16. टूट चुका है, बिखरा भर नहीं, कभी जुड़ा था।
17. तपस्या नहीं, पैरों की पूजा देख, आँखें रो रही।
18. भिन्न क्या जुड़ा, अभिन्न कभी टूटा, कभी सोचा भी?
19. कौन किससे, कम है मत कहो, मैं क्या कम हूँ?
20. त्याग का त्याग, अभी न बुझे आग, पानी का त्याग।
21. प्रेरणा लो दूँ, निर्दोष होने बचो, दोष से आप।
22. यात्रा वृत्तांत, लिख रहा हूँ वो भी, बिन लेखनी।
23. मन की बात, सुनना नहीं होता, मोक्षमार्ग में।
24. हँडे बर्तन में, मन को रख थिर, आत्मा में डूब।
25. खाली हाथ ले, आया था जाना भी है, खाली हाथ ले।
26. आँखें देखती, मन याद करता, दोनों में मैं हूँ।
27. दिख रहा जो, द्रव्य नहीं द्रव्य सो, दिखता नहीं।
28. आग से बचा, धुंवा से जला (धी) सा तू, मद से फिरा।
29. चल को देखूँ, मूल को बंदूँ भूल, आमूल चूल।
30. अंधी दौड़ में, आँख वाले हो क्यों तो, भाग लो सोचो।
31. महाकाव्य भी, स्वभाविरुद्ध सम, निर्दोष न हो।
32. पैरों में कांटे, गड़े आंखों में शूल, आँखें क्यों चली।
33. चक्की भी लौंग, सेमवशरण से, कारण मोह।
34. दर्शन से ना, ज्ञान से आज आस्था, भय भीत है।
35. एकता में ही, अनेकान्त फले सो, एकांत दले।
36. पीठ से मैत्री, पेट ने की तब से, जीभ दुखी है।
37. सूर्य उगा सो, सब को दिखता क्यों, आँखें तो खोलो।

438. अंधे बहरे, मूक क्या बिना शब्द, शिक्षा न पाते।

439. पद यात्री हो, पद की इच्छा बिन, पथ पे चलूँ।

440. सही चिंतक अशोक जड़ सम सरवोत्तम जाता।

441. बिन्दु की रक्षा, सिन्धु में नहीं बिन्दु, बिन्दु से मिले।

442. श्वेत पे काला, या काले पे श्वेत हो, मंगल कौन?

443. भोग के चीह्न, भोग चल रहा है, योगी हैं मौन।

444. थोपी योजना, पूर्ण होने से पूर्व, खण्डहर सी।

445. हिन्दुस्थान में, सफल फिसल के, फसल होते।

446. शब्दों में अर्थ, यदि भरा किससे, कब क्यों बोलो।

447. कटु प्रयोग, उसे रुचता जिसे, आरोग्य पाना।

448. व्यंजन छोड़ूँ, गूंगे हैं पढ़ूँ है सो, स्वर में सनूँ।

449. एक से नहीं, एकता से काम लो, काम कम हो।

452. बड़ो छोटो पै, वात्सल्य विनय से, एकता पायें।

453. शब्दों में अर्थ, है या आत्मा में इसे, कौन जानता?

454. असत्य बचे, बाधा ना सत्य कभी, पिटे न बस।

455. किसे में कहूँ, मुझे में नहीं मिला, तुम्हें क्या (मैं) मिला?

456. मण्डूक बनो, कूप मण्डूक नहीं, नहीं डूबोगे।

457. किस मूढ में, मोड़ पै खड़ा सही, मोड़ा मूड़ जा।

56. बहुत सोचो, कब करो ना सोचो, करो लुटोगे।

57. मरघट पै, जमघट है शव, कहता लौटूँ।

58. ज्ञानी बने हो, जब बोलो अपना, स्वाद छुटता।

59. कोहरा कोना, को रहा कोहरे में, ढली मोह है।

60. जल में नाव, कोई चलाता किन्तु, रेत में मिलो?

461. रोते को देख, रोते तो कभी और, रोना होता है।

462. तुम्बी तैरती, तारती औरों को भी, गीली क्या सूखी।
63. भली नासिका, तू क्यों बर फूलती, मान-हानि में।
64. कैदी है देह, जेल में जेलर ना, तो भी वहीं है।
65. हाथ कंगन, बिना बोले रहे दो, बर्तन क्यों न।
66. बन्दर कूँदे, अचूक और उसे, अस्थिर कहो।
67. सहजता औ, प्रतिकार का भाव, बेमेल रहे।
68. पर की पीड़ा, अपनी करुणा की, परीक्षा लेती।
69. परिचित भी, अपरिचित लगे, स्वस्थ्य ज्ञान को।
70. कच्ची नींव, घर कच्चा है घाव, पर्याप्त है ना।
71. कर्तव्य मान, रुग्ण रुग्णालय को, पीठ नहीं दो।
72. पगडंडी में, डंडे पड़ते तो क्या? राजमार्ग में।
73. प्रतिशोध में, बोध अंधा हो जाता, शोध तो दूर
474. मैं क्या जानता, क्या क्या न जानता सो, गुरुजी जाने।

3। जुलाई २०।६ - गुरुपूर्णिमा
भव्य दीक्षा समारोह - बीना बारहा

31-7-15, "दृढ़ता के साथ किया निवेदन" मध्याह्न २·३०

नदी के किनारे यह बीना बारहा क्षेत्र है। नाम भी नदी का है - "सुख-चैन"। एक दोहा लिखा था - बीना बारहा क्षेत्र पर बहती नदी सुख चैन"।

बहती-बहती कह रही, इत आ सुख पा और
इसमें कोई संदेह नहीं। विदिशा है, सामने सागर तो है ही, चैन।।
ललीतपुर है, अशोकनगर है, इंदौर है, छत्तरपुर - पन्ना है।
इनके साथ ही जबलपुर है। ये सारे के सारे इस ढंग से पुष्प प्रकीर्णक की तरह इस बीना बारहा क्षेत्र के चारों तरफ विद्यमान हैं। यहाँ पर खेती-बाड़ी की विशेषता है। इसी को मुख्य रूप से बुंदेलखण्ड कहा जाता है।

देव लोग भी इतनी जल्दी नहीं उतर पाते होंगे, जितने की आप लोग आ जाते हैं। या तो भगवान से इनका कोई वायरलेस का संबंध हो। जो वो बताते होंगे और ये आ जाते होंगे। हमने इन लोगों को कहा था. सामान्य से ये अपने आप हो जायेगा। लेकिन व्यवस्थापकों के माध्यम से यह बात आग की तरह हवा में फैल गयी। बुंदेलखण्ड है - यहाँ के संस्कार अलग-थलग ही है, आप लोग समझ सकते हैं। सब जगह यही शब्द विद्यमान है।

यहाँ के संस्कारों की विशेषता, यहाँ का महत्व अपने आप में कहने की कोई आवश्यकता नहीं हैं। अन्यत्र खदान खोदते है तो मिट्टी-पत्थर आदि ज्यादा निकलते है,

रत्नों के नग तो एकाध बार ही निकलता है पर यहाँ बुंदेलखंड में ऐसी खदान है जहाँ मिट्टी कम निकलती है रत्न अधिक। आज यह कहने की कोई आवश्यकता नहीं है।

भावों में जो धार्मिक उछाव आते हैं, उसके लिए अतीत की ओर देखने की कोई आवश्यकता नहीं पड़ती। संसारी प्राणियों का इतिहास हमेशा-हमेशा पापात्मक ही रहा है। अनंत काल से चला आ रहा यह इतिहास जिसका कारण पाप ही है। किन्तु इस प्रकार के जो भाव होते हैं, उसके लिए इस जीव ने कभी न कभी, कहीं न कहीं इतिहास में कुछ सत्कार्य अवश्य किए हैं। पुण्य का होना अलग वस्तु उसके फल से धन-संपदा मिलती है, आरोग्य-लावण्य मिलता है, शरीर चौरवा प्राप्त होता है आदि-आदि किन्तु भावों में देवभाव की ओर आने का जो अवसर प्राप्त होता है उसके लिए त्याग-तपस्या की आवश्यकता है।

ऐसे जहाँ पर हजारों-हजारों व्रती लोग अपने जीवन को आगे बढ़ा रहे हैं। अभी आपके सामने दीक्षा की भावना लेकर निवेदन किया। उसके साथ-साथ गृहस्थ/आश्रम में रहकर के अभी तक जो कुछ जीवन व्यतीत किया, तत् संबंधी जो गलतियाँ हुई उनके के लिए क्षमा याचना की और क्षमा को लेकर भाव भी रखें। चाहे चतुर्थ काल हो, चाहे पंचम काल हो महापुरुष जब रहते थे वह भी इसी प्रकार के चरित्र का पालन करते थे। पंचमकाल आया है, इसका अर्थ यह नहीं कि कुछ छूट-छाट हो जाये। नियमावली

ज्यों की त्यों बनाए रखते हैं।

इस नियमावली का पालन करने के लिए शरीर भी अपेक्षित होता है। शरीर में कुछ शक्ति / क्षमता आवश्यक होती है। आज इन्होंने निवेदन किया, पूर्व में भी किया था। जो साधना बतायी वह साधना कर रहे हैं - करते हैं। आज इन लोगों की यह प्रार्थना का दिन आया है। आप लोगों ने सब लोगों के सामने प्रार्थना की है, फिर भी आप एक बार और सोच लो अभी घर का मामला है। अभी अपने आवरणों में हैं।

देख लो - सोच लो। यह ऐसी मुद्रा है जिसे चौबीस भगवानों ने अपनाई और यही मुद्रा आप लोगों ने स्वीकार करने के लिए निवेदन किया है - एक बार और सोच लो। अब भी घर में हैं। हमारे यहाँ प्रकृति में ही रहना है। अनुकूलता बहुत कम नहीं भी कह दो तो कोई अत्योक्ति नहीं। प्रतिकूलता के अलावा यहाँ कुछ नहीं मिलेगा / की मन हमेशा अनुकूलता में भी प्रतिकूलता का ही अनुभव करता है। यह मन का स्वभाव है। उसको अच्छे - अच्छे व्यक्ति समझा नहीं पाते, हम तो समझा ही नहीं पाएंगे।

हमारे ऊपर आप भरोसा न रख कर के मन को अपने भरोसे में लेलो, यह सबसे अच्छा होगा। हम अपना देखेंगे ही आपको देखेंगे। चल रहे हैं / यात्रा है तो रुकने का सवाल नहीं। चातुर्मास भर में हम भले ही रुकते हैं,

फिर बाद में हम ऐसे यात्री हैं आप लोगों को कभी भी विश्राम के लिए नहीं कहेंगे।

इस यात्रा में थोड़ा भी विश्राम नहीं। यह गाड़ी / यात्रा हमेशा चलती रहे। कई लोग कहते हैं हम वहाँ की यात्रा करके आए हैं - हम वहाँ की करके आए हैं, यह जीवन ही हमारी यात्रा है। इस यात्री को देखने के लिए बिना निमन्त्रण जनता टूटती है। देख लो सामने, एक बार सामने देख लो। यह अभी बहुत कम है- मंगलाचरण है। अब इनके बीच में आप लोगों को रह करके अपनी सुद लेना है। इन लोगों को कोई सुद नहीं। नहीं समझे। इन लोगों को सुद नहीं, आगे-पीछे कुछ नहीं देखते ये लोग।

आप लोगों की ओर देखेंगे। आप लोग उस समय क्या करेंगे - क्या सोचेंगे? यहाँ तो एक दिन तक नहीं मिल पाता। आप लोगों ने कई बार सोचा होगा कि बहुत अच्छे ढंग से काम कर लेंगे पर यहाँ कुछ नहीं चलता। समझे! हाँ एक बार और सोच लो। आप लोगों की अनुमति है- घर वालों की। यह बाहर वालों की बातियाँ हैं या घर वालों की। यदि है तो आगे का कार्यक्रम चालु करते हैं।

शांतिनाथ भगवान से प्रार्थना करते हैं कि इन लोगों को इस प्रकार से शांति प्रदान करें जिससे इनके मन की शांति हमेशा बनी रहे, ताकि ये अशांत वातावरण में भी अपने मन के परिसर में शांति की व्यवस्था / स्थापना कर सकें। आगे की यात्रा इनकी

सरल हो। सरल इस अपेक्षा से कि भावों की स्थिरता बहुत कठीन है।

नदी का प्रवाह चलता रहता है, हवा के झोंके लगते रहते हैं तो तरंग उठती है। उसके समान ही मन में तरंगे उठती है। तरंगो का खेल है मन - जिसको मानस सरोवर भी बोलते हैं। मानस सरोवर कहने से आप लोग मानसरोवर चले जाते हैं। प्रत्येक के पास ही मानस सरोवर है। हवा की भी तरंगे उठती है, पीपल के वृक्ष पर पत्ते होते है उनसे पता चल जाता है कि हवा नहीं भी चलती है किन्तु वह पत्ता हिलता ही रहता है। ऐसा ही मन का काम है।

मन को समझाना बहुत कठिन होता है। "मन का काम मत करो, मन से काम लो मोक्ष" यह बहुत अच्छी पंक्तियाँ आप लोगों को सुनने मिल रही हैं। मन से काम करने वालों! मन के काम करने वालों! यह सोचो। मन के काम जो करेगा तो कहाँ से मिलेगा? हमारे मन की बात नहीं हुई, कभी भी नहीं होती। मन को कहता हूँ, प्रतिदिन कहता रहता हूँ, महाराज! दर्शन तो होता नहीं। दर्शन तो हो गया, पर मन भरा नहीं?

यहाँ रख दो मन को। एक लीटर भरने के बाद हम भेज देंगे आपके मन को घर पर। मन कभी भरेगा ही नहीं - भरता ही नहीं। इसलिए हमारा कहना है - "मन का काम मत करो, मन से काम लो मोक्ष" मोक्ष और कोई

वस्तु नहीं। मन के द्वारा ही काम लेना है मोक्षमार्ग में। इसी से वह मिलने वाला है।

आगे के कार्यक्रम के लिए सोचता हूँ। इन लोगों ने दृढ़ता के साथ निवेदन (प्रार्थना) की है। भावना रखी है। साथ ही साथ उत्तरोत्तर विकास को सम्पन्न करके आए हैं। आपलोगों के सामने योग्यता का परिचय करा दे इस अपेक्षा से इन्होंने अपनी बात रखी। अब सुविधा के साथ सभी लोग अच्छे ढंग से देख सकें आगे का कार्यक्रम मंत्र उच्चारण के साथ होने वाला है। ब्रह्मचारी जी अपनी थाली में जो लगता है, वह लगा दें।

31-7-15 "गुरुमुख से हुआ नामकरण" मध्याह्न 3.30

चतुर्थ आदि काल में यह सब होता रहता है। यहाँ पर वर्तमान काल में भी आपलोगों ने समस्त परिग्रह को छोड़ा। इस काल में आचार्य शान्तिसागर जी हुए, उनके शिष्य वीरसागर जी, उनके शिष्य शिवसागर जी फिर आचार्य ज्ञानसागर जी वह परम्परा इस प्रकार आज यहाँ तक चल कर आई है।

आप लोग अपने आप को सौभाग्यशाली मान कर निर्दोष व्रतों का पालन करेंगे। यह आप तक भी आ गया है। प्रतिभाओं का जो रूप हुआ, वह भी यहाँ-कहीं से नहीं, भगवान के द्वारा प्रतिपादित है। हम इनसे लिए-उनसे लिए ऐसा नहीं है, उसका

सम्बन्ध भी वहींतक है।

कम्पनी का जैसा माल आता है, वैसा का वैसा वह सब लोगों की दुकान में आ जाता है। वह कम्पनी का ही माल माना जाता है, इसलिए उसमें कुछ भी mistake (मिस्टेक) नहीं कर सकते। मिलावट कुछ नहीं होना चाहिए। उसको यथावत् पालन करते रहना चाहिए। यह जो परम्परा से चला आ रहा है उसका निर्वाह निर्दोष रूप से 28 मूलगुणों का, दिगम्बरी दिक्षा का अथवा श्रामण्य का पालन होना चाहिए।

श्रमण का क्या अर्थ होता है? आचार्यों ने टीकाओं में लिखा - "श्रामण्यः मोक्ष मार्गस्य अपरनामः" अर्थात श्रमण कहो अथवा मोक्षमार्ग कहो दोनों पर्यायवाची शब्द है। आचार्यों का कहना है मोहमार्गी संसार में रहता है और जबतक गृहस्थ आश्रम में लीन रहोगे तबतक मोक्षमार्ग छुट नहीं सकता। श्रमण बनने के उपरान्त ही मोक्षमार्ग प्राप्त होता है, ऐसा टीकाकारों ने ग्रन्थों में लिखा है।

इसलिए मोक्ष मार्ग के गौरव को समझकर, उसीके अनुसार अपनी चर्या निभानी है। यह गुरुवाणी की अपेक्षा से आपके सामने संक्षेप से कहा। अब इसके उपरान्त उपकरणों का नम्बर है। अभी खाली हाथ रह रहे हैं। अभी कुछ भी नहीं हैं। किन्तु प्रवृत्ति की अपेक्षा से इनको कुछ उपकरण दिए जाते हैं। ये उपकरण परिग्रह नहीं हैं,

क्यों की परिग्रह को तो इन्होंने छोड़ दिया है।

उपकरण का अर्थ ही है- "उपकारो करोति इति उपकरणम्" जिसको लेने से हमारे ऊपर उपकार होता है। यह इसलिए लेते हैं कि हम एक प्रकार से अनुकूलता के साथ चर्या को निर्दोष निभा सकें। ये उपकरण क्या है? सर्वप्रथम पीच्छिका - संयमोपकरण जिसको बोलते हैं। यह आप लोगो के घर में नहीं मिलता। नहीं समझे। यह उपकरण केवल मुनि लोगो के पास रहता है। आप लोगो के (श्रावकों) पास ही वह बनता है। अपने पास नहीं रखकर क्यों की महाराज को वह आवश्यक है इन्हें दे देते है।

यह कमण्डल है। इसका उपयोग आहारचर्या के बाद श्रावक इसमें जल भरकर दे देते हैं फिर उसी से पुरे दिन का काम होता है। बार-बार ज्यादा पानी का उपयोग नहीं करते। जल गृहा की दासता के अनुसार ही उपयोग करते हैं। दोषों को दूर करने के लिए - निर्दोष चर्या के पालन हेतु उसको उपयोग में लिया जाता है।

अभी तक आप लोग अपने घर में उनको संबोधन करने के लिए-भोजन के लिए नाम का उपयोग करते थे, वह नाम अब अपने यहाँ नहीं चलेंगे। हम अपने घर के अलग नाम नामांकित करेंगे। अब आप सुन लो ताकि उसके माहत्म

से सब काम - साधना वगैरह पूर्ण कर सकते हैं।

वह आगे के (प्रथम) महाराज इन नाम रखा है "संधान सागर" बोलो संधानसागर महाराज की जय। दूसरे महाराज उनका नाम रखा है- "संस्कार सागर" बोलो संस्कारसागर महाराज की जय। तृतीय महाराज का नाम है- "ओमकार सागर" बोलो ओमकार सागर महाराज की जय। आप लोग हमेशा हमेशा ओम बोलते रहते हैं अब इसमें कार लगाना है। ओमकार ओमकार। वो ओम ओम बोलते रहते हैं, इसलिए इनका नाम ओमकार रखा है।

इस प्रकार आज यह विधिवत् संस्कारों के साथ नाम रखे। अब देखो सभी लोग! आप लोगों के घर में शोर सूतक लगता था, अब इन्हें किसी भी प्रकार थोनो को शोर-सूतक नहीं लगेंगे। और आपका इनसे कोई सम्बन्ध है तो सच्चे देवशास्त्र-गुरु के अनुसार ही सम्बन्ध रहेगा। यह त्याग की महिमा है। आप लोग जहाँ हैं, वहीं पर हैं। और ये आप के सामने से आकर के इतने उच्च पद को पा लिए। पंच परमेष्ठी में अब इनका अन्तर्भाव हो गया है। जब कभी आप जाप देते हैं, सामायिक करते हैं अथवा और कोई मांगलिक कार्य करते हैं तो णमोकार मंत्र का स्मरण जरूर करते हैं। इस पंच नमस्कार मंत्र में किसी व्यक्ति की पूजा नहीं बताई गई है,

किन्तु व्यक्तित्व को मुख्य माना जाता है।

जैन धर्म गुणों की उपासना सीखाता है। गुणों के माध्यम से ही पूज्यता आती है। जब तक हम गुणों को अपने जीवन में स्वीकार नहीं कर पायेंगे तब तक हमारा विकास का क्रम संभव ही नहीं हो सकेगा। आप लोग अपनी-अपनी शक्ति के अनुसार गुणों की उपासना करें। उन गुणों का महत्व समझो और गुण आने के उपरान्त आप धीरे-धीरे अपने आत्म तत्त्व की ओर आने का पुरुषार्थ करो।

आत्मा की प्राप्ति आत्मार्थित होने पर ही होती है, इसके बिना नहीं। श्रावक इसको सपने में भी नहीं सोच सकता है। मुनि महाराज की चर्या को देखकर वह कह सकता है अथवा समझ सकता है कि हम भी इसी प्रकार की आराधना करेंगे। एक दिन वह भी अपनी चर्या को इस प्रकार की बना सकता है पांच पापों से बच सकता है।

इसी शरीर में आत्म तत्त्व होते हुए भी उसका अनुभव न होकरके पूर्व संस्कारों के कारण शरीर का ही अनुभव/शरीर की ही पहचान होती है। यह भी सत्य है कि इस शरीर के माध्यम से ही उस आत्म तत्त्व को पा सकते हैं। यह मुद्रा जो मिली है अथवा यह जो धारण कर रखी है यह जिनलिंग मानी जाती है। इसके माध्यम से जो शरीर आश्रित आत्म तत्त्व है,

उसको प्राप्त कर सकते हैं।

जैसे मान लो आपको स्वर्ण-पाषाण का स्पर्श हुआ। इसमें सोना है या नहीं आपको संदेह रहता है। किन्तु सुनार को दिखाओगे तो बता देगा कि इसमें 5 तोला सोना विद्यमान है। वही पाषाण खण्ड आपके हाथ में है पर आपको ज्ञात नहीं हो रहा है और सुनार को देखते ही ज्ञान हो जाता है कि इसमें इतना सोना एवं शेष पत्थर है। विधी के अनुसार जब निकाला जाता है तो ज्ञात होता है कि इसमें 5 ही तोला सोना निकला। यह सम्यग्ज्ञान की महिमा है वह निश्चित अवस्था में भी अचूट पहचान कर लेता है।

अब इन लोगों के लिए एक साधन उपलब्ध हो गया है। अब शरीर में जो आत्म-तत्त्व है जिसे सम्यग्ज्ञान के माध्यम से खोदकर अपनी उस पहचान को मूर्त रूप दे सकते हैं। फलस्वरूप उन्हें आत्मानुभूति होती है। भगवान के दर्शन कर अपनी श्रद्धा को जाग्रत करके पूर्व में इन्होंने इतनी साधना की थी फलस्वरूप आज इन्हें आत्म उपलब्धि हुई। और मोक्षमार्ग में इन्हें यह विदित हो गया कि हम भी ऐसी साधना करेंगे तो अवश्य ही उस आत्म तत्त्व को पा सकेंगे।

ग्रन्थों में आचार्यों द्वारा उल्लेखित है, साधक जब जीवन पर्यन्त साधना करते-करते विधिवत

संल्लेखनापूर्वक समाधिस्थ होता है तो उत्कृष्ट रूप से दो या तीन भव और अधिक से अधिक सात या आठ भव में मुक्ति को पा लेता है।

इस प्रकार अनंत संसार का कुछ ही भव में निश्चित रूप से अभाव (अन्त) कर देगा। यह श्रद्धान (विश्वास) की बात है। इस विश्वास के साथ चाहे अब वह घर में हो या वन में हो, कहीं भी हो साधना का क्रम तो यही है। पाठ्यक्रम तो यही है जो विद्यार्थी पाठ्यक्रम के अनुसार ही परिश्रम करता है, अवश्य ही वह उस गुणवत्ता को प्राप्त कर लेता है। इन गुणों के माध्यम से वह आगे बढ़ जाता है। संसारी प्राणी मोही होता है अतः वह आगे नहीं आ रहा। निर्मोही होकर जो पंचपरमेष्ठी की आराधना करता है, वह अपने जीवन को बहुत जल्दी मुक्त करा सकता है।

यह बहुत कठिन साधना है किन्तु आत्मार्थित साधना है। संसारी पदार्थों के प्रति मोह का त्याग करके हम जब अपनी आत्मा की बात करेंगे तभी उसको प्राप्त कर सकेंगे।

3।-7-15 "रुकना नहीं-चलना है" मध्याह्न 4:30

मुख्य रूप से पाँच पापों के परित्याग के लिए, पाँच महाव्रत स्वीकार किये जाते हैं। अब पाप प्रवृत्तियों को अपने जीवन में स्थान नहीं देंगे और उसके संकल्प रूप में पाँच महाव्रतों को स्वीकार करेंगे। हिंसा का त्याग, झूठ का त्याग, चोरी का त्याग, कुशील का त्याग, परिग्रहका त्याग ये पांच महाव्रत होते हैं। इसी प्रकार पाँच समितियाँ हैं। जब कभी भी प्रवर्ती करें उस समय समीति पूर्वक करें। मान लिजिए आप चलते हैं तो चार हाथ सामने देखते हुए, जमीन पर जीव जन्तु हैं उनको बचाते हुए चलना।

रात में शंकादि अपवाद को छोड़कर इधर-उधर चलना अब संभव नहीं हो सकेगा। ये पांच समीतियाँ हैं- आहार के लिए जायेंगे वहाँ एषणासमीति, बोलेंगे तो भाषा समीति, चलेंगे तो इर्यापथ समीति, मल-मूत्र विसर्जित करेंगे तो व्युत्सर्ग समिति एवं अपने उपकरणों को उठायेंगे-रखेंगे तो आदान-निक्षेपण समीति। अपने यहाँ चातुर्मास समीति, पंचकल्याणक समीति अथवा और कोई समितियाँ आप लोगों के यहाँ होती रहती हैं। ये सब समीतियाँ छोटी-छोटी सी लगती हैं हमारी इन पांच समीति के सामने ये महासमीति मानी जाती है।

इसी प्रकार जैसे आज केशलोंच किया उत्कृष्ट रूप से 2 महिने, मध्यम रूप से 3 महिने, और जघन्य रूप से 4 महिने में अपने हाथों से करना है।

अपवाद के रूप में किसी प्रकार से बाधा होने से दूसरे से भी करवा सकते हैं।

इसी प्रकार 6 आवश्यक हैं- भगवान की वंदना, स्तवन, सामायिक, प्रत्याख्यान, प्रतिक्रमण और कायक्लेश हैं। परन्तु अपने अपने शरीर की स्थिति के अनुसार अथवा अवसर के अनुसार कर सकते हैं। स्नान व्रत है। अब आप लोग किसी प्रकार का स्नान नहीं करेंगे। आप लोगों के स्नान के लिए सूर्य देवता कृपा करेंगे। सनलाइट से आप अच्छे ढंग से कार्य कर सकते हैं और रात में मूनलाइट भी रहती है।

आप कहो नहीं, आपके लिए वह हमेशा- हमेशा जलता रहता है और आपके लिए वह अच्छे ढंग से स्नान करा देगा। इसी प्रकार मान लो जब कभी भी आप मार्ग में चल रहे हो, नग्न काय तो हैं ही इन्द्र को लगा कि स्नान करा दें तो इस स्नान के लिए भी हम आपको छूट देते हैं। लेकिन चौके के लिए छूट नहीं है। जब आहार के लिए जाएं, वहाँ पर पाद प्रक्षालन करते-करते वो लोग ऊपर करने लग जाए तो आप मना कर सकते हैं। वायु स्नान में कोई बाधा नहीं।

इसी प्रकार दांतो को अब हम किसी प्रकार के मंजन आदि से सुशोभित करें ऐसा संभव नहीं है। हां दांतों में भोजन के समय कुछ रह गया उसको आप निकाल सकते हैं। निर्वस्त्र तो आप हैं ही। अब भोजन

आप बैठ करके नहीं कर सकते हैं।

मान लो 10-20 किमी. चलकर आये हैं, थक गए अब आराम के साथ बैठकर खा लें - नहीं खा सकते। शुद्धि बोल दे तो भी बैठकर नहीं ले सकते। अब आपको खड़े-खड़े ही भोजन करना पड़ेगा। अब आपके जीवन में बैठकर के तो भोजन होगा ही नहीं। हां! आप जब भोजन करते हो तो इनको भी नहीं बैठने देना, जब तक हम भोजन करेंगे / खड़े रहेंगे इनको भी खड़ा होना पड़ेगा। कुर्सी लेकर बैठ जायें, नहीं ऐसा नहीं हो सकता।

मान लिजिए कोई मुनिराज को धीरे-धीरे भोजन करना पड़ता है - 2 घण्टे 45 मिनट तक ले सकते हैं तो आप लोगो को भी उत्कृष्ट सामायिक करने का अवसर प्राप्त हो सकता है। इससे आप लोगो की भी संख्यात नहीं असंख्यात गुणी निर्जरा होगी। आप लोग आगे यदि मुनि बनना चाहते हैं तो अभी से अभ्यास कर सकते हैं।

इस प्रकार से ये आप लोगों के लिए 28 मूलगुण हैं। इनमें से एक कम भी नहीं हो सकता और एक ज्यादा भी नहीं हो सकता है। ज्यादा बढ़ाना चाहते हो तो उत्तर गुणों की अपेक्षा से आप आगे बढ़ सकते हैं। इसी प्रकार जब आप प्रवृत्ति करते हैं तो दस धर्मों का भी पालन करना होगा।

5 समीतियों के साथ ही तीन गुप्तियों का भी पालन किया जाता है। समय पर आपको अवगत करा दिया जायेगा।

इस प्रकार आप लोगो के सामने इन 28 मूलगुणों को नाम के साथ रखा। यह सारा का सारा मुनिचर्या के अन्तर्गत आने वाली नियमावली के रूप में आप लोगो के लिए आवश्यक है। क्यों की ये 28 मूलगुण आते है तभी इसके अन्तर्गत जो पांच महाव्रत बताये उनकी रक्षा होती है। उन पांच महाव्रतों में भी अहिंसा महाव्रत मुख्य है।

जैसे खेती करता है किसान - खेत में बीज बोते हैं और उसकी रक्षा के लिए चारो तरफ बाड़ी खेंचते हैं। बाड़ी खेंचने से उस खेती की रक्षा होती है, ठिक इसी प्रकार अहिंसा महाव्रत की रक्षा के लिए शेष चार महाव्रत होते हैं। ऐसा आगम में उल्लेख मिलता है। इन सबको आप प्रमाद छोड़कर के पालन करें। यह सुअवसर आपको प्राप्त हुआ है। इसलिए इसमें प्रमाद न करें।

एकाध कायोत्सर्ग करके आप उसे संशोधन कर सकते हैं, आगे के लिए याद रहे इस अपेक्षा से कहा। आप लोग (श्रावक) मुनि चर्या में सहयोग देते रहेंगे। यह अनादि काल से चला आरहा

है। श्रावकगणों एवं श्रमणों के व्रतों का आपस में संगठन बना है। श्रावकहोंगे तो श्रमण सुरक्षित रह सकेंगे। श्रमण रहेंगे तो मोक्षमार्ग क्या है यह ज्ञात रहेगा।

श्रावक रहेंगे तो श्रमणों की चर्या का निर्दोष पालन करा सकते हैं। जब कभी भी आहर की अपेक्षा हो गई- न ही किसी से बोलेंगे तथा न ही किसी के निमन्त्रण पर जायेंगे किन्तु जो चर्या बतायी गयी है मूलाचार में उसके अनुसार ही उस चर्या को पालेंगे। आप लोगों के घर से तो बाहर निकले हैं किन्तु फिर भी आप लोगों के घर में जा सकते हैं। किस तरह से जा सकते हैं?

तो केवल आहार की अपेक्षा से जा सकते हैं। और वो अपने हिसाब से आयेंगे। इशारा आदि नहीं कर सकते। आप लोग सुधाने होकर भी अच्छी तरह से उनकी चर्या को आगे बढ़ायेंगे। जैसे छोटे बच्चों का आहार होता है, वैसे ही आपको मुनि महाराज का आहार कराना होता है। निर्भिकता के साथ बच्चों को भोजन कराते हैं उसी तरह मुनि-महाराज का भोजन होता है।

ध्यान की अपेक्षा, संयम की अपेक्षा, शरीर की स्थिति की अपेक्षा से, वैयावृत्ति की अपेक्षा आहार की जरूरत होती है। उस आहार के

लिए ये आप लोगों के यहाँ आयेंगे। ऐसा नहीं कि कभी-कभी महाराज हम विधी भूल जाते हैं, आप याद दिला दिया करो। आप यदि विधी भूल जायेंगे तो महाराज कैसे बतायेंगे?

आप यह विधी भूल गये तो महाराज संकेत भी नहीं कर पाऐंगे। समझे। हव। यहाँ पर तो हव कह देते हैं वहां पर भूल जाते हैं। इस समय (चौके में) महाराज बोल नहीं सकते और आप पुछ भी नहीं सकते। कैसे करें काम। बहुत कठिन है फिर भी आप विधी अनुसार देंगे और ये विधी अनुसार लेंगे तो काम हो जाता है।

अब आपको आलस छोड़ना है मोह को अपनी आंखो से देखना है। किसी व्यक्ति को थोड़ा डराना चाहते हैं तो आँख दिखाते हैं। नहीं समझे। सामने वाला डर जाता है। मोह को आंख दिखाओ, हम भी देखते हैं घबराता है कि नहीं आपसे। इसलिए नहीं डरता क्यों की वह भी (मोह) देखता है अपने आप ही घबरा जाएंगे। आज तक मोह ने आपके ऊपर अपना साम्राज्य बनाए रखा। आपका राज्य है, आपकी सत्ता है, आपकी मालकीयत है सब कुछ है, लेकिन प्रमत्त होने के कारण आप मोह के अधीन हो गए हैं, मन के अधीन हो गए हैं और मोह की परिक्रमा लगाते रहते हैं। अब मोह की परिक्रमा न लगाकर, केवल अपनी

आत्मा की परिक्रमा लगाएंगें। पंच परमेश्वर की परिक्रमा लगाएंगे। उनका ही दर्शन, पूजन, जाप, वंदन करते हुए अपने जीवन को सार्थक बनाएंगें।

गुरुदेव ने बहुत बड़ा काम किया हैं। गुरुओं ने जो काम किया है उस काम को हम बहुत जल्दी नहीं समझ पाएंगे। उनकी उदारता, उनकी करुणा से हम लोगो को जो रास्ता उपलब्ध हुआ है उसमें आगे बढ़ते जाएंगे। उन्होने जब तक घट में प्राण रहे तब तक अपनी आत्मा को संभाला। हम लोगों के लिए रास्ता प्रशस्त करते रहे।

इसी का यह परिणाम है। उनके गुणो को हम भी पा सकते हैं। जैसे वो कह के गए वैसा करना है, जिस रास्ते चलके गए उसी रास्ते चलना है तो अवश्य ही मोह छूट सकता है, हम छुटा सकते है। अन्यथा भारत या अन्य जो देश है ऋण ले लेकर निर्वाह कर रहे है। उसी प्रकार ऋण तो हमारे ऊपर बना ही रहेगा हम उऋण नही हो पाएंगे। उऋण होने के लिए उनके बताए संकेतो पर चलेंगे तो अवश्य ही हमारा पथ प्रारम्भ होकर मंजिल तक पहुंच सकते है।

इन्हीं भावनाओं के साथ संतो ने हम लोगो को उपदेश दिया है। संक्षेप में आप लोगो के सामने यह वक्तव्य देने का प्रयास किया गया है और आगे ज्यादा कुछ नहीं रहा। समय तो चलता ही

रहता है। अथवा यूं कह दो समयकाल के निमित्त से परिवर्तन होता ही रहा है, होता ही रहेगा, होता हुआ आया है। इस सिद्धान्त को समझकर के इस समय का उपयोग ही विद्वता है, सम्यक्ज्ञान है और सम्यक्चारित्र भी है। जब इसका फल मिलेगा तब ज्ञात होगा की कोई बुरा नहीं करता।

बहुत उत्तम होगा जल्दी-जल्दी हमें मंजिल मिल जाती। मिलेगी तो हमें ही क्यों की मार्ग हमने पकड़ रखा है। बस हमें मार्ग में चलते रहना है, मार्ग बदलना नहीं है बस चलते रहना है। यह बहुत बड़ा साहस और बहुत बड़ा धीरज का काम है। चलना प्रारम्भ करते हैं लेकिन प्रतिकूलता के कारण हम सोचने लग जाते हैं कि कुछ बैठ जाएं या विश्राम कर लें। रास्ते में बैठने की जगह है ही नहीं। गति आप भले ही धीरे कर सकते हैं, अनुकूलता मिलने पर फिर गति बढ़ा सकते हो। रुकने के लिए विश्राम के लिए पथ नहीं होता। सीढ़ीयों/नशैनी पर मान लो रात हो गई फिर भी कोई उस पर सोता नहीं है। ऐसा ही महाराज को करना है। आप लोग सीढ़ी चढ़ना प्रारम्भ कर चुके हो, अब आप लोगों को विश्राम करने के लिए कोई स्थान नहीं। कहां पर बैठेंगे? अब आप सामायिक में बैठो, वहीं पर बैठकर चलते रहो। इनके तो घर है आप लोगों को भी अपने घर में आना है। अब क्या दें? हां अब आप लोगों को आशीर्वाद दे सकते हैं इससे आगे और क्या? बहुत अच्छा। अहिंसा परमो धर्म की जय

जीवन में रिश्ते होना जैसे आवश्यक है वैसे ही रिश्तों में जीवन होना भी "अप्रसिद्धि में बड़ा ही आराम है - अपनी ही सुबह अपनी ही शाम है।"

अनुक्रमणिका

क्र.सं.	दिनांक	विषय	स्थान	पृष्ठ क्र.
1.	23/04/2017	सभी बन सकते हैं अणुव्रती	चन्द्रगिरी, डोंगरगढ़	1
2.	24/04/2017	गुणस्थान का थर्मामीटर है कर्त्तव्य		4
3.	25/04/2017	थारी-म्हारी से बचो (प्रातः 09.20)		8
4.	25/04/2017	ध्यान : गरमी में ठण्डा रखता-पदस्थ स्थान (प्रातः 11.40)		12
5.	26/04/2017	भयभीत नहीं - निर्भीक बनो		13
6.	27/04/2017	पुरुषार्थ से रहित मोक्षमार्ग नहीं		18
7.	28/04/2017	ज्ञानामृत रस में इक्षुरस का योगदान		25
8.	29/04/2017	संगत दिखाये रंगत		28
9.	30/04/2017	आओ खेंचें चालनी से पानी		32
10.	01/05/2017	निरिहता के बिना निर्भीकता नहीं		34
11.	02/05/2017	आँखो में हो हरियाली (प्रातः 09.20)		41
12.	02/05/2017	विवाह कब ? (मध्याह्न 11.40)		45
13.	04/05/2017	चिड़िया ने दी शिक्षा (प्रातः 09.20)		46
14.	04/05/2017	पद्मपुराण में गाय (अपराह्न 04.30)		51
15.	05/05/2017	आओं बढ़ायें पात्रता		53
16.	06/05/2017	खिचड़ी में छेद		58
17.	05/05/2017	बर्हिमुखी से अन्तर्मुखी बनाता = योग-प्राणायाम		63
18.	10/05/2017	अधूरे से पूर्णता का भ्रम		69
19.	11/05/2017	फटने से अच्छा फाड़ना		73
20.	12/05/2017	नियम से आती सुन्दरता		79
21.	13/05/2017	आओ फैलायें शाश्वत - प्रकाश		84
22.	15/05/2017	आओ बनें निरालम्बी		90
23.	16/05/2017	मत करो अहंकार ज्ञान का (प्रातः 09.20)		95
24.	16/05/2017	निर्जरा का साधन है प्रवचन (प्रातः 11.40)		100
25.	16/05/2017	मेहनत से ड़रना नहीं (मध्याह्न 03.30)		104
26.	17/05/2017	छोड़ो साथ मायावी का		105
27.	19/05/2017	कहानी रामफल-सीताफल की		108
28.	25/05/2017	गमछा ने दिया संदेश		114
29.	26/05/2017	दूध-पानी का अन्तर बताता प्रथमानुयोग		127
30.	27/05/2017	सार्थक हो शब्द-साधना		128
31.	28/05/2017	बोधात्मक नहीं - शोधात्मक है : स्नातकोत्तर		136
32.	29/05/2017	महत्त्वपूर्ण रस नहीं लालारस		145
33.	30/05/2017	शून्य को स्वीकारा जैन धर्म में		157
34.	31/05/2017	अन्तर राग एवं धर्मानुराग में (प्रातः 08.45)		159
35.	31/05/2017	बहुत नहीं, अच्छा बोलो (मध्याह्न 04.30)		164

क्र.सं.	दिनांक	विषय	स्थान	पृष्ठ क्र.
36.	07/06/2017	इन्द्रजाल से बचो	चंद्रगिरी,डोंगरगढ़	168
37.	12/06/2017	जमाने की नहीं, बात जमाने की करें		170
38.	15/06/2017	आवश्यक से अवश्य होती निर्जरा		173
39.	17/06/2017	गुरुजी का गुरुकुल		179
40.	18/06/2017	सबसे बड़ी औषधी है - विश्वास		184
41.	26/06/2017	वीणा का तार		186
42.	27/06/2017	रुक जाना नहीं		186
43.	28/06/2017	मूल पर ध्यान पहले हो (प्रातः 08.00)		188
44.	28/06/2017	समय को देखना ही है संयम (प्रातः 09.10)		189
45.	28/06/2017	उम्र कितनी? (मध्याह्न 03.30)		193
46.	29/06/2017	आओ जाने जी.एस.टी.		205
47.	30/06/2017	गुरु जहाँ, वहाँ कंडीशन कहाँ		210
48.	01/07/2017	बदलना जरूरी है		215
49.	03/07/2017	कल्याण की भावना	दरेकसा (महाराष्ट्र)	218
50.	06/07/2017	जड़ को मजबूत करें	सुकड़ी	219
51.	11/07/2017	मन्दिर नहीं ज्ञान मन्दिर	रामटेक क्षेत्र	224
52.	13/07/2017	आशीर्वाद		228
53.	14/07/2017	बच्चे सुनते नहीं		228
54.	16/07/2017	गुरुवर होले-होले आयेन्गे (प्रातः 09.20)		232
55.	16/07/2017	लक्ष्मी चली सरस्वती के पास (मध्याह्न 04.41)		235
56.	17/07/2017	आनन्द भीतर में है		244
57.	18/07/2017	विषयों की ईमली से बचें		245
58.	19/07/2017	प्रभु का राग - बुझायेगा आग		248
59.	20/07/2017	कैसे उतरे पपड़ी परिग्रह की		250
60.	21/07/2017	बचें कषाय की कणिका से		253
61.		आचार्य श्री के हाइकू		257
62.	31/07/2015	भव्य दीक्षा समारोह : दृढ़ता के साथ किया निवेदन	बीना बारहा	279